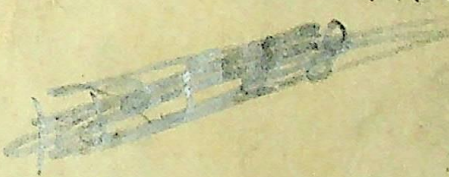


समर्पण

भाई सिद्धेश्वर को
जिनके
अस्त-व्यस्त जीवन ने
मुझे
'शिल्पी'
लिखने की प्रेरणा दी ।

—कमल शुक्ल

२५-४-१९५८ ई०



अभी
ना तव
गिनी
। स्त्रि
ना व्रत
स-पतो
नहा
सने शा
ने जाना
शार
जे थे;
जा था
सुभ
रकर श
हना आ
ावाराग
क अखित
चता नह
ड जाये
उसे अ
ायेगी
वर्चा उठ

: १ :

अभी सवेरे की सफेदी फूटी ही थी कि सुभद्रा अपनी बहू शारदा के साथ
ना तट पर जा पहुँची। आज बरसैता था। बरगदाही अमावस का व्रत
अग्निनों का पति के कल्याण के लिए एक महान त्यौहार। घाट पर भीड़
। स्त्रियों पर स्त्रियाँ जुटी चली आ रही थीं। यमुना स्नान कर देह शुद्ध
रना व्रत के लिए एक बहुत आवश्यक अंग था। उसी की पूर्ति के लिए ये
स-पतोह भी आयी थीं।

नहा-धो पूजा-पाठ से निवृत्त हो सुभद्रा वापस चल पड़ी और चलते-चलते
सने शारदा से पूछ दिया—“क्यों बहू ! रात अखिल किस समय आया था ?
ने जाना ही नहीं।”

शारदा के होंठ धीरे से हिले और दबा हुआ स्वर निकला—“शायद ग्यारह
जे थे; क्योंकि जब वे (अखिल) खान्नीकर सो गये तब बारह का घण्टा
जा था।”

सुभद्रा के लिये यह संकुचित उत्तर भी पर्याप्त था। वह वाणी में अकड़
रकर शारदा को नीति का उपदेश देने लगी। अपने फूहड़ हाथ नचाकर उसने
हना आरम्भ किया—“भला यह भी कोई तरीका है कि पूरे दिन भर की
आवारागर्दी और रात-रात भर सनकी की तरह घूमना-फिरना। मैं कहती हूँ
कि अखिल का भविष्य क्या होगा ? दो बच्चों का बप है, कमाने की कोई
धृति नहीं। अगर हाथ में सौ रुपये हैं तो वे एक दिन में ही दोस्तों के साथ
खुद जायेंगे। इतनी बड़ी जिन्दगी है उसकी किस तरह कटेगी। तभी तो निखिल
उसे अपनी दूकान से अलग ही अलग रक्खा है। पता नहीं किस दिन समझ
पायेगी इस मूढ़ को। मैं तो हैरान हूँ ! आखिर कब तक उसकी गृहस्थी का
वर्चा उठाती रहूँगी ! मेरे भी जवान लड़की है, उसकी पढ़ाई का खर्चा, निखिल का

व्याह करना है और उस पर सबसे बड़ी चिन्ता बना हुआ है यह अखिल ।
सबको प्यारा होता है वह, चाम नहीं । तुमने पूछा नहीं कि वह आधी-अ
रात को घर क्यों आता है ?”

शारदा सुभद्रा की वक्तृता के सम्मुख एक भी शब्द नहीं बोलना चा
थी । वह जानती थी कि उसकी शिष्ट शब्दावली भी सुभद्रा को असंतुष्ट
देगी । वह स्वयं अपने को उसकी बहू नहीं भार समझती थी, किन्तु इस अव
पर जवाब दिये बिना उसकी गति नहीं थी । वह डरते-डरते धीरे
बोली—“रात एक गोष्ठी में गये थे वे । तभी...”

सुभद्रा इतना सुनते ही उखड़ पड़ी । वह शारदा को धिक्कारती हुई क
ली—“तुम्हारे ही कारण विगड़ा है अखिल । हमेशा उसकी करतूतों पर प
डालती रहती हो, यह अच्छा नहीं है । कल गोष्ठी में गया था, रोज कहाँ जा
है ! दूकान में बैठे-बैठे व्यर्थ के लिए कागज रँगा करता है । तमाम पैसे बर्ख
कर दिये, रँग के डिब्बे और कागज खरीदने में ! शिली बनता है, कहता
में कवि हूँ; भला कभी कुछ कमा कर लाया है । हमेशा घर का गँवाया है
लेकिन अब मैं तनिक भी रियायत नहीं करूँगी । उसको समझा देना कि अ
इस महीने कुछ कमा कर मुझको नहीं देगा तो अगले महीने से उसकी गृहस्
की जिम्मेदार मैं नहीं हूँ; अपने घर की गाड़ी वह खुद चलाये, मैंने जिन्दगी म
का ठेका नहीं लिया है ।”

सुभद्रा के मन में जो कुछ आता-जाता था वह बक रही थी और शार
मौन साधे, सब-कुछ सुनती हुई उसके पीछे-पीछे चली जा रही थी । वह सो
रही थी कि किसी प्रकार जल्दी से घर आ जय तो सास का बड़बड़ाना ब
हो ।

यमुना बाजार में सुभद्रा ने कच्चे सूत की दो पिड्डियाँ और कुछ बरगद के
पूजन की सामग्री खरीदी । सब ले-देकर वह लाल किले के सम्मुख बड़े चौरा
पर पहुँची । वहाँ से रिक्शे में बैठ बाजार सीताराम के लिए चल पड़ी । मा
में भी उसका मुँह बन्द नहीं हुआ । अखिल के प्रति वह निरन्तर विष उगलत
रही, जो शारदा को बहुत अप्रिय लग रहा था; किन्तु वह विवश थी । उस
जिह्वा में सास को जवाब देने की शक्ति नहीं थी ।

घर आ गया। दोनों सास-बहू आँगन में पहुँचीं। वहाँ रानी अब सोकर उठी थी और पूरी रपतार में चल रहे पंखे के नीचे बैठी, अँगरेजी का एक दैनिक पत्र पढ़ रही थी। अघेड़ चन्द्रभान, अपने कमरे में कुशासन पर बैठे, गीता का पाठ कर रहे थे और निखिल कपड़े बदलकर तैयार हो दूकान जा रहा था।

किन्तु अखिल अभी सो रहा था। उसको देखते ही सुभद्रा की भीड़ों में तनाव आ गया। वह उसके पास तीर की भाँति पहुँची और चादर झिटक कर बोली—“कलाकार के बच्चे! क्या दोपहर तक सोते ही रहोगे? रात भर जागरण और दिन में सोना, यह साक्षात् दरिद्र की निशानी है।”

अखिल आँखें मलता हुआ उठकर बैठ गया। उसने सुभद्रा की बातें जैसे सुनी ही नहीं। उसने सामने टँगे शंकर जी के तैल-चित्र को दोनों हाथ बाँधकर नतमस्तक हो प्रणाम किया। फिर चारपाई के नीचे रखा लोटा उठाकर शौचादि से निवृत्त होने चला गया।

सुभद्रा बड़बड़ाती रही और अखिल के मन को अशिष्टता समझ मन ही मन क्रोध से उबलती रही। तभी धानी सलवार धारण किये सुरमई चुन्नी कंधों पर डाले गौर वर्णा चंचल रानी उसके सामने आकर खड़ी हो गयी और हँसोड़ मुद्रा में बोली—“आज त्यौहार का दिन है, सबेरे ही सबेरे मन न खराब करो माँ! बात उससे करनी चाहिये जो बात का जवाब दे और जिसने अपने मन की करने की सोच रखी हो उससे कुछ भी कहने से कोई लाभ नहीं।”

पुत्री की इस बात पर सुभद्रा चुप हो रही और अपने दैनिक कार्यों में व्यस्त हो गयी।

अखिल जब नहा-धोकर अपनी दूकान जाने के लिये तैयार हुआ तो नाश्ते और चाय के स्थान पर सुभद्रा ने उसको यह जवाब दिया—“अभी चूल्हे में आग भी नहीं पहुँची है। सबेरे जब निखिल के लिए नाश्ता तैयार होता है तब तुम सोते रहते हो, जाओ दोपहर को बरगद की पूजा के बाद खाना खाने आकर।”

अखिल मन ही मन कुछ गुनगुनाता हुआ बाहर निकल गया। सुभद्रा ने क्या कह, उसने इसकी ओर बिल्कुल ध्यान ही नहीं दिया। किन्तु कवि-पत्नी शारदा का अन्तर रो उठा। वह स्वयं दुःख सहने के लिए पत्थर थी; लेकिन

पति शिल्पी के लिये एकदम मोम । वह रसोई में व्यस्त थी; मगर उसके विचार बांधे नहीं बंध रहे थे । वह मोच रही थी कि यदि आज को मेरी सगी सास होती तो मेरा पति खाली पेट घर से बाहर कभी नहीं जाता । क्या सगे-सौतेले में इतना अन्तर होता है कि आदमी अपने ही अंश को अपने से पृथक् समझने लगता है ? एक तिखिल है जिस पर माँ (सुभद्रा) जान देती हैं और एक है मेरा देवता, जिसको देखते ही उनकी आँखों में बल पड़ जाते हैं । मैं परिस्थिति को जितना ही नियन्त्रण में लाने का प्रयत्न करती हूँ उतनी ही मुत्थी उलझती जाती है । लगता है कि पति की भावुकता, सरलता, उदारता, त्याग और आत्म-संतोष मुझे एक भिक्षुणी बना देगा । लेकिन पति परमेश्वर है । उसकी अवज्ञा कैसे करूँ ? यह नहीं हो सकता मुझसे । वे जो कहेंगे उसको सिर-आँखों पर लूँगी जैसे कि अब तक निभती आ रही है । उनको दुःख हुआ तो यह मेरी सबसे बड़ी दुर्बलता होगी । उनकी खुशी में ही मेरा सुख निहित है । मेरा मुँह बन्द रहेगा और गतिविधि जैसी चलती आई है चलती रहेगी । अन्याय के प्रति विद्रोह करना हिंसक व्यक्तियों का काम है । मैं हिंसा नहीं चाहती । अहिंसा में शान्ति है और मैं उसकी पुजारि हूँ । मौन रहकर प्रतारणा पाकर और दुःख झेलकर जीना उस पर भी मुस्कराते रहना इस घर में मेरा यह प्रधान कर्त्तव्य है । पति का आदेश ऐसा ही है । उसे पालन करना ही मेरे सतीत्व का गौरव है । एक दिन वह अवश्य आयेगा जब अत्याचार के सिर में न तो बाल रहेंगे और न अँगुलियों में नाखून । वह गंजा हो जायेगा और गंजे को भगवान् नाखून कभी नहीं देता है । लेकिन छिः, मैं दूसरे का घुरा क्यों सोचूँ ? मानव नीति तो यह कहती है कि घुराई करने वाले के साथ भलाई करो, जो दूसरे के लिए कुआँ खुदाता है उसके पूर्व ही वह खाई में गिर जाता है । राम राम ! मैं कितने नीचे पहुँच गई । एक कवि-पत्नी के ऐसे विचार ! यह शोभा नहीं देता ।

सुभद्रा पूड़ियाँ बेल रही थी । रानी पूजा की व्यवस्था में लगी थी और शारदा मूक-बधिर सी पूड़ियाँ तल रही थी । सहसा सुभद्रा ने टोक दिया—
 “पता नहीं तुम्हें क्या हो गया है बहू, अखिल को तनिक भी कुछ कह दो तुम्हारा मुँह लटक जाता है । पर्व का दिन है, कढ़ाई पर बैठने वाली स्त्री को मंगल गीत गाना चाहिए और तुम.....”

“हाँ, माँ ! मुझे ध्यान ही नहीं रहा ।” शारदा ने धीरे से भय-त्रस्त स्वर में जवाब दिया और फिर धीरे-धीरे गुनगुनाने लगी—“बोले आनन्द बन मोर हो जगतारनि माता ।”

सुभद्रा ने अपना तेज स्वर उसमें मिश्रित कर दिया और दोनों सास-बहू अलापने लगीं—“मैया के दुआरे एक कोढ़ी पुकारे दैव काया घर जाऊँ जगतारनि माता । बोले आनन्द बन मोर.....।”

जब तक पूड़ियाँ बनती रहीं गीत पर गीत चलते रहे । रानी को अवकाश मिला और वह माँ के पास बैठ कर आटे की लोइयां बनाने लगी । वह गीत सुन रही थी; किंतु उसमें उसकी रुचि तनिक भी नहीं थी । षोडश वर्षीया नई सभ्यता की पुजारिन शहर की हिरणी रानी, सिनेमा के गीत अधिक पसन्द करती थी । एक बार सुभद्रा ने उसे कौंचा भी कि वह चुप क्यों बैठी है, गाती क्यों नहीं है, तो वह चिहूँक कर बोल उठी—“न, माँ, यह रोग मेरे वश का नहीं है । पुराना रिवाज मुझे बिल्कुल नहीं पसन्द है ।”

इस पर सुभद्रा क्रोधित होने की अपेक्षा मुस्करा उठी ।

दोपहर हो आई थी । जेठ का सूरज पूर्णशी में धरती को अपना ताप दे आग सा गरम कर रहा था । आँगन की फर्श तवा सी जल रही थी । बरगद की एक छोटी सी डाली उसके बीचोबीच में गीली मिट्टी के सहारे रानी ने खड़ी कर दी थी और सुभद्रा रसोई से उठ उसके निकट आकर चौक पूरने लगी । वहीं से बैठे-बैठे वह शारदा को पुकार कर बोली—“अरे बहू ! जल्दी करो, कितनी पूड़ियाँ रह गई हैं ? गहना-कपड़ा पहन लो । पूजा की बेला निकली जा रही है ।”

“अभी आई माँ !” कहकर शारदा ने जल्दी से बची हुई पूड़ियाँ कड़ाही में डाल दीं और दो ही मिनट बाद, अपने कमरे में जा ट्रंक खोल, गहने तथा कपड़े निकालने लगी । गोटे का लहंगा, चुनरी और जरी के काम की चादर निकाल उसने नाक में नथ डाल ली फिर नेकलेस पहन बाजूबन्द बाँध करणफूल लटका लिये । लेकिन यह क्या ? डिब्बे में कंगन एक ही था । शारदा चौंक उठी और ट्रंक का एक-एक कपड़ा निकाल उसकी तहें खोल-खोल कर देखने लगी । मगर कंगन नहीं मिला । उसकी घबराहट बढ़ गई और निराश हो मत्थे पर

दोनों हाथ टेक वह सुबक-सुबक कर रोने लगी ।

आँगन से सुभद्रा की आवाज आई—“अरे बहू ! कितनी देर लगा दी तुमने, जल्दी आओ ।”

और शारदा मौन रही ।

तब सुभद्रा ने पुनः पुकारा और वहू को निरुत्तर पा, क्रोध से पैर पीटती हुई, वह उसके कमरे में जा धमकी ।

शारदा रो रही थी सिर पर हाथ दिये । सुभद्रा ने आगे बढ़कर उसके दोनों हाथ झिटक कर अलग हटा दिये और तयौरियाँ चढ़ाकर बोली—“कौन मर गया है, जिसका मातम मना रही हो ? कुल-कलंकिनी, आज त्यौहार के दिन रोती है ! बहुत बुरा लगता है, जब उस निगोड़े अखिल को कुछ कहती हूँ ! सामने कुछ नहीं बोली तो पीठ पीछे आकर रोने लगी । अच्छा, अब अगर पूजा करनी है तो कपड़े पहन लो । मैं तुम्हारी राह नहीं देखूँगी, मेरा गला सूख रहा है, पूजा करके पानी पिऊँगी ।”

सुभद्रा तमकती हुई वहाँ से चली गई और शारदा जल्दी से लहंगा-चुनरी पहन, आँगन में चौक के पास आकर बैठ गई । उसके हाथ सूने थे । गोरी कला-इयों में पतली काली नागिन सी दो-दो चूड़ियाँ भूल रही थीं । रानी ने उसकी ओर देखा और फिर निकट आकर पूछने लगी—“कंगन क्यों नहीं पहने भाभी ?”

रानी के मुँह से इतना सुनते ही शारदा की जान सूख गई । उसके गात में कँपकँपी होने लगी और सुभद्रा का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हुआ । वह चौकती हुई बोली—“आँय ! पूरा सिंगार नहीं किया, मैं बूढ़ी होने को आई सगुन-साइत पर जान देती हूँ और यह कल की छोकड़ी तिथि-त्यौहार को कुछ मानती ही नहीं ! जाओ, जल्दी से कंगन पहन लो ।”

किन्तु शारदा मौन थी । वह अपने स्थान से तनिक भी नहीं हिली-डुली । तब सुभद्रा को रोष चढ़ आया । वह गरम होकर बोली—“जाती क्यों नहीं ?”

शारदा एकदम फफक पड़ी और रोते-रोते अवरुद्ध कण्ठ से बोली—“एक कंगन नहीं मिल रहा है माँ ! पता नहीं कहाँ रख दिया है । मैंने……।”

अभी शारदा इतना ही कह पाई थी कि सुभद्रा उठकर खड़ी हो गई और कानों पर दोनों हाथ रखकर चौकती हुई बोली—“तो कंगन खो दिया । शायद

कमरा खा गया होगा ! चलो हूँदो । कमरे से बाहर कहाँ गया होगा ? पूजा वाद में होगी ।" यह कहने के साथ सुभद्रा ने शारदा के कमरे में जाकर साँस ली । उसके साथ रानी थी और उसके पीछे शारदा ।

कमरे की एक-एक वस्तु को सबने खूब ध्यान से देख लिया । उसका कोना-कोना छन डाला गया । लेकिन कंगन नहीं मिला । अब सुभद्रा दूसरी बात कहने लगी, वह बोली—“या तो तुमने अखिल के साथ हमदर्दी की है और उसके तकाजे वालों का भुगतान करने के लिए कंगन दे दिया है और जान-बूझकर मेरे सामने अनजान बन रही हो और अगर यह नाटक नहीं खेला गया है तो कंगन अखिल चुरा ले गया है । दोस्तों को दावत देनी होगी उसको और चाय का बिल चुकाना होगा । अभ्यास करने के लिए दूटे हुए तानपूरे को भी ठीक कराना होगा ! कान खोलकर सुन लो, अगर कंगन न मिला तो मैं, तुम दोनों को घर से निकाल बाहर करूँगी ! कारूँ का खजाना नहीं भरा है घर में, जो दोनों मियाँ-बीवी दीलत लुटाते रहोगे ।”

शारदा कुछ नहीं बोली । उसने अपने आँसुओं को पी लिया था कि कहीं सुभद्रा उस पर हाथ न छोड़ दे ।

सुभद्रा की जवान बतरनी सी चलती रही और जैरे-तैसे पूजन कार्य समाप्त हुआ ।

चन्द्रभान बाबू सेक्रेटेरियट में एक ऊँचे पद पर नियुक्त थे । वे दस बजे दफ्तर गये थे और अब चार बजे के पहले उनका आना सम्भव नहीं था । नित्य वे भोजन करके काम पर चले जाते थे । लेकिन आज त्यौहार की योजना तनिक लम्बी थी, इसलिए निखिल की दूकान का नौकर माधौ उनका खाना दफ्तर में दे आया था ।

निखिल मध्याह्न काल जब घर आया तो सुभद्रा ने उससे कंगन खो जाने वाली बात बताई और अखिल के लिए पूछा कि वह घर क्यों नहीं आया ?

उत्तर में निखिल ने उपेक्षा पूर्वक जवाब दिया—“मैं नहीं जानता । सबेरे कान गये थे, उसके बाद पता नहीं, किस कोने में चले गये ? दूकान खुली डी है । मैं कहाँ तक चौकीदारी करूँ ? उन्हें तो घूमने से ही फुर्सत नहीं मिलती ।”

सुभद्रा निखिल की बात सुनकर चिढ़ उठी और क्रोध से नथुने फुलाकर कहने लगी "वह जब आये तो घर भेजना और देखो कंगन के खो जाने की चर्चा मत करना उससे ! मैं कहती हूँ कि कंगन वहीं ले गया है ।"

निखिल चला गया । वह दूकान पर पहुँचा, किन्तु अखिल की दूकान अब भी खुली पड़ी थी और दो-तीन अधकचरे साहित्यिक युवक भेड़-बकरियों की तरह उस जाले और गर्द-गुब्बार से भरी दूकान में गप्पेहाँक रहे थे । यह था शिल्पी का 'बन्धु वर्ग', जो एक प्रकार से उसके किसी भी कार्य करने की लगन में सर्वथा व्याघात बना रहता था । निखिल ने घृणा पूर्वक उन युवकों की ओर देखा और फिर अपनी दूकान में जा बैठा ।

दिन ढला । साँझ आई और अमावस की रात ने काली चादर ओढ़ ली । निखिल आठ बजे दूकान बन्द कर घर आ गया था । सुभद्रा पति और पुत्र के बीच बैठी अखिल की कटु आलोचना कर रही थी । उसका आशय यही था कि कंगन अखिल ने चुराया है, इसीलिए वह अब तक घर नहीं आया है । सब में देर तक मंत्रणा चलती रही कि क्या किया जाय ? अखिल को आदमी किस तरह बनाया जाय, कलाकार बनने की सनक, उसका जीवन बरबाद किये दे रही है । उसके सिर पर से इस कला के भूत को कैसे उतारा जाय ? दूकान खुली पड़ी होगी । जब रात को दस बज जायेंगे और वह नहीं आयेगा तो बेचारा माधो दूकान बन्द करके घर आयेगा । अच्छी दलेल हो जाती है उसकी, जिस दिन अखिल को सनक सवार होती है । आधी रात को उसको खाना मिलता है ।

इस प्रकार सबकी वार्ता चल रही थी कि माधो आ गया । अखिल की दूकान की चाबी उसने शारदा को सौंप दी और फिर सुभद्रा के प्रश्नों का उत्तर देने लगा ।

क्रोध में भरी सुभद्रा बड़बड़ाती हुई सो गई । घर के सब लोग सो गये, किन्तु शारदा जागती रही । उसका पति अभी घर नहीं आया था । तीन वर्षीय पुत्र विनोद को वह थपकियाँ दे-देकर बड़ी मुश्किल से सुला पाई । आज अखिल प्रातः का गया हुआ घर नहीं लौटा था । बच्चे ने बाप को नहीं देखा था, इसलिए जितना करता रहा "दब बाबूदी आयेंदे अम तबी छौयेदे ।" शारदा ने उसको सुना दिया और एक-वर्षीया माधुरी को गोद में ले, दरवाजे के पास आ बैठ गई ।

कमरे के दरवाजे पर चिक पड़ी थी। गरमी अधिक होने के कारण आँगन की बिजली बन्द कर दी गई थी। यद्यपि शारदा अपने कमरे में अँधेरा नहीं देखना चाहती थी; लेकिन सास का भय, घर की रीति और अपनी दयनीय स्थिति पर विचार कर, उसने भी ग्यारह बजे के लगभग बत्ती बन्द कर दी।

रात चलती रही और शारदा सोचती रही। उसके सम्मुख अतीत के चित्र आते, वर्तमान की वीभत्स स्थिति उसकी दृष्टि के सामने स्पष्ट होकर नाचने लगती और भविष्य का भय उसके रोम-रोम में समा गया था।

उसके विचार चल रहे थे, विद्युत के तारों की भाँति। उसके अन्तर्द्व में एक घुटन थी। वह अपने दौर्बल्य पर रो रही थी। वह सौभाग्यवती थी। इस लिए अपने पतले समय को दुर्भाग्य का अभिधान कभी नहीं देना चाहती थी।

दोपहर से लेकर शाम तक वह इस उलझन में रही कि कंगन क्या वास्तव में खो गया है। घर में सब अपने ही लोग हैं। माधो विश्वास-पात्र नौकर है। वह सन्देह का पात्र कभी नहीं हो सकता। फिर देखूँ शायद कहीं सामान में मिल जाय और मन में यह धारणा आने पर उसने दो तीन बार कमरे का चप्पा-चप्पा खोज डाला। लेकिन कंगन नहीं मिला।

अब शारदा कंगन वाली बात भूल गई थी। ग्यारह बज गये और स्वामी अब तक नहीं आये, कहीं उनको आज के नाटक का पता तो नहीं चल गया है? हो सकता है किसी मित्र के यहाँ चले गये हों, कल भी तो देर से आये थे। कहीं कोई साहित्यिक कार्य-क्रम होगा।

कवि-पत्नी का चिंतन उसके अशान्त-मानस में ज्वार-भाटा बनकर उबल रहा था। कमरे की उमस को पंखे की हवा निगल रही थी। शारदा वेदना को पी जाना चाहती थी; लेकिन वेदना स्वयं उसे पी रही थी। अम्बर में तारे झिलमिला रहे थे और दूर कहीं रात की नीरवता के स्वर मुखरित हो रहे थे। सहसा घड़ी में बारह बजे, शारदा अकुलाई। उसके पाँव आँगन में बढ़ आये। साहस कर वह प्रवेश द्वार तक गई और मन किया कि कुण्डी खोलकर पति का पथ निहारे। मगर सास का भय और मर्यादा का डर उसे पीछे लौटा लाया। वह कमरे में आई। एक बार बत्ती जलाई और तत्क्षण ही बुझा दी।

अब शारदा ने चिक बाँध दी थी और धुत बनकर चौखट पर खड़ी हो

गई। उसके विचारों में उथल-पुथल मच रही थी कि कहीं घरेलू कलह और अशान्ति से ऊबकर वे कहीं अन्यत्र तो नहीं चले गये। कोई कुछ सोचता है और कोई कुछ करता है, किंतु मेरी न तो कोई कल्पना है और न कोई योजना। मैं संज्ञा हूँ, इसलिए सार्थक होने में ही अपना सौभाग्य समझती हूँ। दुनिया के लिए वे सनकी हैं, सम्य समाज में आधे पागल और घर वालों के लिए आवारा। लेकिन मेरे वे आराध्य देव हैं और मैं उनकी चरणदासी। वे लौट आयें। मैं जानती हूँ कि कैसी भी संकुचित आवश्यकताओं के साथ जीवन यापन करना पड़े; परन्तु उनके साथ वह सुख का ही प्रतीक होगा। उनसे पूछूँगी कि वे क्या चाहते हैं, जो उन्हें मिल नहीं रहा है। मैं उसका साधन बनूँगी। मुझे किसी की चिंता नहीं है। मैं.....।”

सहसा बाहर की कुन्डी खटकी और शारदा पल-मात्र में वहाँ पहुँच गई। उसका जीवन-पुष्प शिल्पी अखिल बाहर खड़ा था। वह पत्नी को देखकर मुस्करा उठा और शारदा अपनी खोई निधि पाकर आह्लाद से भर उठी। उसका उदास मुख कमलवत् खिल गया।

: २ :

अखिल ग्रेजुएट था। बचपन से ही उसके स्वभाव में विचित्रता रही। कविता से उसे बेहद प्रेम था और चित्रकला में वह अपने को खो देना चाहता था। ऐसे ही संगीत से भी उसकी रुचि विशेष थी। वह एक कुशल गायक भी था। उसकी आयु पच्चीस वर्ष की थी और इस पर भी उत्तरदायित्व को कभी वह अनुभव नहीं करता था। पीछे को लौटे हुए काले घुँघराले बाल, उसके गोरे मध्यम कद पर अत्यन्त आकर्षक लगते थे। वह मूर्तिकार भी था। उसकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी और पूरा मेधावी था वह ! किंतु इस अर्थ-प्रधान गृह

में व्यक्तिगत समस्याओं का इतना बाहुल्य हो गया है कि कला निर्जीव सी हो गई है। उसके सच्चे ग्राहक चिराग लेकर ढूँढ़ने से भी नहीं मिलते।

अखिल शिल्पी था। वह नारियल के जटे काट-काटकर, उसमें शंकर भगवान, गाँधी जी और भारत माता के चित्र बनाया करता। इस तरह सभी ओर उसकी दृष्टि जाती थी। दुनिया हँसती थी, किन्तु वह जैसे उस उपहास को सुनता ही नहीं था। श्वेत कुरता और धोती वह नित्य पहनता था। कपड़े फटे हों, साधारण हों और उसके वदन के लिये उपयुक्त न हों इसकी उसे चिंता नहीं रहती। उसका सिद्धांत था कि कपड़े स्वच्छ और उजले होने चाहिए। प्रायः वह एक साधारण सी चप्पल पहन कर पूरा वर्ष व्यतीत कर देता। घर में उसकी सुनने वाला कोई नहीं था। पत्नी शारदा को छोड़कर अन्य सभी को एक नहीं बहुतेरी शिकायतें थीं उससे। मगर साहसी शिल्पी जीवट का पुतला था। वह मन में कभी मलाल नहीं लाता। सदैव हँसमुख बना रहता था।

शारदा के साथ अखिल ने पाँच वर्ष वैवाहिक जीवन के व्यतीत किये थे। उसको उससे ऐसी अनुभूति मिली कि वह कवि है और शारदा उसकी कविता। दम्पति एक दूसरे को चिंता में डालने वाला प्रसंग कभी नहीं छेड़ते। दोनों एक दूसरे को प्रसन्न रखने का ही प्रयत्न करते। घर में शारदा अपनी सौतेली सास सुभद्रा के सम्मुख बिल्ली बनकर रहती थी और बाहर शिल्पी निखिल के समुदाय के लिए एक उपेक्षा का पात्र था।

दरियागंज में फैंज बाजार के निकट स्टेशनरी की निखिल की दुकान थी। उसी में बाहर की तरफ थोड़ी सी जगह उसने बहुत बड़े एहसान के साथ बीस रुपये मासिक पर अखिल को दे दी थी। लकड़ी के तख्ते लगाकर निखिल उस स्थान को अपनी दुकान से बिल्कुल अलग कर दिया था। अखिल दुकान बैठकर पुस्तकों के आवरण पृष्ठों के लिये चित्र बनाता। कविताएँ रचता। जो अपने मौखिक सहानुभूति प्रकट करने वाले मित्रों को सुनाता। फिर य, मैनपुरी तम्बाकू, पान-सिगरेट इत्यादि से उनका सत्कार करता। निखिल को यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। वह उसका विरोध करता। शिल्पी हँस देता। दोनों में अन्तर केवल इतना था कि निखिल अपने बड़े

भाई अखिल को सौतेला समझता था; किंतु अखिल ने उसको कभी सहोदर से कम नहीं समझा। उसके पास स्नेह था और निखिल के पास घृणा! दोनों में मेल नहीं बैठता मगर झगड़ा कभी नहीं होता।

निखिल बीस वर्ष का युवक था। इसी साल बी० ए० किया और दूकान खोले हुए उसको तीन वर्ष हो चुके थे। वह नौकरी को अच्छा नहीं समझता था। और न किसी कला पर निर्भर रहकर जिंदगी व्यतीत करना उसे अच्छा लगता था। वह व्यापार को बहुत महत्व देता। उसका कथन था कि रोजगार दाता है, नौकरी पराई गुलामी है और कलाकार आज के युग में भूखों मरता है। वह बहुत ही अभिमानी था। वह सदैव ग्रहम् में डूबे रहने का अभ्यस्त हो गया था। क्यों न होता! घर में उसे सभी कुछ प्राप्त था जबकि अखिल की ओर कोई आँख उठाकर भी नहीं देखता था। घर में उसकी विमता का राज्य था और सुभद्रा अपने तथा पराये में बहुत बड़ा अन्तर समझती थी।

प्रातः जब अखिल दूकान पहुँचा तो वहाँ पहले से ही चार-पाँच युवक खड़े थे। उनमें से सबने कवि को नमस्कार किया और एक सज्जन आगे बढ़कर पहर ह बोले—“आज लाल किले के मैदान में एक वृहत् कवि-सम्मेलन होने जा रहा पूछा। है। सूचना तो आपको पहले ही मिल चुकी होगी। निमन्त्रण देना मैं भूलभोजनो गया था, क्षमा करना। आज शाम को छः बजे अवश्य पधारिये।” ने उचि

कवि ने अपने मान-अपमान की ओर तनिक भी ध्यान न देकर सरल प्रा मुस्कराहट में कह दिया—“अवश्य बन्धु अवश्य!” मेड़िया

फिर अखिल उस साहित्यिक मंडली को एक सिंधी रेस्त्राँ में ले गया। वह व्यक्त चाय चली, नमकीन की प्लेटें खाली हुईं और फिर चले सिगरेट के कशे अध्यक्ष विल शिल्पी को चुकाना पड़ा और उसकी जेब खाली थी। रेस्त्राँ का अक्वल नि पिछले महीने का ही बिल वह नहीं चुका पाया था। मित्रों का सम्मान करोटर मि आवश्यक था। वह बूढ़े सिंधी के सामने जाकर साहसपूर्वक हँसता हुआ कहने लमय पर “साँई जी, हिसाब में लिख लो। बस। आज ही कल में आपका हिसाब चुका सी कर दूँगा।” पड़बा अशिष्ट था यह नहीं कहा जा सकता; लेकिन इतना अब नौ था कि वह अखिल को अधिक उधार देकर घबड़ा रहा था। वह दूकानदार वज के स्तर पर उतर आया और अकड़ के साथ बोला—“अखिल बाबू, मैं र में इ वियों को

से कम
में मेल

र दूकान

समझता

ने अच्छा

रोजगार

मरता

व्यस्त हो

खिल की

का राज्य

युवक खड़े

बढ़कर

जा रहा

में भूत

न सत

मेड़िया

या । वह

के कष्ट

का अकेल

मान कसोट

कहने समय

भाव बुझ

नना अब

दूकान

बू, मैं

वियों

आपका ख्याल हमेशा रखता हूँ; मगर आप टोकने का मौका दे ही देते हैं । जाइये, इस समय चार आदमी आपके साथ हैं; फिर बात करूँगा ।”

अखिल अपनी मित्र-मण्डली के साथ दूकान पर आया । उनको कण्ठस्थ स्वयं रचित कई लघु कथाएँ सुनाई । जिससे सब लोग वाह-वाह कर उठे । फिर कविताओं का दौर चला । उसके बाद अपने नये चल रहे उपन्यास का एक परिच्छेद सबको सुनाया । परिणाम में उसे कोरी प्रतिष्ठा मिल गई । तत्पश्चात् प्लास्टर आफ पेरिस की बनी हुई एक सरस्वती देवी की प्रतिमा को तरासने में व्यस्त हो गया । तब मित्र-मण्डली ऊब गई और उठकर चलने का आयोजन कर दूकान से नीचे उतर आई । शिल्पी मित्रों के साथ हो लिया । वह दोपहर होते-होते पाण्डाल में आ गया । वहाँ अभी सारी व्यवस्था अपूर्ण थी । लोग प्रबंध करने में जुटे थे । यहाँ आते ही उसको कई नौ-सिखिये नवयुवकों ने घेर लिया और अपनी-अपनी रचनाएँ उससे शुद्ध करवाने लगे । इस संशोधन कार्य में तीसरा दोपहर हो गया । लेकिन किसी भी मित्र ने उसे एक घूँट पानी के लिए भी नहीं जा रहा पूछा । वह घर जाना चाहता था; पर समय थोड़ा रह गया था । घर जाकर भोजनोपरांत लौटने में समय बहुत लग जाता अतः इस प्रत्यावर्तन को शिल्पी ने उचित नहीं समझा । वह निश्चित समय की प्रतीक्षा करने लगा ।

प्रायः हम सभी भारतीयों के मुख से ऐसा निकल जाता है कि हिन्दुस्तान में ड़िया घसान ! जहाँ समय पर कोई काम नहीं होता । यह प्रसिद्धि आज का अकेल निमन्त्रण-पत्र ही उनके लिए पर्याप्त नहीं होता । समय से पहले उनको मान कसोट मिलनी चाहिए । तब कहीं वे तैयार होते हैं और उस पर भी निश्चित कहने समय पर न पहुँचकर घण्टा दो घण्टा विलम्ब कर देना उनके लिए एक साधारण बुझ सी बात है ।

नौ बजते-बजते कवि-सम्मेलन की कार्यवाही आरम्भ हुई और समाप्ति पर दूकान बंद हो बज गये । किसी को पुरस्कार एक सौ एक रुपया मिला । उससे निम्न-रूप, मैं र में इक्यवन रुपये दिये गए । फिर साहस बढ़ाने के लिए उत्साही तरुण वियों को ग्यारह रुपये का पारिश्रमिक मिला और अखिल को मिली केवल

कोरो प्रतिष्ठा ! जिसमें नामधारी लोगों का एक मीठा व्यंग्य समाविष्ट था ।

अब शिल्पी पथ पर आ गया था । दूकान खुली छोड़ आया था । वह बन्द हुई या खुली पड़ी होगी—यह उसने एक बार भी नहीं सोचा । इस समय उसके मन में केवल एक बात थी जिसकी प्रेरणा उसे घर खींचे लिए जा रही थी । वह मन ही मन कह रहा था कि शारदा राह देख रही होगी । आज भी देर हो गई । कितना समझाता हूँ कि मेरी राह न देखा करो; किन्तु वह इतनी भोली है कि मेरे लिए न दिन को दिन समझती है और न रात को रात ! चलो, कहीं नारी का कोमल मन कुम्हलाने न लगा हो !

अब अखिल शारदा के सम्मुख था । उसने बत्ती जलाई और फिर रसोई से भोजन की थाली सजाकर ले आई । पहला ग्रास मुँह में डाल अखिल शारदा के उदास आनन की ओर देख चिन्तित होकर पूछने लगा—“क्या बात हुई शारदा, तुम अच्छी तो हो ?”

शारदा के मन का चोर पकड़ लिया गया । वह चौंक गई और तत्क्षण अपने को सम्हाल हँसने की विफल चेष्टा करते हुये बोल उठी—“नहीं, कुछ भी तो नहीं । तनिक अलसा गई थी, वही सुस्ती है ।”

पत्नी के इस उत्तर से कवि का मन छोटा हो गया । वह गम्भीर होकर बोला—“छाया इमारत से कभी अलग नहीं रह सकती । तुम व्यथा जाओ और मैं न जानूँ, यह असम्भव है । तुमसे नित्य कहता हूँ कि घरेलू झमेले में मत उलझा करो । तुम्हें जो करना है वह करती रहो; अधिक उलझो तो मन में विकार भरते रहेंगे । हाँ, तो बताओ कि तुम इतनी हैरान क्यों हो ? तुम्हारे चेहरे पर अकुलाहट साफ देख पड़ रही है, कोई विपत्ति घटना घट गई है आज ! या नित्य के धन्धे को लेकर अपना मन खराब कर रही हो !”

कमरे में नीली रोशनी हो रही थी । दम्पति वार्ता में व्यस्त थे भी चल रहा था और अप्राकृतिक विद्युत वायु में अखिल के घुँघराले बाल लहर रहे थे । ऐसे ही शारदा का आँचल बार-बार सँवरने पर भी उड़ना बन्द कर रहा था । शारदा ने परिस्थिति को भरसक अपने नियन्त्रण में लाते प्रयत्न किया । उसे भय था कि कहीं पति को कंगन वाली बात मालूम हो

था ।

या । वह
 या । इस
 लिए जा
 आज भी
 यह इतनी
 को रात !
 रसोई से
 शारदा के
 ई शारदा
 तत्क्षण ही
 ही, कुछ
 गीर होक
 व्यथा प
 लू भमे
 उलझो
 नी है
 कोई वि
 खराब

तो फिर सारी रात उन्हें नींद नहीं आयेगी । वह एक कुशल अभिनेत्री की भाँति इस प्रकार अभिनय करने लगी कि अखिल का सन्देह कोसों दूर चला गया । वह मुख पर मन्द स्मिति लाकर कहने लगी—“घटना क्या घटेगी ? और घट भी जाय तो मैं ऐसी बातों की ओर ध्यान नहीं देती । जब तुम्हें घर आने में देर हो जाती है तो मेरा मन न जाने क्यों इतना बिह्वल हो जाता है यह मैं सोच ही नहीं पाती हूँ । वही स्थिति अब भी थी । कहाँ चले गये थे, अब तो एक वजने वाला होगा ।”

अखिल अब जाकर निश्चिन्त हुआ । भोजन समाप्त कर तौलिये से मुँह पोंछता हुआ वह सहज स्वर में बोला—“कवि-सम्मेलन था, लाल किले के ग्राउन्ड में ! प्रोग्राम देर से शुरू हुआ इसलिए देर हो गई ।”

शारदा वहाँ से उठ बाहर चली गई । उसका मतलब था कि अखिल कहीं उससे फिर घरेलू बातें न करने लगे; क्योंकि अभी सब सो रहे हैं । यदि माँ जग गई तो घर में हाय-हाय मचने लगेगी ।

सब लोग ऊपर खुली छत पर लेटे थे और अखिल आँगन में सोने का अभ्यस्त था । वहीं शारदा ने उसकी चारपाई बिछा दी और फिर स्वयं बच्चों के पास जा, कमरे में लेट रही ।

टन्-टन्, एक-दो, अब जाकर शारदा ने सन्तोष की सांस ली । उसका मन कह रहा था कि यह अच्छा हुआ कि वे सो गये और घर में किसी प्रकार की उलझन नहीं हुई । ईश्वर बड़ा दयालु है । वह सब की मदद करता है । अब उसकी भी आँखें भपकने लगी थीं और रात का तीसरा पहर अपने प्रयाण की तैयारी कर रहा था ।

लेकिन शिल्पी जाग रहा था । आकाश में शान्ति का सागर लहरा रहा था और उस पर दीपक तैर रहे थे झिलमिल-जगमग, झिलमिल-जगमग । वायु ने भी असित-वदना रजनी से समझौता कर लिया था । अब वह अपने में शीतलता का समावेश ले डोल रही थी । कवि आँखें खोले मुक्त गगन की ओर देख रहा था । वह उसको अथाह-सागर की भाँति समझ रहा था, जिसका प्यार चन्द्रमा से है; लेकिन आज चाँद रूठा क्यों है । उसे मन ही मन हँसी आ गई कि कैसा है यह चाँद, जो अपने प्रेमी से रूठ जाता है

मेरा चाँद जो मुझे प्यार का सागर समझता है और कभी मनौना लेने का अवसर नहीं आने देता। शारदा, तुम स्त्री नहीं देवी हो, तुम्हीं मेरी प्रेरणा हो, तुम्हीं मेरी शक्ति और तुम्हीं मेरी कविता ! सहसा उसका हृदय कचोटा और ऐसा लगा कि जैसे उसका अन्तःकरण कह रहा है कि पत्नी से तुमने यह तो कह दिया कि कवि-सम्मेलन में गया था; किन्तु अगर वह पूछ देती कि क्या पारिश्रमिक मिला तो क्या जवाब था तुम्हारे पास ? क्या उससे कहते कि केवल कोरी बाह-बाह लेकर आया हूँ। और इससे उसे सन्तोष हो जाता ?

अखिल सोचने लगा कि शारदा कितनी कुशल गृहिणी है जो दाम्पत्य जीवन में अमृत घोलने का प्रयत्न अर्हनिश करती रहती है। वह मेरी स्थिति को मुझसे अधिक पहचानती है, एकदम सरल और निस्पृहणी सी।

धीरे-धीरे हवा चल रही थी। अखिल के मन में सन्तोष था, शान्ति थी और आँखें नींद में डूबने लगी थीं। पलकों के कपाट बन्द होने लगे और उसके विचारों के क्रम की डोर टूटने लगी।

: ३ :

सबेरे जल्दी ही अखिल की आँख खुल गई। नित्य-कर्म से अवकाश पाकर वह बासी मुँह ही चाभी लेकर दूकान चला गया। शारदा को फिर चोट लगी कि घर में उसका इतना भी अधिकार नहीं है जो वह स्वतंत्र होकर पति के लिए नाश्ता तैयार कर सके। वह चला गया और शारदा उदास मन अपनी दिन-को गहने चयर्षा में लग गई।

सुभद्रा सोकर उठी तो वह सीधी शारदा के पास आई और आते ही लाठी सी मारकर बोली—“अखिल क्या रात को घर नहीं आया था ?”

“आये थे माँ, अभी-अभी दूकान गये हैं।”

शारदा के इस उत्तर पर सुभद्रा उबल पड़ी। वह दोनों हाथ फटकार कर बोली—“तो यह बात है। इसमें मुझे तुम्हारी शारदात मालूम होती है ! कल वह दिन चढ़े तक सोता रहा था और आज सबेरा होने से पहले ही भाग गया।”

शारदा की आँखों से टप्-टप् आँसू गिरने लगे। वह कुछ नहीं बोली, सुभद्रा का पारा चढ़ता गया। उसका चेहरा तमतमा उठा था। रानी उसके पीछे खड़ी थी। वह माँ को विकराल स्थिति में देख और भी प्रचण्ड करती हुई बोली—“जो चीज खो जाती है वह एक तो मिलती ही नहीं और यदि मिलती है तो बहुत कठिनाई के साथ। उसके लिए तमाम तरकीबें करनी पड़ती हैं। आज कंगन खोया है, कल नेकलेस गुम हो जायेगा और परसों जड़ाऊ कर्णफूल बूढ़े खींच ले जायेंगे। क्यों बेकार हैरान होती हो माँ जब कोई तुम्हारी बात नहीं मानता ! मैं.....।”

अभी रानी इतना ही कह पाई थी कि सुभद्रा एक दम बिच्छी सी चिटक पड़ी और शारदा के गले से नेकलेस उतारती हुई आक्रोश भरे स्वर में कहने लगी—“मुझे गरज नहीं पड़ी है कि कोई मेरी बात माने, वह भ्रंश ही नहीं रखूँगी जिसके लिए रोज घर में टण्डा हो। आखिर निखिल की बहू क्या पहनेगी आकर ? मैं आने सब गहने उतार लूँगी, अभी गनीमत है।”

रानी एक आज्ञाकारिणी पुत्री की तरह माँ के सम्मुख ऐसे खड़ी थी जैसे वह माँ के किसी आदेश का पालन कर रही हो और शारदा विलख-विलख कर रो रही थी, जिससे अभी सौंकर उठा हुआ विनोद भी रोने लगा और माधुरी रो-रो कर कमरा हिलाने लगी। जब शारदा के शरीर पर एक भी आभूषण नहीं रहा तो सुभद्रा लपकती हुई, उसके ट्रंक के पास पहुँची और कर्कश आवाज़ में बोली—“लाओ, चाभी दो, तुम पति-पत्नी इस योग्य नहीं हो कि तुम्हारे साथ भलाई की जाय ! होम करते अंगुली जलती है ! घर-घर बहुएँ के लिए पहनती हैं, ओढ़ती हैं; लेकिन आदमी को, आवारागर्दी करने के लिए, बेचने दो दिन को गहने नहीं दे देती है ! जैसी करनी वैसी भरनी। अब पहनना गहने ! छूना तो दूर रहा, देखने के लिए भी नहीं मिलेंगे।”

सुभद्रा निरन्तर बड़बड़ाती जा रही थी। उसने ट्रंक के भी सब जेवर निकाल लिये और उनमें से कुछ रानी को दे और कुछ अपने आंचल में भर, वह

पैर पीटती हुई वहाँ से चली गई और शारदा रोती रही ।

शारदा को ऐसा लग रहा था जैसे उस पर पहाड़ टूटकर गिर पड़ा हो उसकी हड्डियाँ चूर-चूर हो गई हैं, फिर भी वह जी रही है । वह देर तक बैठी रही; सिसकती रही । सहसा कर्त्तव्य ने उसे ललकारा । वह सजग रोते हुये दोनों दुधमुँहों को चुप कराने लगी । तभी बाहर उसे जोर की खिलखिलाहट सुनाई पड़ी । हँसी ए दम भौंड़ी प्रगल्भता से ओत-प्रोत और उच्छ्वस की प्रतीक थी । माँ बेटी से कह रही थी—“आज रानी रुठी हैं तो सब घर का मुँह बाँध लेंगे । जहाँ कौआ नहीं बोलेगा, क्या वहाँ सवेरा ही न होगा ? देख अभी तक चूल्हे में आग नहीं गई । निकम्मे पति पर इतना घमंड है ! अगर कमाऊ होता तो आसमान से बातें करती ! चलो रानी, मैं अभी वनाती निखिल को दूकान जाना है और तुम्हारे पिता जी पूजन से उठते ही भोज चार्हेंगे, तनिक भी देर हो गई तो माधौ को दफ्तर तक दौड़ना पड़ेगा ।”

और माँ के इस व्यंग्य भरे छींटे पर रानी मुग्ध हो उसका मन भरने लिए अपने में चौमुने उत्साह का प्रदर्शन कर उमंग में भरकर बोली—“छो माँ, मेरे लिये रसोई का काम बिल्कुल हँसी-खेल है, अभी चुटकी वजाते खा तैयार होता है । दूसरों की राह कब तक देखती रहोगी ?” बात समाप्त रानी जोर से खिलखिला उठी ।

और रानी की दूसरी खिलखिलाहट शारदा को असह्य हो उठी । गी आँचल से उसने अपने आँसू पोछे और फिर रसोई के धन्धे में जाकर जुट ग

एकान्त में निखिल ने माँ से पूछा—“कंगन का कुछ पता चला माँ ?”

तब सुभद्रा ने अपनी करतूत उस पर बखान दी और उसने चन्द्रभान कान ऐसे भरे कि वे क्रोध से दाँत पीसते हुये कहने लगे—“यह लड़का मेरा दुश्मन है ! खूब नाम रोशन कर रहा है ! दुनिया कहती है कि सीतेली उसे फूटी आँखों नहीं देखना चाहती है और उसकी हालत कोई नहीं जानता वह कितना कायर है ? यदि यह पैदा न होता तो अच्छा था ।”

इस प्रकार शारदा ने घर के एक-एक आदमी का वक्तव्य सुना और लम्बी साँसें भरकर रह गई । एक बार उसके मुँह से अस्फुट स्वर में नि गया—‘ईश्वर इन लोगों को सुबुद्धि दे जो बिना किसी प्रमाण के ही दूसरे

दोषी ठहराते हैं !”

शारदा गम्भीर चिन्तन में खो रही थी। बाहर आँगन में निखिल 'शेव' कर रहा था और डरता-डरता विनोद उसके पास जाकर बैठ गया था। सबेरे की घुप धीरे-धीरे छितर रही थी और प्रातः का सलोनापन जैसे मृतप्राय हो गया था।

: ४ :

शारदा को बचपन में केवल माँ का प्यार मिला था; क्योंकि उसके पिता गयाप्रसाद बहुत ही संकीर्ण विचारों के व्यक्ति थे। वे कनौजिया ब्राह्मण थे, कान्य-कुब्ज पूरे वीस विस्वा। बैसवारे के ऐसे कट्टर ब्राह्मणत्व को मानने-वाले, पिता के घर में जब पुत्री ने जन्म लिया तो उस पर गाज गिर पड़ी। पहली सन्तान और लड़की ! बस, यहीं से उनका प्यार, स्नेह और कुलार दूर भाग गया। तत्पश्चात् दो पुत्रियाँ और हुईं और चौथी सन्तान रंजना ने भी गयाप्रसाद की निराशा में वृद्धि ही की।

फूलमती एक सीधे-सादे स्वभाव की स्त्री थी। ईश्वर पर उसकी निष्ठा थी। उसे विश्वास था कि इस घर में पुत्र अवश्य होगा सो हुआ जब शारदा का विवाह हो गया था और रंजना मैट्रिक में पढ़ रही थी।

गयाप्रसाद धनाढ्य व्यक्ति थे। लम्बी-लम्बी रकमें उधार देना और गिरवी में मकान और कीमती वस्तुएँ रखने की पद्धति उनके यहाँ पीढ़ियों से चली आ रही थी। युग बदल गया था। दुनिया के दस्तूर बने-बिगड़े, उनमें परिवर्तन आया; किन्तु इस घर में पद्धति के पाँव आगे बढ़ रहे थे। सूद में इतना पैसा आता था कि गयाप्रसाद उसका हिसाब तकन रख पाते थे। पुत्र का नाम रखा गया गोपेश; क्योंकि यशोदा के कृष्ण गोपियों के ईश्वर थे और वह श्याम

की अनन्य भक्त थी ।

शारदा के विवाह में खूब धूमधाम हुई थी । लगभग दस हजार का दहेज गयाप्रसाद ने इसलिये दिया था कि उनकी लड़की ऐसे घर में जा रही है जो मोतियों से भरा है और हीरों से जड़ा है ! उन दिनों अखिल थर्ड ईयर का छात्र था । अब उसकी वर्तमान स्थिति गयाप्रसाद के सामने थी तभी वे अखिल से घृणा करने लगे थे और पत्नी फूलमती को हमेशा कोंचते रहते कि अखिल तो भूखा बंगाली है, उसको जितना झाँपोगी वह उतना ही खुलता जायेगा । घर वाले क्या मूर्ख हैं ? क्या चन्द्रभान दस-बीस हजार रुपया लगाकर उसको कोई काम नहीं करवा सकते ? लेकिन जो आधा-पागल है, उस पर विश्वास करके, वे अपने घर को तबाह कभी नहीं करेंगे !

फूलमती कभी पति को तीखा जवाब देती, कभी लेसा-पोती करने लगती और कभी चुप कर जाती । वह शारदा को दुखी नहीं देख सकती थी ।

और शारदा विवाह के बाद अपने सभी आत्मीयों को अपने से पृथक् समझने लगी थी; क्योंकि वे सब शिल्पी की निन्दा करते थे । उसके सम्मुख कतिपय ऐसे अवसर आये जब उसने पीहर से मिले हुये गहनों को पति को सौंप दिया । समुराल की प्रत्येक वस्तु को वह पराई समझती थी । उसे आश्चर्य था कि कंगन कहाँ चला गया । वह जानती थी कि सुभद्रा के गहने न तो वह पति को दे सकती है और न वह माँग ही सकता है । फिर यह क्या हुआ ? सुखी दाम्पत्य-जीवन की वे मधुर घड़ियाँ उसे याद हो आईं जब अखिल ठण्ड से ठिठुरता था और दूसरे नगरों तथा कस्बों से कवि-सम्मेलन के निमन्त्रण आ रहे थे । तब ज़िद करके उसने अपना एक गहना बाजार भेजा और अखिल को मौसम के अनुकूल कपड़े मिल गये और ऐसे ही जब-जब उस पर संकट का समय आया तब-तब शारदा ने पूर्ण पातिव्रत निभाया ।

आज उसके अंग सूने थे । गोरी पतली लम्बी नाक में एक साधारण सी पतली सोने की कील पड़ी थी । हीरे की कनी जड़ी हुई कील सुभद्रा ने निकलवा ली थी । अखिल दोपहर को घर आया । उसने पत्नी को इस वेश में देखा तब आश्चर्य-चकित हो व्यस्त स्वर में पूछने लगा—“आज यह क्या किया तुमने तुम्हारे हाथ-पाँव और कान सब नंगे हैं, माँ ने कुछ कहा है क्या ?”

शारदा ने थोड़े में सब कुछ कह दिया। वह बोली—“जो कुछ कल से लेकर आज तक हुआ है वह तुम्हें न बताना ही मैं उचित समझती हूँ। वह सब स्वयं ही दो-चार दिन में बाहर वालों से सुनने को मिल जायेगा कि इन दो दिनों में कितने चढ़ाव-उतार आये ! तुम्हें मेरी शपथ है कि इस प्रसंग को छोड़ दो, कोई और बात करो।” यह कहते-कहते शारदा की हिल्की भर आई और वह रोने-रोने को हो गई।

अखिल प्रस्तर-प्रतिमा की भाँति चारपाई पर बैठा था, उसके मस्तिष्क में असन्तुलन ताण्डव नृत्य कर रहा था और अस्थिरता कह रही थी कि मनुष्य कितना हेय है ! किसी को दी हुई वस्तु वापस लेकर क्या वह दुनिया के साथ अन्याय नहीं करता ? माँ ने शारदा को गहने दिये ही क्यों थे जो उनके लेने की नौबत आ गई। मैं स्वयं दुःख भेल सकता हूँ, लेकिन शारदा की आँखों में आँसू कभी नहीं देख सकता।

धीरे-धीरे अखिल उठकर खड़ा हुआ और बाहर जाने को उद्यत हो पत्नी की ओर उन्मुख हो बोला—“तुम मेरी प्रतीक्षा न करना, मैं एक संगीत प्रतियोगिता में जा रहा हूँ; ठीक दो वजे वहाँ भोजन का निमंत्रण है, शायद रात को भी देर हो सकती है।” इतना कहकर वह बाहर चला गया और शारदा समझ गई कि संगीत प्रतियोगिता में जाना केवल एक बहाना मात्र है, शायद वे समझ गये हैं कि माँ ने मेरे सब गहने ले लिये हैं। चलो, बात यहीं तक रहे तो अच्छा है। कंगन की चोरी के लाँछन वाली बात उनके कानों तक न पहुँचे, उन्हें बहुत दुख होगा।

शारदा ने भी उस समय भोजन नहीं किया। वह हमेशा पति को खिलाकर ही खाती थी। सुभद्रा ने अखिल को आते देखा था और फिर थोड़ी देर बाद वापस जाते भी देखा; लेकिन उसके मुँह से एक बार भी नहीं निकला कि अरे अखिल, तू बिना भोजन किये ही क्यों लौटा जा रहा है ? शारदा से भी उसने खाने के लिए नहीं कहा। घर का चौका-वर्तन महीरी करती थी। अतः शारदा के लिए इस समय कोई काम नहीं था। वह उदास मन बैठी अपनी परिस्थिति पर विचार कर रही थी कि दुनिया में सब को खुश रखना बहुत टेढ़ी खीर है। आजकल सुबुद्धि का दायरा इतना तंग हो गया है कि उसमें अब भलाई के लिए

स्थान ही नहीं रहा । यदि आज को मेरा पति देवता तुल्य सरल और सीधा होता तो दुनिया उसका भी मान करती । सरलता में सचाई है और सच्चे बोले कड़वे लगते हैं । मीठा-मीठा सभी खाते हैं कड़वी चीज किसे अच्छी लगती है । काश ! जंगल में एक कुटिया होती और उसमें मैं होती और मेरा आराध्य देव ! वहाँ शिल्पी की कला को निखरने का अवसर मिलता और उसकी कविता सम्पूर्ण वन प्रांत में अपना माधुर्य भर-भर देती । तब जीवित कितना सुखी होता ! यहाँ पर सभी कुछ अनमेल है । वे शान्ति चाहते हैं और वहाँ संघर्ष छिड़ा रहता है ।

ग्रीष्म ऋतु थी । अतः सुस्ती और आलस्य मनुष्य पर जल्दी ही अधिका जमा लेता । सोचते-सोचते शारदा का मस्तिष्क बेकार सा हो गया प्रतीत होने लगा और बैठे ही बैठे वह नींद में ऊँघने लगी ।

कवि जब घर के बाहर आया तो उसे ऐसा लगा कि संसार-सागर में मनुष्य रूपी बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को अपना आहार बना रही हैं । यह कैसा हलचल है । उसे संसार से कुछ विरक्ति सी हो आई ।

इस तरह मनो-मंथन में लिप्त अखिल दूकान पर पहुँच गया । आज उस एक प्रकाशक को दो डिजाइनें जरूरी देनी थीं । एक तो पूर्ण हो आई थी और दूसरी का अभी 'रफ' ही चल रहा था । जाते ही वह अपने कार्य में व्यस्त हो गया ।

कवि की कविता चल रही थी और चित्र बन रहा था । पड़ोस में निखिल की दूकान पर बैठे उसके दोस्त ताश खेल रहे थे । कभी-कभी उनकी हँसी ठहाके अखिल का ध्यान भंग कर देते । किन्तु वह तत्क्षण ही अपने को सम्भाल लेता और उसकी बूलिका फिर चलने लगती ।

संसार ऐसे लोगों के बाहुल्य से भर गया है जो न तो स्वयं कुछ करते और न दूसरे को ही कुछ करने देते हैं । यह कहानी आज के अयोग्य अधकच्चे और अशिक्षित नवयुवक वर्ग के साथ अवश्य जुड़ी रहती है । अखिल किसी निरादर नहीं करता था । उसका कहना था कि एक डाकू भी मेरा दोस्त वैसे ही हत्यारा और उसी तरह पुजारी । किसी से द्वेष क्यों किया जाय दुनिया दो दिनों का मेला है । किसी से अप्रिय बात बोलना स्वयं अपने

सीधा ही अन्याय करना है। दुनिया के नियम यदि भंग नहीं किये जा सकते तो उनमें संशोधन, परिवर्द्धन और परिवर्तन कर मनुष्य, जिन्दगी में मन-चाहा निर्माण कर सकता है।

ऐसे उच्च विचारों के व्यक्ति, माँ सरस्वती के उपासक अखिल को लोग सनकी कहते थे। स्वयं उसका मित्र समुदाय ही पीठ पीछे उसकी खिल्ली उड़ाया करता कि यह आदमी आधा पागल है। कोरा भावुक जिसका कोई मूल्य नहीं। कोरी कल्पना से आदमी का काम नहीं चलता और कवि कल्पना को कार्य में नहीं बदल सकता। वह काव्य में प्रेरणा का संचार करता है। सो अखिल महाशय की कल्पना ऐसे पथ का निर्माण करती है जिस पर मनुष्य केवल हवा खाकर और पानी पीकर जी सकता है।

इतना सध होने पर भी वे मित्रगण उसको अपने मन बहलाव का एक साधन समझते थे। वह कार्य में व्यस्त हो या फुरसत में, लेकिन व्यर्थ के लोग अपना एक समुदाय बनाकर उसे छेड़ने आ पहुँचते। अभी वह चित्र पर कूँची फेर रहा था कि चार मूर्तियाँ उसके सम्मुख आकर खड़ी हो गईं। इनमें से एक एम. ए. का छात्र मृदुल था जो अपनी कविता को पन्त और निराला से श्रेष्ठ समझता था। दूसरा था अभिमानी बीरेन्द्र जो मैट्रिक फेल की डिग्री लेकर घर बैठ गया था और अब चित्रकला पर अपनी सारी ताकत खर्च कर रहा था। और तीसरे सज्जन थे एक कहानीकार, ये ग्रेजुएट थे, नाम था बलदेव। इनकी कहानियाँ इनकी दृष्टि में एन्टेन, चेखव और मोपॉसा को भी मात करती थीं। और चौथे साहब थे एक संगीत-प्रेमी, जिनका संगीत इतना परिमार्जित हो चुका था कि वे अकसर बाँसुरी पर तमाम धुनें बजाते और लोगों से कहते कि संगीत में मैं बड़े-बड़े संगीताचार्यों को बता सकता हूँ कि किस समय कौनसा स्वर बजाना चाहिए। इनका नाम था ओम प्रकाश।

अखिल ने अपने मित्रों को बैठाया और तत्क्षण ही माधो को आवाज दी और सामने के टी स्टाल से पाँच कप चाय लाने के लिए कहा।

अभी कल ही सिन्धी ने अखिल से तकाजा किया था और उसने सोचा था कि यदि कवि-सम्मेलन में पारिश्रमिक स्वरूप कुछ रुपये मिल गये तो इस साँई का पूरा बिल चुका दूँगा। लेकिन सीधे आदमी को दुनिया ठग लेती है।

जिस समय वह माधो से चाय लाने के लिए कह रहा था तब उसका अन्तर्मात्र कह रहा था कि कहीं सिन्धी मुकर न जाय; क्योंकि उसके पैसे बहुत हो गये और अब वह उधार नहीं देना चाहता है। उसकी शंका साकार हो गई। उसने देखा कि माधो के साथ सिन्धी उसके सामने आकर बड़बड़ा रहा है—“वाबू वाह ! पिछला चुकाते नहीं और आगे बढ़ाते जाते हो। मैं गरीब आता हूँ, इतना उधार नहीं दे सकता। कब मिलेंगे मेरे पैसे ? बहुत सवर किन्तु लेकिन अगर आज शाम तक मेरा बिल न चुकाया तो मजबूरन मुझे चन्द्रम बाबू के पास जाना पड़ेगा !”

अखिल मौन था। उसके चेहरे पर खिसियाहट नहीं थी, वह मुस्करा रहा था। और सिन्धी कह रहा था—“निखिल बाबू भी तो आखिर आपके भाई हैं, वे क्यों नगद पैसे दे देते हैं। अभी भेजे दे रहा हूँ, फिर आपकी नहीं चले बाबू ! जब मैं आपका ख्याल रखता हूँ तो तुम मुझे क्यों भूल जाते हो। सिन्धी की दूकानदारी का यह लटका था जिसमें वह अपने को सर्वथा निरभर समझ रहा था और अखिल को दोषी !

निखिल और उसके दोस्त बैठे-बैठे यह सब सुन रहे थे। अपना नाम सुना निखिल दूकान से बाहर आ गया और सिन्धी से सहानुभूति पूर्वक पूछने लगा—“क्या बात है साईं, क्यों बिगड़ रहे हो ?”

इस पर सिन्धी निखिल के पास बढ़ आया और दोनों हाथ नचाकर कह लगा—“तुम्हीं बताओ निखिल बाबू, कहाँ तक समाई करूँ, मेरे भी पेट है, वर्षों तक उधार नहीं रख सकता। रोज टोकता हूँ, मगर तुम्हारे भाई साहब कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती। मेरे पैसे दिलवा दो नहीं तो मैं आज घर पहुँचूँगा, तुम्हारे पिता जी से कहूँगा।”

निखिल ने सिन्धी को कुछ भी जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप अपने दूकान में बैठ गया। और तभी उसके दोस्तों की व्यंग्यपूर्ण हँसी अखिल कानों में आकर गूँज उठी। वह अब भी मौन था। सिन्धी जा रहा था धीरे-धीरे नमस्कार का आदान-प्रदान कर उसके कलाकार मित्र भी खिंचे गये थे।

अखिल के मन में तनिक भी दुःख नहीं था। उसे जीवन में हर कदम

यह अनुभूति मिलती थी कि आज के आदमी के लिए विश्व में सबसे बहुमूल्य पदार्थ है पैसा ! मान पैसे का होता है, आदमी का नहीं ! मुझे सब मूर्ख समझते हैं और मैं सबको अपना समझता हूँ ! यहीं पर दुनिया को हँसने का मौका मिलता है । आज ये दोनों आवरण चित्र तैयार कर लूँ और पैसे लाकर सिन्धी को दे दूँ तब फिर वह दुकानदारी के सिद्धांत अपना लेगा और फिर मुझे खूब मीठी-मीठी बातें करने लगेगा । मैंने खूब तौला है दुनिया को, यह बहुत हल्की है, पत्ते की तरह । इसीलिए मैं अपने अपमान को अपमान नहीं संसार का एक प्रमाण-पत्र समझता हूँ जिसमें मेरा अनुभव निहित होता है । लोगों को अपनी किरकिरी सुनकर गुस्सा आ जाता है । वे खिसिया कर लड़ने लगते हैं । पर मुझे हँसी आती है ।

चित्र बन रहा था और चित्रकार का अन्तर्द्वन्द्व अब उसे कल्पना के संसार में ले पहुँचा था, जहाँ स्वर्ग और धरती में कोई अन्तर नहीं रह गया था । क्षितिज के उस पार उसकी कल्पना उड़ान भर रही थी, और तूलिका अनवरत रूप से चल रही थी ।

×

×

×

दिन छिपने तक अखिल सिर गड़ाये, काम में जुटा रहा । दोनों चित्र तैयार हो गये थे । उनको लेकर जब वह प्रकाशक के पास पहुँचा तो वहाँ उनमें एक नहीं अनेक त्रुटियाँ बतलाकर प्रकाशक ने यह स्थिति स्पष्ट करदी कि ये डिजाइन् उसको बिल्कुल पसंद नहीं आईं । इनका उपयोग करने में वह असमर्थ रहेगा ।

तब चित्रकार उसके मुँह की ओर देखने लगा जिस पर सरासर स्वार्थ नाच रहा था । वह चुप रहा । कभी डिजाइनों को देखता, कभी अघेड़ प्रकाशक पर उसकी दृष्टि घूम जाती और कभी दूकान की अलमारियों में लगी हुई पुस्तकों के शीर्षक देखने लगता ।

इतने में प्रकाशक महोदय का आदेश हुआ और नौकर पान ले आया, उनको अखिल की ओर बढ़ा वह अपने मुख पर बलात् हँसी लाकर कहने लगा—
“लो महाराज, पान तो खाओ !”

पान लेकर शिल्पी ने मुँह में दाब लिया । तब प्रकाशक की हिम्मत बढ़ गई । वह दुधहँड़ी तक साँप सरकाता हुआ बोला—“डिजाइन् तो अच्छी नहीं

बनी है, लेकिन मैं आपको हैरान नहीं करना चाहता—ये लो।” कहकर एक दस का नोट उसके हाथ पर रख वह फिर कहने लगा—“बस इतना ही दे पाऊँगा; क्योंकि मैंने सोचा था कि एक रँग के ब्लाक में काम चल जायगा; मगर इस पर तीन ब्लाक वनंगे, तिगुना खर्च आयेगा। फिर मैं तो आपका मान रखना चाहता हूँ।”

अखिल ने इंकार नहीं किया। उसने न ‘हाँ’ कहा और न ‘न’। नोट वजे में डाल प्रकाशक के साथ शिष्टाचार निभा वह दूकान के बाहर आ सड़क पर चलने लगा। उसकी गति में वेग था और मस्तिष्क में निश्चिन्तता। आज साँई को बोलने का मौका नहीं मिलेगा। बाईस रुपये का बिल है, लगभग आधे पहुँच जायेंगे।

कनाट प्लेस की जगमगाती सड़क पर अखिल उत्साह में भरा चला जा रहा था कि सहसा एक पुराने मित्र यदुनाथ मिश्र मिल गये। इनकी दरियागंज में कपड़े की दूकान थी। छः महीने पहले अखिल ने एक थोती का जोड़ा लिया था; किन्तु आर्थिक कठिनाइयों-वश उसका मूल्य नहीं चुका पाया था। ऋण मित्रता की केंची है। उसके लेते ही दोनों की दृष्टि बदल जाती है। ऐसे ही नजर बदलकर यदुनाथ कहने लगा—“क्यों भाई अखिल, यह बात अच्छी नहीं है। मैं तुम्हारा लिहाज करता हूँ और तुम……।”

“लो।” कहते हुए उसने जेब में पड़ा नोट यदुनाथ के हाथ में पकड़ा दिया और बोला—“अब कितने पैसे रहे?”

“चार रुपये चौदह आने।” कहने के साथ यदुनाथ के स्वर में कुछ नरमी आ गई। वह मुलायम होकर बोला—“देखो भइया, ये रुपये भी जल्दी ही दे देना, बहुत दिन हुए कुछ कपड़ा भी लेने नहीं आये।”

उत्तर में अखिल ने उसके मन माफिक बात कह दी—“बहुत ही जल्दी यह हिसाब चुका दूँगा, उसके बाद फिर कपड़ों के लिये देखा जायेगा। अच्छा अब चलता हूँ।” कहकर अखिल ने उससे जान छुड़ाई और ओडियन टाकीज के सामने आकर खड़ा हो गया। यहाँ से अजमेरी गेट के लिए बस मिल सकती थी जहाँ से सीताराम बाजार बिल्कुल निकट था। अखिल ने कुरते की जेब में हाथ डाला, एक अधन्ना पड़ा था। उसके मुँह से एक लम्बी साँस निकली और

बदन में थकावट महसूस होने लगी। अपनी स्थिति पर सदा की भाँति वह इस समय भी हँसा और मन ही मन मुस्कराता हुआ पहाड़गंज की ओर चल दिया। यह नई दिल्ली थी। एक आने से कम की कोई भी वस्तु खरीदना यहाँ पर सर्वथा हेय था। वह मैनपुरी तम्बाकू लेना चाहता था। पहाड़गंज में भी वह उपलब्ध न हो सकी। तलब लग रही थी। वह आगे बढ़ता जा रहा था। अब उसका रुख दुकान की ओर न होकर घर की ओर था; क्योंकि आज भी वह साँई का बिल नहीं चुका पाया था।

ठीक नौ बजे अखिल घर पहुँचा। तब चन्द्रभान ने उसको सामने देखकर एकाएक प्रश्न कर दिया—“क्यों अखिल, वहाँ का कंगन क्या हुआ?”

“कंगन?” अखिल चौंक उठा।

“हाँ, कंगन ! ऐसे बनते हो जैसे कुछ जानते ही नहीं?” यह सुभद्रा का कड़ुआ स्वर था, जिसने अखिल के मन में सन्देह का रस घोल दिया। वह जड़वत् यथास्थान खड़ा रहा। रात को शारदा की गीली आँखें और दोपहर को उसके आँसू, शायद इसी रहस्य के प्रतीक थे।

वह मौन साधे खड़ा था और सुभद्रा कह रही थी—“चलो थोड़ा ही नुकसान हुआ। वह तो कहो मैं चेत गई, नहीं तो एक-एक करके सारे गहने चले जाते; मैंने तो छल्ला-छल्ला उतरवा लिया है।”

वस, अब अखिल को और कुछ पूछने और समझने की आवश्यकता नहीं रह गई थी। कुछ क्षण तक वह किर्कराव्य-विमूढ़ सा घुत बना खड़ा रहा। तत्पश्चात् पत्नी के पास आ उससे कंगन के विषय में पूछने लगा।

पति के मुँह से कंगन की चर्चा सुन कर दुखी होने पर भी शारदा मुस्करा पड़ी और कहने लगी—“मैंने पहले ही कहा था की बाहर वालों के मुँह से तुम को सारी बातें सुनने को मिल जायेंगी। लेकिन यहाँ का वातावरण इतना छिछला है कि उसमें कोई डुबकी लगा ही नहीं सकता। चलो, नाटक का अन्त यहीं पर हो गया, यह बहुत अच्छा हुआ।” यह कहकर शारदा ने सन्तोष की साँस ली। और अखिल बिना भोजन किये ही, निमन्त्रण में भर पेट खा लेने की बात कहकर, चारपाई पर लेट रहा।

रात के पाँवों में झिल्ली और झींगुरों की पायल बँधी थी। जिसकी धीमी-

धीमी भंकार, मधुर शहनाई सदृश शान्त नीरस वातावरण में अपना रस भर रही थी ।

×

×

×

दूसरे दिन जब शिल्पी दूकान पहुँचा तो प्रेत की छाया जैसा साँई उस सामने आकर खड़ा हो गया ।

अखिल के मुँह में जवाब नहीं था । वह नारियल के रेशे हल्की तेज धुँ से तराश रहा था । यह शंकर जी की आकृति की प्रतिमा के लिए उसका एक नया प्रयास था ।

साँई ने उसको दो-तीन बार टोका । तब अन्त में उसे विवश होकर बोलना ही पड़ा—“दो चार दिन और ठहरो साँई, अभी रुपये का इन्तजाम नहीं हुआ ।”

साँई के मुँह का रंग बदला, तेवर चढ़े और नथुनों में फरफराहट हुई । वह बिगड़े स्वर में कुछ कहना ही चाहता था, सहसा उसके ज्ञान-तन्तु नियन्त्रित हो गये और ‘हूँ’ कहकर वह वहाँ से चला गया ।

सिन्धी की ‘हूँ’ अखिल को बहुत महँगी पड़ी । जब वह रात को घर आया तो पिता चन्द्रभान उसे देखते ही आग-बबूला हो उठे और तेज गले से चिल्लाये—“अखिल, तुम अपनी हरकतें नहीं छोड़ोगे, क्यों धू-धू कराते हो, अभी थोड़ी देर पहले दूकान के सामने वाला सिन्धी आया था, साढ़े बाइस रुपये का विल था उसका ! झूझ मारकर चुकाना पड़ा । अभी क्या, अभी और नये गुल खिलेंगे । तुम मेरा पीछा क्यों नहीं छोड़ते ! अगर कमा नहीं सकते हो तो बर-बाद भी न करो । आगे अगर कोई भी हरकत हुई तो मैं तनिक भी रियायत नहीं करूँगा !”

अखिल पर हजारों घड़े पानी गिर गया । काटो तो बदन में लहू नहीं, वह एक दम जड़ हो गया और सोचने लगा कि सिन्धी के उस ‘हूँ’ का यह मतलब निकला । दुनिया बड़ी चन्ट है, अपना पैसा कोई नहीं छोड़ता । वह ऐसा विचार रहा था कि ततैया सी, सुभद्रा पति के सामने आ कर खड़ी हो गई और सारी देह नचा, ताव दिखाकर बोली—“मुँह क्या देखते हो, तुमने इतना कह दिया, बस, सपूत की जान बच गई । यही तो इसकी आदत है, कि कुछ

भी पूछो मुँह सिये रहता है। कंगन के लिए पूछा तो चुप और अब यह सिन्धी वाली बात भी जैसे झूठी ही है। कब तक भरना भरोगे इसका ? उस पर तो कला का भूत सवार है—'कला ! कला !! कला !!! भाड़ में जाय कला ! घर को लुटाने लग जाओ और कहो कि मैं कलाकार हूँ। तुम क्या बोलोगे, अब मैं सख्ती रखूँगी इस पर। देखूँ, घोड़ा कैसे विचकता है ?"

सुभद्रा को उत्तेजित होते देख, चन्द्रभान धीरे से वहाँ से खिसक गये और अखिल भी शारदा के पास आकर बैठ गया। दम्पति में पता नहीं कितनी देर तक बातें होती रहीं। फिर अखिल सारी चिन्ताओं से मुक्त हो निद्रा देवी की गोद में चला गया। उसकी आँखों में स्वप्न तैरने लगे। हिमाच्छादित पर्वत के उत्तुंग शिखर पर वह एक छोटी सी कुटिया में बैठा है। उसकी कविता शारदा सम्मुख आसीन है और उसका स्वर कुटिया में गूँजकर अनन्त तक पहुँच रहा है।

कवि का स्वप्न चल रहा था और उसकी कविता आँखें खोले करवटें बदल रही थी।

आज शारदा बहुत दुखी थी। उसे लगता था जैसे उसका स्वाभिमान मृतप्राय सा हो गया है और वह कीड़े-मकोड़ों की भाँति जी रही है। कुचली जा रही है और उस पर अत्याचार के बर्बर हथोड़े की चोट पड़ रही है। वह सोचने लगी कि पति के स्वभाव को बदला नहीं जा सकता। इसलिए यह आवश्यक है कि मैं अपने में संशोधन करूँ। अभी तक पत्ता लादा है फिर पत्थर लादने से पीछे क्यों हटूँ ? यह मानव नीति के सर्वथा विरुद्ध है। मैं पाप नहीं करूँगी और पुण्य कमाने की भी क्षमता जैसे मुझ में रह ही नहीं गई है। क्या करूँ, मैं कोई सुख नहीं चाहती। मेरा शिल्पी, मेरा देवता और मेरा कवि, हँसता रहे, जिंदगी भर कुछ न कुछ गुनगुनाता रहे, बस यही चाहती हूँ। मैं उसके कथनानुसार उसकी कविता हूँ इसलिए वेदना के सारे बांध तोड़कर, मुक्त होकर बह जाना चाहती हूँ। काश ! मैं उनको प्रसन्न रख पाऊँ, यह मेरे लिए बहुत बड़े सौभाग्य की बात होगी। वे कलाकार हैं और कलाकार कभी बेड़ियाँ नहीं पहन सकता। वे स्वतंत्र पथ के राही हैं और उस पथ का निर्माण, फिर उसका परिष्कृतीकरण मेरा कर्तव्य है। मैं उनके सामने ऐसे सुझाव रखूँगी कि जिन्दगी

हँसती रहे और वे मुस्कराते रहें। समय कभी नहीं बदलता है और मनुष्य परिवर्तन स्वाभाविक है। गति में मोड़ लाये जा सकते हैं, उसको तोड़ा नहीं जा सकता।

शारदा पता नहीं, ऐसे ही क्या-क्या सोचती रही। प्रातः जब उसकी आँखें खुली तो छत की मुँड़ेर पर स्वर्ण-रश्मियाँ इठला रही थीं और आँगन में फुदकते हुई गौरैयाँ चीं-चीं कर रही थीं।

: ५ :

कभी-कभी ऐसे क्षण आ जाते हैं जब मनुष्य जानबूझ कर स्वयं अपने साथ ही अयाय कर बैठता है। प्रथम पत्नी पूर्वजों के कथनानुसार एक कुशल गृहिणी होती है; किन्तु द्वितीया अपने व्यक्तिगत अधिकारों को अधिक महत्व देती है। सुभद्रा की स्थिति ऐसी ही थी। और चन्द्रभान उसको असंतुष्ट कर घर की कलह की सृष्टि नहीं करना चाहते थे। इसलिए वे उसकी प्रत्येक बात में 'हाँ' कहने के अभ्यस्त हो गये थे। वे अखिल को डाँटते थे, फटकारते थे; लेकिन स्नेह भी करते थे। उन्हें भली भाँति याद था कि अखिल की माँ ने अपने मृत्यु के समय उनसे कहा था—'मैं अखिल को तुम्हें सौंपती हूँ। और तुम्हीं इसके बाप हो और तुम्हीं माँ। लेकिन सुभद्रा ने आकर घर को अपने-पराये का बीज बो दिया था। वह निखिल को चाहती थी। रानी को दुलार करती थी और अखिल को देखकर होंठ बिचका करती थी। अब शारदा आ गई थी, जिससे वह बहुत ही भरुहा उठी। को भी बहाना उसे नहीं ढूँढ़ना था। अखिल के कार्य-कलापों से प्रायः घर सभी असंतुष्ट थे। एक तो करेला और उस पर नीम चढ़ा। पहले कंगन खोले उसका पता नहीं चला। फिर चाय वाला तकाजा लेकर घर पर आया। सुभद्रा आपे से बाहर हो गई थी। उसने चन्द्रभान को सुझाया कि अखिल

अपनी गृहस्थी से अलग कर दिया जाय । इसी में भलाई है । रुपये के लिये अभी वह रुका लिखेगा । घर पर कुर्की आयेगी तो सारी मान-मर्यादा धुल जायेगी ।

चन्द्रभान ने पत्नी को कुछ भी जवाब न दिया । वे मौन हो गये और सोचने लगे कि यदि आज को निखिल ऐसा होता जैसा अखिल है, तो क्या सुभद्रा उसके लिए भी यही योजना बनाती ! अपनी देह के टुकड़े को अलग कर दूँ, ऐसा कैसे हो सकता है ? माँ नहीं तो मैं बाप अभी जीवित हूँ । कैसे उसको अपने से दूर करूँ, यह समझ में नहीं आता !

किंतु परिस्थिति बहुत जटिल हो गई थी । सुभद्रा कह रही थी—“अब तुम्हारी एक नहीं चलेगी । मकान के नीचे के हिस्से में रहने के लिए मैं अखिल को एक कमरा दे दूँगी । वह अपनी गृहस्थी का भार खुद उठाये, तभी उसकी आँखें खुलेंगी !”

चन्द्रभान कुछ भी नहीं बोल पाये और सुभद्रा पुनः कहने लगी—“मैं अखिल का बुरा नहीं चाहती; लेकिन इतना तो जरूर है कि उसको गलत रास्ते पर नहीं देख सकती ! तुम्हें बहुत खल रहा होगा कि मैं उसके सिर पर जिम्मेदारी डाल रही हूँ, किसी तरह सम्भले भी तो वह, मैं पक गई हूँ !”

चन्द्रभान अब पत्नी के पास बैठे न रह सके । वे उठकर बैठक में चले गये । उनके मस्तिष्क में हलचल मच रही थी कि सन्तान होते हुए भी इन्द्रिय-सुख के लोलुप व्यक्ति जब दूसरा व्याह रचाते हैं तो उनकी यही गति होती है । २५ वर्ष तक, मैंने जाना ही नहीं, कि जिंदगी के कटु अनुभव क्या हैं ? अब पेंतालीस-छियालिस का होने आया तब उस पर सोचता हूँ । क्या सुभद्रा को मना नहीं किया जा सकता ? वह लड़ेगी, नंग-नाच करेगी और अपने मन की करके रहेगी । उसे धीरे से समझाना होगा । अभी कुछ कहना आग में घी डालने के समान हो जायगा । मैं उसको अब बहुत आगे नहीं बढ़ने दूँगा । और अखिल को कैसे समझाऊँ ? वह भी अपनी धुन का पक्का है । काश ! आज को घर में कोई उसका मूल्य आंकने वाला होता ? अभी मुझे चुप रहना चाहिए; क्योंकि उलझन हो जाने की सम्भावना है, फिर सोचूँगा । शांतिपूर्वक ही इस समस्या पर विचार किया जा सकता है । अशांति में कुछ भी करना

सर्वथा व्यर्थ रहेगा ।

चन्द्रभान बाबू बैठक में बैठे उधेड़-बुत कर रहे थे । और सुभद्रा शारदा से कह रही थी—“नीचे के हिस्से में मैंने एक कमरा खोल दिया है । आज से तुम और अखिल वहीं रहोगे । और तुम्हारी रसोई भी अलग बनेगी, रह गई खर्च की बात, उसके लिए अखिल से कह दो वह खुद कुंआ खोदे और पानी पिये । यहां कोई जिम्मेदार नहीं होगा ।”

शारदा पर अचानक बिजली सी गिर पड़ी । वह सुभद्रा की ओर देखकर रह गई और कुछ भी पूछने का साहस न कर सकी ।

रानी कालेज गई थी । निखिल दूकान गया था और अखिल भी अपने स्थान पर जा, काम में जुट गया था । चन्द्रभान बाबू भोजन से निवृत्त हो चुके थे । पान कुचरते हुए वे भी दफ्तर के लिए रवाना हो गये । घर में अकेली शारदा थी और सुभद्रा ने उसको अपनी गृहस्थी से अलग करने का यह अबसर ढूँढ़ निकाला था । वह शारदा की ओर देख तनिक तीखी होकर बोली—“अब बंठी क्यों हो, उठो और नीचे जाकर कमरे की सफाई करो । उसके बाद अपना सब सामान धीरे-धीरे वहां पहुँचा दो । आज का खाना तुम लोगों का वहीं बनेगा ।”

शारदा ने इतनी देर में अपने को स्थिर कर लिया था । वह दबी जवान से बोली—“वे (अखिल) आ जाँय तो उनसे पूँछ लूँ । फिर……।”

“फिर की नानी ! मैं जो कहती हूँ वह कर । जानती नहीं, इस घर में मेरा अदल चलता है ।” यह कहकर दांत पीसती हुई सुभद्रा उसके सामने तनक कर खड़ी हो गई ।

शारदा रोने लगी, किन्तु उसके आँसुओं का सुभद्रा पर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ा । वह तीर की भाँति वहां से चली गई और शारदा रोती रही ।

× × ×

दोपहर को जब अखिल घर आया तो उसने घर में नया परिवर्तन देखा । बहुत ही आश्चर्य का अनुभव किया । किन्तु न तो इस सम्बन्ध में उसने शारदा से कुछ पूछा और न शारदा ने ही उसे कुछ बताया ।

सुभद्रा ने काम-चलाऊ गृहस्थी के कुछ थोड़े से वर्तन दे दिये थे । शारदा

को और उसके साथ कुछ थोड़ी सी जिन्स भी। उसने अँगोठी पर खिचड़ी बनाई और पति को खिलाकर दूकान भेज दिया। फिर उदास मन टहल में लग गई।

अभी शारदा जूठे वर्तन मल ही रही थी कि एकाएक रंजना उसके सामने आकर खड़ी हो गई। आते ही वह चौंकर बोली—“यह क्या दीदी! क्या आज महरी नहीं आई?”

शारदा ने ऊपर सिर उठाया और अपनी कनिष्ठा की ओर देख एक दी उच्छ्वास ले कहने लगी—“आओ रंजना, महरी नहीं आयेगी तो क्या काम पड़ा रहेगा?”

रंजना शारदा के निकट बैठ गई। उसने देखा अंधेरे कमरे में जर्दीला शीण प्रकाश फैल रहा है। उसने अनुभव किया कि यह एक नया परिवर्तन है। पता नहीं दीदी यहाँ क्या करने आई हैं। जिज्ञासा की तूहल बन गई और उसने पूछ दिया—“दीदी, आज तुम यहाँ कैसे, चलो ऊपर चलें।”

शारदा की आँखें भर आईं और वह गीले स्वर में कहने लगी—“तुम ही जानती रंजना, आदमी को जहाँ जगह मिले वहीं बसेरा बना लेना चाहिए। यह मेरी गृहस्थी का नया संस्करण है।”

तब रंजना ऐसी चौंकी जैसे दिन में तारे निकल आये हों और रात को रज चमक रहा हो। वह बोली—“यह तो एक दिन होना ही था दीदी, अच्छा है आधे पेट खाओगी शांति से तो रहोगी।”

इसके बाद रंजना ने घटना को सविस्तार जानना चाहा; लेकिन सीमित संकुचित मर्यादा वाली शारदा के पास इसकी संधि कहाँ थी? उसने व्यवहार अपनाया जिससे रंजना के साहस के कदम आगे बढ़ने की अपेक्षा छि लौट पड़े। देर तक वह अपनी बहन की नई गृहस्थी का अध्ययन करती थी। तदुपरांत अपने आने का आशय प्रकट कर कहने लगी—“कल गोपेश की गाँठ है, माँ ने कहा था कि दीदी को साथ ही लिवाये आना।”

“तो ऊपर जाकर माँ से कह दो और मेरे अभी जाने के लिये भी पूछ लें।” शारदा ने यह कह रंजना को सुभद्रा के पास भेज दिया।

सुभद्रा बैठी रानी के बालों पर कंधी कर रही थी। सामने रंजना को

। शारदा

आते देख वह कुछ चौंकसी गई कि कहीं अखिल ससुराल गया हो और क
जाकर मेरा रोना रोया हो । कहीं इसी लिये वहन की सिफारिश लेकर मुश
रंजना मेरे पास नहीं आई है ।

किन्तु रंजना ने आते ही उसके सम्मुख अपने दोनों हाथ जोड़ दिये और
शिष्ट स्वर में धीरे-धीरे कहने लगी—“कल गोपेश की सालगिरह है माँ जी
माँ ने सबको निमंत्रण भेजा है । सब लोग दोनों समय भोजन वहीं करेंगे और
आपकी थाली यहीं आ जायेगी ।”

“अच्छा ! बैठो रंजना, खड़ी क्यों हो ?” सुभद्रा ने दिखावे के लिये दुनिया
दारी की ।

और रंजना बैठ गई रानी के पास ।

तब रानी पूछने लगी—“क्यों रंजना, घर पर स्टडी चल रही है या क
पड़ी है । कालेज खुलने वाले हैं । मेरी तो जैसे जान सूखी जा रही है ।”

इस पर रंजना खिलखिला कर हँस पड़ी और सुभद्रा ने जब रानी को भी
डांट दी—“पगली ! पढ़ने से जी चुराती है,” तो रानी को भी हँ
आ गई ।

इसके बाद दस-पाँच मिनट वहाँ बैठकर जब रंजना जाने लगी तो सुभ
से विनम्र स्वर में बोली—“माँ ने कहा था कि दीदी को साथ ही लिवाये आ
क्योंकि कल बड़ा भरभरा रहेगा । काम बहुत ज्यादा है ।”

“इसके लिये अपनी दीदी से ही पूछ लो । जब जाना चाहे लिवा जाओ
कहकर सुभद्रा व्यस्त होकर रानी की चोटी सूँथने लगी ।

नीचे आकर रंजना ने शारदा को अपने साथ चलने के लिये कहा तो
बोली—“आज मेरा जाना ठीक नहीं है रंजना, कल की बात दूसरी है । प्र
ही आऊँगी । अभी तुम जाओ और हाँ, रानी से कह दिया है न कि कल
वहाँ पहुँच जाय ।”

“हाँ रानी से तो मैंने खूब बना-बनाकर कह दिया है दीदी । अच्छा
जाती हूँ ।” कहती हुई रंजना वहाँ से चली गई ।

रंजना के जाते ही शारदा एक नई चिन्ता में डूबने-उछलने लगी कि रंजना
माँ से सारी बातें कहेगी और माँ सारे मोहल्ले में ढिँढोरा पीटती फिरंगी करना

मुझको गृहस्थी से अलग कर दिया गया है। क्या कहूँ ? कुछ परिस्थितियाँ ऐसी आ जाती हैं जब आदमी अपनी सुधि-धुधि खो बैठता है। होनहार के हाथ पकड़े नहीं जा सकते और इसी तरह कहने वालों का मुँह भी बन्द नहीं होता। खिल्ली उड़ेंगी, इस घर की, नहर की और मेरे शिल्पी की।

शारदा के सोचने का क्रम एक क्षण के लिए भी नहीं रुका। बर्तन धुल गये थे, सब कामों से उसने फुरसत पा ली। लेकिन फिर भी उसकी अस्थिरता में वृद्धि हो रही थी कि पता नहीं उनके मन पर क्या बीतती होगी ! क्या दस्तूर है, इस नई दुनिया का कि समाई करने वाले को ही विष के घूँट पिलाये जाते हैं ? अजीब उलझन है, मुँह खोलो तो घृणता और नया कदम उठते ही लोग चिल्ला पड़ते हैं कि यह उच्छ्रंखलता है, उद्वेगता है। ठोकर देने वाले सभी हैं और पुचकारने वाला कोई नहीं। सबकी कटती है मेरी भी वैसे ही कट जायेगी। दुख और सुख जिनदगी के दो नाम हैं। मैं दोनों को स्वीकार करती हूँ; क्योंकि संसार की रीति यही है। मैं...

अचानक शारदा चौंक पड़ी। वह कान खड़े कर सुनने लगी। चन्द्रभान बाबू गला फाड़कर धुरी तरह चिल्ला रहे थे—“इस घर में तुम्हीं सब कुछ नहीं हो। मैं पूछता हूँ, आखिर तुम्हारी यह हिम्मत कैसे हुई जो अखिल को घर से अलग कर दिया। यह सब नहीं चलेगा। जाओ, अभी वह को ऊपर लिवा लाओ, नहीं तो...”

“नहीं तो तुम मुझे जान से मार डालोगे !” कहती हुई सुभद्रा दोनों हाथों से अपना सिर पीटने लगी और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी—“जैसे मैं अखिल की दुश्मन हूँ, अपने पराये की पीर सबको होती है, मैंने इसलिये उसको यह सजा दी है कि वह सुधर जाय और तुम उसके गलत माने लगाते हो ! हाय राम, मुझे बदनाम करते हो।”

वात के साथ ही सुभद्रा ऐसी फूट-फूटकर रोई कि सारा घर दहल उठा।

शारदा अब सन्नाटे में आ गई थी। उसका मन हो रहा था कि ऊपर जाय और सास-ससुर के बीच मध्यस्थ बन, सुभद्रा का पक्ष ले ससुर से कह दे कि पिताजी, घर की स्वामिनी स्त्री होती है। उसके घरेलू कार्यों में पति का हस्तक्षेप करना धर्म-विरुद्ध है। मैं ने जो किया है वह अच्छा है, शायद इसी बहाने उनकी

आँखें खुल जाँय ।

शारदा मन ही माँ तो बहुत कुछ सोच गई; लेकिन उसके पाँव आगे नहीं बढ़े । वह सुनती रही । चन्द्रभान कह रहे थे—“अखिल जैसे मेरा लड़का ही नहीं है, माँ-बाप मारते हैं तो प्यार भी करते हैं; लेकिन तुम सिर्फ दुतकारना ही जानती हो, पुचकारना नहीं ! शर्म नहीं आई तुम्हें, बिना मतलब घर में भेदभाव की दीवाल खड़ी कर दी ।”

किन्तु सुभद्रा रोती रही, चिल्लाती रही और सिर पीटती रही । उस पर पति की बातों का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ा । चन्द्रभान जब बहुत खीझ गये तो पैरों में चप्पल डाल बाहर चले गये ।

अब रात का रँग निखर आया था । आकाश में हँसता हुआ चाँद रजत ज्योत्स्ना बिखेर रहा था और तारों की बारात दूल्हा चन्द्रमा की बलाएँ ले रही थी । मस्त पवन मन्द-मन्द लहरियों पर नन्हें-नन्हें पेंग बढ़ा रहा था । आज कमरे में विजली का पंखा नहीं था, अतः माधुरी और विनोद सोते से चौंका-चौंक पड़ते थे । वे दोनों पसीने से नहा रहे थे । यद्यपि शारदा के हाथ में स्या खजूर का पंखा उन पर निरन्तर डोल रहा था; परन्तु, वह उनके लिए बिल्कुल व्यर्थ सा था । विवश होकर माँ अपने शिशुओं को आँगन में उठा लाई, तभी रंजना उसके सामने आकर पुनः खड़ी हो गई । आते ही वह कहने लगी—“दीदी ! तुमको माँ ने अभी बुलाया है ।”

“अँय !” कहकर शारदा चौंक पड़ी और पूछने लगी—“तूने जाकर माँ से सब कुछ कहा होगा । मुझे तेरा यह पागलपन बिल्कुल अच्छा नहीं लगता ।”

रंजना दाँतों से होठ चबाने लगी और उसकी दृष्टि नीचे झुक गई । तभी शारदा कहने लगी—“अभी कैसे चल सकती हूँ, रंजना, प्रातः देखा जायेगा । अभी तुम्हारे जीजा जी भी तो नहीं आये ।”

रंजना इसलिए वहाँ अधिक देर नहीं टिक सकी कि दीदी उससे कुछ और न पूछने लगे । अच्छा कह कर चली गई और शारदा सोचने लगी कि पता नहीं उनके (अखिल) मन पर क्या बीती होगी । आज वे कुछ भी काम न कर सकें होंगे ! उलझन-में होंगे । बहुत अच्छा होता अगर जल्दी घर आ जाते ।

ऊपर सभी लोग सोने की तैयारी कर रहे थे । बीच-बीच में सुभद्रा कुछ

आगे नहीं बढ़वाड़ा उठती जिससे चन्द्रभान उसको बारबार डाँट बैठते थे ।
 अखिल की कहानी यह थी कि उसका मन न काम में लगा, न मित्रों में
 और न पर्यटन में । बाहर से दूकान बन्द कर वह अन्दर लेटा रहा और
 अपने प्रति सोचता रहा कि कुछ भी हो मुझे मनुष्य-धर्म का निर्वाह करना है ।
 हर स्थिति में संतोष कर मुस्कराते रहना मेरा कर्तव्य है । घर में जो कुछ
 हुआ अच्छा हुआ । अब अशान्ति से दूर रहूँगा और शान्ति में ही निर्माण
 छिपा है ।

जब चारों तरफ सन्नाटा हो गया तो अखिल को कुछ-कुछ शान्ति मिली ।
 वह बाहर निकला और दूकान में ताला बन्द कर घर की ओर चल दिया ।
 फूल की थाली की तरह गोरा चन्द्रमा आकाश में निखरा हुआ था । उसकी
 निर्मल दृधिया चाँदनी पथ पर बिछ रही थी और कवि सोच रहा था कि मैं
 समझती हूँ कि मुझे अपनी गृहस्थी की परवाह नहीं है; लेकिन वे मेरे कोमल
 हृदय को न स्पर्श कर सकती हैं और ऐसे ही मन की गहराइयों में भी नहीं
 उतर सकतीं । काश ! वे जान पातीं कि शारदा और उसके खिलौनों से मुझे
 कितना प्यार है । मैं अपना उत्तरदायित्व भलीभाँति समझता हूँ; किन्तु
 अर्थाभाव उसकी पूर्ति में व्याधात डालता रहता है । मैं भरसक प्रयत्न करूँगा
 कि अपनी गाड़ी का जुआ स्वयं अपने कन्धों पर ही रखे रहूँ ।

घर का प्रवेश द्वार अब सामने आगया था जिससे अखिल के विचारों का
 सारतम्य द्रुत गया ।

आई । तभी
 जायेगा ।

कुछ और
 पता नहीं
 कर सके

।

सबेरा हुआ । सूरज निकला और चिड़ियों का कलरव प्रांगण में गूँज उठा ।
 शारदा ने एक अँगड़ाई ली । खिन्न, दीन और मलीन-सी । उसने समस्त कार्यों

से निवृत्ति पा, अखिल को जगाया। फिर दहकती अँगोठी पर चाय का पाँस चढ़ा दिया।

गोपेश के साथ रंजना ने कमरे में प्रवेश किया और आते ही बोल उठी—
“दीदी ! माँ ने कहा है कि यदि तुम आने में झिझकती हो तो मैं जीजा जी से पूछ लूँ ! माँ (सुभद्रा) ने तो कह ही दिया है !”

“ऐसी बात नहीं रंजना; मैं आऊँगी लेकिन अभी नहीं, फुरसत मिले पर !”

रंजना बहन के इस रखे उत्तर पर कुछ न बोली। वह एकटक उसकी ओर देखती रह गई।

कई क्षण बीत गये। अखिल स्नान कर कपड़े बदल रहा था और बिना अपनी मौसी रंजना के गले में लिपटा हुआ तोतली भाषा में कह रहा था—
“मौछी तुम माँ तो अपने घल ले तलो, यहाँ बउत अन्धेला ऐ, मुजे दल लद ऐ मौछी, माँ तो ले तलो न !”

रंजना की आँखें भीग आईं और उनसे दो अनमोल मोती फर्श पर चूँ जो शारदा ने देखे और उसके मुँह से एक निःश्वास निकल गई।

रंजना ग्रेजुएट थी और शारदा पुरानी प्रथा के अनुसार मैट्रिक से आगे न पढ़ पाई थी। एक ज्ञान में आगे थी और दूसरी आयु में। दोनों की आँखें चहुँदुईं और उस दृष्टि-विनिमय में ही सारा आदान-प्रदान सम्पन्न हो गया।

शारदा बोली—“रंजना, तुम जाओ, इस समय मेरे घर की परिस्थिति बिगड़ी हुई है। ऐसे में दूसरे का हस्तक्षेप बनाने की अपेक्षा काम बिगाड़ सक है। तुम चलो, मैं जरूर आऊँगी !”

रंजना निरुत्तर थी, हैरान थी और थी ऐसी अस्थिर मानो वह मछली और पानी से बाहर निकाल कर रेत पर फेंक दी गई हो।

रंजना चली गई और शारदा ने अपनी समस्या अखिल के सामने प्रस्तुत कर दी। अखिल अनभिज्ञ नहीं था। वह बोला—“आज यह नई बात तुम्हीं बताओ, और भी कभी पीहर जाने के लिए पूछा है, मुझसे ?”

“नहीं।” शारदा का स्वर अत्यन्त क्षीण था।

“तब फिर मुझसे क्यों पूछती हो ?” अखिल ने अत्यन्त गाम्भीर्य में पूछा।

य का पालन पत्नी से प्रश्न किया ।

शारदा कुछ नहीं बोली । वह एकाएक जीने पर जा पहुँची और सुभद्रा के निकट पहुँच अनुनय-भरी वाणी में कहने लगी—“अभी रंजना आई थी माँ ! आज गोपेश की सालगिरह है । मैं जाऊँ ?”

सुनते ही सुभद्रा झल्लाकर बोल उठी—“मैं नहीं जानती । जो मन हो सो करो ।”

शारदा कुछ बोलना नहीं चाहती थी । लेकिन उसके मुँह से धीरे से निकल गया—“यह तुम क्या कह रही हो माँ ? अब यह अधिकार भी मुझे नहीं देना चाहती हो कि मैं घर में बहू बन कर तुमसे सास के हक पा सकूँ ? बोलो क्या कहती हो, जाऊँ कि नहीं ?”

“अच्छा तो तुम बोलना सीख गई हो, जो काम अब तक नहीं किया था वह करने आई हो । खूब सलाह हुई होगी रात भर, तभी अखिल ने सिखा कर तुम्हें यहाँ भेजा है । मुझ से लड़ने आई हो, जाओ अपना काम करो ।” सुभद्रा का पारा बहुत चढ़ गया था । अन्तिम शब्द पूरे करते समय उसका स्वर काँप रहा था ।

और शारदा कह रही थी—“लेकिन माँ……”

“लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, मुझे तंग मत करो । मैं पेट कूटकर पीर नहीं पैदा करना चाहती । जो मन हो करो, न देखूँगी न भौंकूँगी । तुम्हीं ने बाढ़ पर चढ़ा रखा है अखिल को, नहीं तो अ.ज को वह आदमी बन गया होता ।”

सुभद्रा अब बिल्कुल सीधी हो कर खड़ी हो गई थी और क्रोध से नथुने फुला कह रही थी—“जाओ बाबा जाओ, मेरी जान छोड़ो, मैं तुम लोगों से दूर ही दूर रहना चाहती हूँ । मगर तुम मेरे पीछे पड़ी हो !”

इस पर भी जब शारदा खड़ी रही तो सुभद्रा अपना पीछा छुड़ाने के लिये वहाँ से टल गई । विवश हो शारदा नीचे चली आई । वहाँ अखिल खड़ा सुभद्रा की गर्जना सुन रहा था । शारदा को आते देख उसके मुँह से निकल गया—“क्या हुआ ?”

शारदा निरुत्तर रही, तब अखिल कहने लगा—“माँ ने तुम्हें न तो जाने से रोका है और न अनुमति ही दी है, तो अब तुमने मुझसे जो पूछा था, उस नाते

में कह रहा हूँ कि तुम जा सकती हो।”

इसके बाद वह कमरे में आया और चारपाई पर बैठ गया। उसके सामने सिमटी हुई शारदा खड़ी थी। उसके मुख पर दृष्टि टिका गम्भीर स्वर में उसने पूछ दिया—“हाँ शारदा, कंगन आखिर क्या हुआ? उसका कुछ पता नहीं चला और घर में उसके पीछे दुनिया भर का तूफान मच गया। मैं ले नहीं गया और तुमने किसी को देन ही दिया तो क्या टूँक खा गया अथवा कमरा या दीवालें? ताज्जुब है कि घर में चीज खो जाय और कोई बाहर बाग न आवे तो चोर कौन ठहराया जायेगा। मैंने बहुत सोचा कि इस बात को पी जाऊँ। लेकिन अब मामला तूल-अर्ज पकड़ता जा रहा है तो बिना बोले नहीं रह सका।”

शारदा फर्श पर बैठ गई और धीरे-धीरे कहने लगी—“मैं ताला-चाभी करने की अभ्यस्त नहीं हूँ। अगर बन्द कर दिया तो ठीक और नहीं तो कमरे की सारी चीजें खुली ज्यों की त्यों पड़ी रहती थीं। कैसे कह दूँ कि कौन ले गया? माँ मेरे कमरे में कभी आती नहीं थीं और पिता जी के जाने का प्रसन्न ही नहीं उठता है। रह गया निखिल, वह बेचारा कभी फुरसत ही नहीं पाता जो मेरे पास आकर बैठे। हाँ रानी अलवत्ता निःसंकोच हो कर आती-जाती है। लेकिन क्या उस पर सन्देह किया जा सकता है?”

इस पर अखिल के कान खड़े हो गये और वह एक लम्बी साँस लेकर बोला उठा—“सन्देह की बात न कहो शारदा, सन्देह तो मनुष्य को कभी-कभी स्वयं अपने पर करना पड़ जाता है। मैं रानी को चोर नहीं ठहराता। परन्तु जब मुझ पर दोषारोपण हुआ कि मैं चाय का विल चुकाने के लिए कंगन ले गया और तुम पर लाँछन लगा कि तुम्हारी जान में और तुमसे मुझे कंगन प्राप्त हुआ तो मैं भी यह पूछ सकता हूँ कि इसका कुछ प्रमाण है किसी के पास। समझ गया कंगन गुम करके घर में एक नया परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया गया था और वह सफल हो गया। मुझे सन्तोष से बड़ा सुख मिलता है। इसीलिए किसी से उलझता नहीं हूँ। नहीं तो मैं भी पिताजी से कह सकता हूँ कि घर में इतनी बड़ी घटना हो जाय और वे चुप रहें। जब वे कंगन के लिए मुझ से पूछ सकते हैं तो मैं भी जोरदार शब्दों में उनसे कह सकता हूँ कि कंगन मैंने नहीं लिया है! आखिर, घर के बाहर जायेगा कहाँ? घर में और लोग भी तो रहते हैं।

इसका पता लगाया जाय । मगर शारदा, क्या फायदा यह सब व्यर्थ है । अच्छा, अब तुम जाओ क्योंकि वहाँ तुम्हारी राह देखी जा रही होगी !”

अखिल उठकर खड़ा ही हुआ था कि दौड़ता हुआ गोपेश शारदा से आकर लिपट गया और जल्दी-जल्दी कहने लगा—“जल्दी चलो दीदी, माँ बुला रही है ।”

शारदा ने भाई के सिर पर हाथ फेरा और दोनों हाथों में उसका मुख ले चूमती हुई बोली—“अभी चलती हूँ ।”

तभी गोपेश अखिल के पास खिसक आया और उसके मुख पर अपनी भोली दृष्टि स्थापित कर कहने लगा—“जीजा जी, तुम्हारा भी न्योता है, चलो तुम भी मेरे साथ चलो ।”

अखिल ने उसकी ओर देखा और मुस्करा पड़ा । वह बोला—“भई गोपी, अभी नहीं, हम दोपहर को आयेगे, तब तक तुम दावत की तैयारी करो ।”

थोड़ी देर बाद शारदा बच्चों के साथ अपनी माँ के घर चली गई और अखिल के पाँव दूकान की ओर बढ़ने लगे ।

×

×

×

फूलमती के घर में स्त्रियों की भीड़ थी । गोपेश को दूध पिलाने का समय निकट आ गया था । सहसा शारदा सुने हाथ और नंगे पाँव उसके पास जाकर खड़ी हो गई ।

फूलमती चौंक उठी । वह जल्दी से उठी और हाथ पकड़कर पुत्री को अन्दर लिवा ले गई और उससे पूछने लगी—“घर से जुदा किया है तो गहने भी ले लिये, पराये पूत की पीर कौन जानता है । मैं तो चाहती थी कि तखिल के साथ रंजना को ब्याह दूँ; लेकिन अब तुमको तो भाड़ में भोंक चुकी हूँ, उसको कसाइयों के हाथों नहीं सौंपूँगी !”

शारदा इस शुभ घड़ी में अपनी आँख में आँसू नहीं लाना चाहती थी । उसकी आँखें भर आई थीं, उन पर नियन्त्रण रख साहस कर वह कहने लगी—“माँ, किसी को बुरा क्यों कहती हो । यह क्यों भूल जाती हो कि तुमने मुझे जन्म दिया है और वे केवल सास के स्थान को पूरा करती हैं । अपने मन से दिये थे और खुद ही ले लिये तो उन गहनों को मैं अपना कैसे समझूँ ?”

फूलमती शारदा का मुँह देखने लगी। वह व्यस्त होकर कहने लगी—“मुझे तो अपनी भाँपनी है। चलो बेटो, मैं गहने देती हूँ, जल्दी से पहन लो, दुनिया क्या समझेगी, कि वे ससुराल के हैं, या मैके के ? औरतें इकट्ठी हो रही हैं और हाँ, रानी को साथ नहीं लाईं। क्या बात हुई ?”

यहाँ पर शारदा ने चतुराई से काम लिया। वह बोली—“ध्यान नहीं रखो माँ, मैं जल्दी में थी, अभी गोपेश को भेजती हूँ।”

फूलमती निश्चिन्त हो अपने कमरे में चली गई और जल्दी से कुछ गहने लाकर शारदा के सामने रख दिये। तब तक गोपेश को शारदा रानी को बुलाने के लिए भेज चुकी थी।

कुछ आदर्शक आभूषण पहिन शारदा आँगन में आकर बैठ गई और स्त्रियों ने मंगल-गीत गाने आरम्भ कर दिये। आज सूर के घर धूम थी। गया-प्रसाद किसी अवसर पर दिल खोल कर खर्च करना जानते ही न थे। पुत्र का जन्मदिन था और उसमें तनिक भी कोर-कसर रह जाती तो फूलमती का मुँह कई दिन तक लटका रहता। नई सभ्यता का प्रतीक लाउड-स्पीकर बाहर बज रहा था और व्यवहार में आये लोगों का आतिथ्य पान-सुपारी से लेकर सोडा-लेमन और विमटो आदि से पूर्ण हो रहा था।

भीतर वर्गगैठ की रस्म चुकाई जाने को थी; लेकिन गोपेश अभी तक नहीं लौटा था। वह दौड़ता हुआ आया और कहने लगा—“रानी दीदी अभी आ रही हैं। वे कहती थीं कि तुम चलो, मैं कपड़े बदलकर अभी आई।”

कार्यक्रम आगे चलने लगा। गोपेश के सिर पर गोटे जड़ी गुलाबी मखमल की टोपी रख दी गई। चाँदी के कटोरे में गाय का कच्चा दूध और उसमें थोड़ा सा गुड़ और काले तिल डालकर फूलमती ने कटोरा उसके मुँह से लंगा दिया। माँ का आँचल शिशु के सिर पर था। शारदा गा रही थी। रंजना मुस्करा रही थी और गोपेश मगन हो छोटे-छोटे घूँट पी रहा था।

इसके बाद यह कार्य पूर्ण होते ही खाने वालों की पंगत बैठने लगी। अखिल आया और उसको अकेला देखकर गयाप्रसाद ने पूछ दिया—“निखिल नहीं आया ? दूकान से ही आ रहे हो न ?”

उत्तर में अखिल ने सहज ही कह दिया—“मैंने अभी-अभी निखिल से

कहा था; वह बोला तुम चलो मैं आ जाऊंगा।”

“और बाबू जी ?”

“समुर के प्रश्न पर अखिल बोल उठा—“वे तो आफिस गये होंगे, शाम को ही आ सकेंगे।”

गयाप्रसाद को सन्तोष हुआ। “अच्छा, अच्छा।” उनके मुँह से निकला। फिर दृष्टि दामाद के मुख पर गई और वे कहने लगे—“चलो तुम तो बैठो !”

अखिल पंगत से दूर विशेष स्थान पर रसोई के निकट शीतल पाटी बिछा कर बैठाया गया। रंजना उसके लिए थाली सजाने लगी। घुलावे में आई हुई स्त्रियाँ चली गई थीं। अतः फुरसत पा फूलमती उसके पास आकर बैठ गई और पूछने लगी—“यह क्या हुआ ? लड़की के सब जेवर उतार लिये तुम्हारी माँ ने ? आज काम-काज का घर था तब तो पहना-उड़ा कर भेजना था। और सुना है रंजना कहती थी कि तुम्हारी गृहस्थी अगल कर दी गई है। तुमने कुछ कहा नहीं, अपने बाबू जी से ?”

अखिल के चेहरे का रँग ज्यों-का-त्यों बना रहा। उसमें तनिक भी परिवर्तन नहीं हुआ, मुस्कराता हुआ वह कहने लगा—“गुस्से के समय बड़ों से न बोलना ही अच्छा है। घर-घर मिट्टी के चूल्हे हैं माँ जहाँ चार बर्तन होते हैं वहाँ यह होता ही है। मैं किसी से कुछ नहीं कहूँगा।”

तब फूलमती कुछ चिढ़ गई और कुंठित होकर बोल उठी—“तुम्हारी कच्ची गृहस्थी है, छोटे-छोटे बच्चों का साथ और इस पर यह लापरवाही ! अरे अब तो सोचो।”

“सोचना क्या है माँ, मैं शाम तक अपने बच्चों का पेट भर लूँगा, सहारा पकड़ने की अपेक्षा, आदमी को उससे दूर रहना चाहिए। तुम व्यर्थ हैरान होती हो।”

यद्यपि अखिल का उत्तर सन्तोषजनक होते हुए भी फूलमती को चिन्ता-मुक्त नहीं कर सका था; लेकिन फिर भी वह चुप कर गई और दूसरे प्रसंग पर बातें करने लगी।

×

×

×

रानी दोपहर को नहीं आई और न निखिल ही आया गयाप्रसाद के घर,

निमन्त्रण में। ऐसे ही चन्द्रभान बाबू भी रात को भोजन करने नहीं आये। गयाप्रसाद ने पहले एक आदमी भेजा और फिर स्वतः वहाँ गये; किन्तु चन्द्रभान अपच का बहाना कर टाल गये। सुभद्रा के लिए दोपहर को थालो भेजी गई थी वह उसने रख ली और निखिल के लिए कह दिया कि वह आया नहीं आ सकेगा, शाम को उसके मित्र के यहाँ वारात आरही है। रह गई रानी, दोपहर को उसकी एक सहेली दूर से आगई थी जिस कारण वह नहीं पहुँच पाई और अब रात को कहाँ जायेगी। इस प्रकार खूब लेसा-पोती करदी सुभद्रा ने। अब वह अपने मन में पुलक रही थी कि आज मेरे मन की हुई। यह सब उसका ही रचा हुआ प्रपंच था। चन्द्रभान कल से बहुत गुस्से में थे। उनकी भूख जैसे मर गई थी। इसलिए वे समझी के घर जाने से नट गये और निखिल तथा रानी दोनों माँ के इशारों पर नाचते थे। वे फिर उसकी अवज्ञा कैसे कर सकते थे ?

रात के दस बज गये। फूलमती को गृह-कार्यों से अवकाश ही नहीं मिल पाया। फिर भी जब शारदा जाने लगी तो वह उसके पास आ कहने लगी—“देखो, तुम्हारे घर में जो कुछ हुआ है, यह अच्छा नहीं। अखिल से मैंने कहा तो वह बहकी-बहकी बातें करता है। तुम धीरे से अपनी सास को समझाना कि पति के दोष की सजा वे तुम्हें और बच्चों को न दें। घर में भले घुरे सभी होते हैं; लेकिन क्या बुरा निकाल दिया जाता है ? उससे दोनों घरों की बदनामी होती है। बस अब जाओ फिर फुरसत में बातें होंगी।”

शारदा चली गई और रंजना देर तक प्रमुख द्वार पर खड़ी उसके उठते हुये पैरों की ओर निहारती रही। वह सोचती रही कि दीदी का जीवन कितने धर्म-संकट में है ? सबको सदैव सन्तुष्ट बनाये रखना उनका प्रधान ध्येय है तभी न मन की कह सकती हैं न रो सकती हैं और न हँस सकती हैं। मध्यवर्ग की नारी का जीवन ऐसा ही होता है !

यह सोचते-सोचते रंजना अन्दर आगई और सीधी छत पर जा, खुले आकाश के नीचे खड़ी हो मुक्त चन्द्र को निहारने लगी। हवा का रुख बदल रहा था। उसकी मन्द लहरियाँ चंचल हो उठी थीं। मानसून का उन पर स्पष्ट प्रभाव था। तभी वे स्वेच्छाचारिणी बन वेग में बदलती जा रही थीं। हवा बढ़ती गई

और रंजना सोचती गई कि क्या नारी विद्रोह नहीं कर सकती ? मनुष्य देह पाकर वह अपने नारी-गत संस्कारों की माँग कर सकती है । क्या दीदी इतनी भीरु हैं जो आग खाते हुये भी अंगारों का भेद नहीं समझ पाती हैं ?

देखते-देखते आकाश मेघाच्छन्न होने लगा । काली-गोरी और भूरी बदलियाँ अम्बर की छाती पर दौड़ने लगीं । तब चाँद के भी अस्तित्व को बट्टा लग गया । वह कभी छिप जाता, कभी निकल आता और कभी श्याम घनों में ऐसा खो जाता, मानो अमावस की रात हो । रंजना आँगन के छज्जे की मुँड़ेर पर बैठ गई और कुहनी घुटनों पर टेक ठुड़ी पर हाथ रख विचारने लगी कि देखो इस नाटक का अन्त कहाँ पर होता है ? रस्सी जब टूट जाती है तो वह जोड़ी अवश्य जाती है; लेकिन उसकी गाँठ कभी नहीं मिटती । ऐसे ही यदि दीदी पुनः संयुक्त परिवार की सदस्या बन गईं तो फिर उस घर में उनका जीवन दूध की मक्खी की तरह ही व्यतीत होगा ! और अगर गति आगे बढ़ती गई तो फिर भविष्य और परिणाम के लिए पूछने कहीं नहीं जाना है ? जीजा जी उस देश के कलाकार हैं, जहाँ उनका मूल्य आँकने वालों का बहुत बड़ा अभाव है । ईश्वर मालिक है वही इस झूबती नाव को पार लगा सकता है । आदमी का काम केवल प्रयत्न करना है । उसी में निर्माण है और उसी में विध्वंस ! काश ! ये क्षोभ के बादल उल्लास में परिणत हो जाते तो कितना अच्छा होता ।

हवा की तेजी बढ़ती जा रही थी । रंजना वहाँ बैठी न रह सकी । वह नीचे आई तो फूलमती उससे पूछने लगी—“अरे, तू कहाँ चली गई थी रंजना ! मैं समझी, कहीं शारदा के साथ.....।”

“नहीं माँ ! मैं ऊपर थी ।” रंजना यह कहते क्षण अपने अन्तर्द्वन्द्व को पी गई थी ।

: ७ :

वर्षगाँठ का समारोह विश्राम ले रहा था । सब सो गये थे और फूलमती दिन भर के आए-गए लोगों का लेखा-जोखा पति के पास बैठी लगा रही थी ।

प्रसंग बढ़ रहा था, याप्रसाद कुछ उलभे-उलभे से प्रतीत हो रहे थे। आखिर उन्होंने अपने मुँह तक आई बात कह ही डाली। वे एकाएक बोल पड़े—
“शारदा की माँ, यह बात समझ में नहीं आई कि चन्द्रभान बाबू, निखिल और रानी इन तीनों में से कोई नहीं आये, क्या मामला है ?”

तब फूलमती जो कुछ जानती थी, जवाब में सब बता गई। सुनकर गया-प्रसाद के कान खड़े हो गए। वे भौंचक्के से हो, प्रौढ़ा पत्नी के मुख पर दृष्टि पसार कर बोले—“यह अच्छा नहीं हुआ। मैं जानता हूँ, यह सब कारंवाई रानी की माँ की है। एक दिन जब रानी ससुराल जाएगी और कहीं अगर उसके साथ भी ऐसी ही घटना घटी तो उनको मालूम हो जायेगा कि जब अपने चोट लगती है तभी दर्द का अनुभव होता है। सारी बातें अखिल के पीछे होती रही हैं और हुई हैं। मैं नहीं जानता था कि बड़े घर का लड़का ऐसा साधु हो सकता है। शारदा का जीवन दलदल में फँस गया। अब मैं रंजना को उस घर में नहीं व्याहूँगा। नहीं तो तुम्हारी राय थी और मैं भी सोचता था कि दोनों वहाँ साथ-साथ रहेंगी और मेरी समझिन सगे-सौतेले का भेद भूल जायेंगी। लेकिन अब नहीं। तुम चुप क्यों बैठो हो, कुछ बोलती क्यों नहीं ?”

“क्या बोलूँ ? जो हो रहा है वह देख ही रहे हो। इस पर भी अगर दूध का जला मट्ठा फूँक-फूँक कर न पिये तो और क्या करे ? यही मैं भी सोचती हूँ कि रंजना का व्याह-सम्बन्ध अब निखिल के साथ नहीं होना चाहिए और फिर देखो आगे क्या होता है ?”

गयाप्रसाद पत्नी के मुँह से अपने अनुकूल ही उत्तर चाहते थे, सो मिल गया। तब वे उसको प्रसन्न करने के लिए कह उठे—“अच्छा अब रात ज्यादा हो रही है, दिन भर दौड़ते-दौड़ते देह चूर-चूर हो गई है, मैं सोऊँगा और तुम भी जाकर आराम करो।”

फूलमती पति की आदत को पहचानती थी कि जिस समय उनका जो मन होता है वह करके रहते हैं। यह सब सोच वह वहाँ से चली गई और विस्तर पर जा सोने का उपक्रम करने लगी। कहावत है कि ‘नींद न जाने दूटी खाट और भूख न जाने जात-कुजात’ यह सही है। लेकिन जहाँ पर एक नई चिन्ता ने जन्म ले लिया हो वहाँ की स्थिति बहुत ही गई-बीती हो जाती है। ‘चिन्ता-साँपिन

। आखिर काहि न खाया, जग में काहि न व्यापी माया । चिन्ता का शासन नींद, भूख और विकास पर अबाध रूप से चलता है । फूलमती माँ थी । उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि शारदा को सुभद्रा फिर अपने में समेट लेगी और वह घर की बड़ी बहू होगी और तभी छोटी बहू रंजना मेरे सपने साकार कर सकेगी । यहाँ पर रंजना के ब्याह की बात तो बहुत दूर चली जाती है । सवाल यह है कि अखिल उनका लड़का है और शारदा मेरी पुत्री है । दोपी कौन है यह न देख उस घर में उल्टी नीति चल रही है । भला सुभद्रा का क्या बिगाड़ा था मेरी बच्ची और उसके दुधमुँहों ने जो घर में यह टूटा-फाटी की गई ? मैं कल ही बुलवाती शारदा को, लेकिन सोचती हूँ कि दो-चार दिन ठहर जाऊँ ? अभी उसको यहाँ धुलाने का मतलब उसके सास-ससुर कुछ और निकाल सकते हैं ? माँ दूसरी है तो बाप तो वही है, वह तीसरा क्यों बन गया ? मेरे घर में जो पति चाहता है वह होता है; लेकिन उनके घर में जो पत्नी चाहती है, पति वही करता है । अगर यह अन्तर न होता तो यह निकट की दूरी पता नहीं कितने नजदीक आ चुकी होती । अरे चार घर का ही तो फासला है, वहाँ के बोल यहाँ आते हैं और यहाँ के वहाँ टकराते हैं, फिर भी यह अन्धेरे ! आदमी का मुँह पाकर स्त्री कितनी आगे बढ़ जाती है, यही हल शारदा की सास का है । लेकिन मैं उसका विरोध करूँ यह अपने लिये ही काँटे बोना है । ऐसे तो घर में वह चाहे शारदा को भूखा रखती हो, प्यासा रखती हो और चाहे जितना कोंचती हो, परन्तु बाहर पालिश जरूर करेगी । मगर जब मैं उसके खिलाफ जाऊँगी तब वह नंगी नाचेगी । चुप रहने में ही भलाई है, उलझन करने की बजाय आदमी को समाई करनी चाहिए और समाई करने वाला ही बड़ा होता है । पहले तेल देखना है और फिर उसकी धार । देखूँ अखिल क्या करता है अपनी गृहस्थी के लिए और उसकी सौतेली माँ उसको आड़े लेती है या बेड़े । लड़की हमेशा दूर ब्याहनी चाहिये । पड़ोस का मैका और मुहल्ले की ससुराल, न ससुराल ही रहती है और न पीहर ! ऐसी हालत में भेदभाव होकर ही रहता है । मैंने बड़ी भूल की जो शारदा को एक पड़ोसी के यहाँ ब्याह दिया । अब तीर हाथ से निकल चुका है उसका निशाना सही रहेगा या गलत यह तीर चलाने वाला कभी नहीं समझ सकता । क्या मैं जानती थी कि मेरी लड़की

की यह छीछालेदर होगी ? जान-बूझकर भला कुँ में कौन कूदता है ? लेकिन जो गिरा सो गिरा, अगर उठ गया, सम्भल गया तो उसे लोग आदमी कहते हैं और अगर गिरकर फिर उठ न सका तो लोग उसे धिक्कार कर नहीं थकते। उसकी थू-थू करने से बाज नहीं आते और टीका-टिप्पणियाँ तो करते ही रहते हैं। घर-घर में यही चल रहा है, जहाँ देखो वहीं भगड़ा।

आसमान पर छाये सभी बादल एक रस हो गये। अब उनमें रँगों का भेद नाम मात्र को नहीं था। दही जैसी बदलियाँ फट गई थीं, तितर-बितर हो गई थीं और चाँद अपने पूर्ण आलोक के साथ निखर रहा था, चमक रहा था। रात की रानी अपना शृंगार कर दुल्हन बन, डोली में बैठने जा रही थी और प्राची के आकाश में भोर का तीर छूट चुका था। सफेदी फूट आई थी और मुँगों की बाँग स्पष्ट होकर फूलमती के कानों में गूँज रही थी। अरे ! सवेरा हो गया ! वह चौंक उठी और तब उसे अनुभव होने लगा कि वह बहुत थकी हुई है और बहुत चिन्तित, उसे सो जाना चाहिए।

रात जा रही थी और फूलमती की पलकें नींद का निमन्त्रण पा मुँदने लगी थीं।

: ८ :

माँ-बाप का प्रभाव सन्तान पर स्पष्ट पड़ता है। सुभद्रा का स्वभाव रानी पर उतना प्रस्फुटित नहीं हुआ था जितना निखिल पर। पूरे अंशों में वह माँ का सपूत था, आज्ञाकारी था और था उसका एक विश्वास-पात्र। अखिल की भाँति बी. ए. के बाद उसने अपनी पढ़ाई स्थगित कर दी। दूकानदारी उसका एक विशेष चाव था और सुभद्रा उसके पक्ष में थी। इसीलिए उसे मनचाहा रुपया मिल गया और वह एक स्टेशनर्स बन गया।

और रंजना भी थी एक ग्रेजुएट और स्वभाव में अपनी वहन शारदा जैसी शिष्ट, सरलहृदया तथा मृदुभाषिणी । आधुनिक सभ्यता के सम्पर्क में आकर भी वह अपनी भारतीय संस्कृति को नहीं भूली थी । वह निखिल को मानती थी । केवल इसलिए कि जहाँ पर वह बिल्कुल अकेला है वहाँ उसके व्यक्तिगत विचार मनुष्यता के साथ चलते हैं । उसके अन्तर में निखिल के लिए जगह बनने लगी और निखिल भी अपनी आराध्या को पहचान गया ।

रंजना शारदा के पास दूसरे-तीसरे दिन आती रहती थी तभी रानी से उसकी खूब बातें होतीं और कभी-कभी निखिल से भी दो एक बातें करने का अवसर मिल जाता । इसके अतिरिक्त निखिल रंजना के घर आने-जाने में पूर्णतया स्वतन्त्र था । इन दोनों की बढ़ती हुई प्रीति का आभास लगभग सभी को था । तभी फूलमती निखिल को अपना दामाद बनाना चाहती थी और सुभद्रा रंजना को अपनी बहू ।

एक दिन रंजना माँ के साथ जब चांदनी चौक में एक विसातखाने की दूकान पर खड़ी गोपेश के लिए गेलिस खरीद रही थी, तभी उधर से निखिल निकला । उसको देखते ही फूलमती बोल उठी—“अरे, तुम परसों आये नहीं निखिल, कहाँ जा रहे हो ?”

निखिल ठिठक कर खड़ा हो गया । सामने रंजना खड़ी मुस्करा रही थी । उसकी ओर कनखियों से देखकर वह फूलमती से कहने लगा—“एक दोस्त के यहाँ व्याह था, वहाँ फँसा रहा । फतेहपुरी तक जा रहा था, एक दूकानदार से कुछ काम है ।”

निखिल चलने को उद्यत हुआ तो रंजना धीरे से बोल पड़ी—“अब क्यों हमारे घर आने लगे निखिल बाबू ! शायद आप कुछ भेदभाव मानने लगे हैं ।”

उत्तर में निखिल हँस पड़ा और बोला—“ऐसी बात नहीं रंजना, मैं सबसे आलता हूँ और यह पहले सोचता हूँ कि गैर आदमी को प्रथम देखना चाहिए ताकि उसको शिकायत करने का मौका न मिले और अपनी की शिकायत भला कोई शिकायत होती है ।”

इस पर फूलमती हँस पड़ी और निखिल आगे बढ़ गया ।

रंजना वहाँ से आगे चली । फिर माँ को चावड़ी बाजार में स्थित देवी के

मन्दिर में ले गई। वहाँ फूलमती ने प्रसाद चढ़ाया और फिर घर की ओर चली। बाजार सीताराम के चौराहे पर आ वह गली शीशमहल की ओर मुड़ रही थी कि सहसा पड़ोस की बूढ़ी मालिन मिल गई। दोनों में बातें हो लगीं और रंजना की दृष्टि इधर-उधर दौड़ने लगी। अचानक उसने देखा निखिल एक दफ्तरी की दुकान पर खड़ा, उससे बातें कर रहा है। उसकी ही उस ओर स्थिर होकर रह गई।

और देख लिया निखिल ने भी रंजना को। तब वह उसके पास चल आ और निकट ही फूलमती को खड़ा देख जाने का आयोजन कर ही रहा था कि फूलमती का ध्यान उसकी ओर गया और वह आग्रह-पूर्वक कहने लगी—“अब घर के नजदीक आ गये हो निखिल, चलो दो मिनट बैठ कर जाना।”

रंजना दाहिने पैर का अँगूठा गली के पत्थरों पर घिस रही थी। उस नीची दृष्टि निखिल को निहार रही थी। वह इन्कार नहीं कर सका। फूलमती उसे घर लिवा लाई।

अब झुटपुटा साँभ में परिणत हो रहा था और नगर का कोलाहल निखिल की अपेक्षा कुछ तीव्र हो उठा था। फूलमती ने जाते ही पंखा खोल दिया और निखिल को बैठने का संकेत कर रंजना से कहने लगी—“रंजना, देखो अब दही जम गया होगा, जल्दी से लस्सी बना लाओ।”

“अच्छा माँ, अभी लाई” कहती हुई रंजना भण्डार घर की ओर चलती तभी नीचे से एकाएक गोपेश के रोने की आवाज आई।

“क्या हुआ, अरे गोपू तू रो क्यों रहा है?” कहती हुई फूलमती ने भागी।

वहाँ तीन-चार लड़के आपस में झगड़ रहे थे और भगड़ा यह था। गोपेश ने अपने पड़ोसी मित्र कमलेश का गेंद नाली में गिरा दिया था। कमलेश कह रहा था कि मेरा गेंद निकाल कर दो नहीं तो मैं तुम्हें पीटूँगा। इस गोपेश ने आनाकानी की और कमलेश ने उसके दो-तीन घूँसे जड़ दिये। फूलमती झगड़े को शान्त करने के लिए गेंद निकलवाने का प्रयत्न करने लगी।

लस्सी का गिलास लेकर जब रंजना निखिल के पास आई तो वह अकेला था। गिलास आगे बढ़ाती हुई वह धीमे स्वर में बोली—“लो ! आप तो ब

आते ही नहीं। इस समय भी यदि माँ साथ न होती तो भला क्यों आते ?”

निखिल ने गिलास हाथ में ले लिया और उसको होंठों से लगाने के पूर्व मन्द स्मिति बिखेर रंजना की ओर देख लिया। वह कुछ शरमा-सी गई और सकुचाती हुई कहने लगी—“एक बात पूछूँ, क्या बतायेंगे आप ?”

निखिल ने दो-तीन घूँट गले से नीचे उतारे और फिर उसकी ओर उन्मुख हो अनुराग भरे स्वर में बोला—“रंजना, तुम मुझसे ऐसा प्रश्न करती हो इस पर मुझे हँसी आ रही है, शायद तुमने अभी मुझे पहचाना नहीं, पूछो ! क्या बात है ?”

“बात और कुछ नहीं, घर में अचानक यह नया काम कैसे हो गया ? सच कहती हूँ कि मुझे बड़ी शर्म लगती है कि बाहर वाले पूछेंगे तो क्या जवाब दूँगी ! माँ (सुभद्रा) को आप ही समझा सकते हैं। उनका स्वभाव तनिक उग्र है, जीजा जी को मैं क्या कहूँ ? मुझे तो नन्हें-नन्हें बच्चों और दीदी पर तरस आता है। मैं सोचती हूँ कि आपको भी उनका ख्याल होगा। परिस्थिति को सुधारना अब आप पर ही निर्भर है। क्या...?”

लस्सी आधी रह गई थी। निखिल के चेहरे पर मुस्कराहट खेल रही थी और वह रंजना के अनुनय भरे आनन पर दृष्टि टिका बीच में ही बोल उठा—“तुम नहीं जानती रंजना कि भइया कहाँ तक पहुँच चुके हैं ? भाभी ने बताया नहीं होगा तभी...”

“क्या...?” रंजना चौंक उठी और जिज्ञासावश उसके चेहरे का रंग उड़ने लगा।

“अमावस वाले दिन मालूम हुआ कि भाभी का एक कंगन खो गया है, अब तुम्हीं बताओ उसे कौन ले जायेगा। बात बिल्कुल खुली है कि भाभी ने कंगन भइया के हवाले कर दिया है। माँ बहुत नाराज हैं और इस पर भी करेला नीम पर जा चढ़ा। माँ पीछे ही रह गईं और पिता जी को सिन्धी चाय वाले का बिल चुकाना पड़ा। इन्हीं सब बातों को लेकर उनको अलग रखने की योजना बनाई गई है। क्या ऐसा थोड़ा ही बना रहेगा ? यह तो एक सच्चा दी गई है, माँ तथा पिताजी की ओर से।”

रंजना गौरपूर्वक निखिल के मुख के भावों का अध्ययन कर रही थी और

कान दे सुन रही थी। अचानक उसे लगा कि माँ आ रही हैं, वह सजग हो गई और निखिल उसके व्यस्तीकरण को देख लस्सी का ग्लास समाप्त कर उठकर खड़ा हो जाने का आयोजन कर बोला—“शाम का समय है, दूकान पर अकेला माधो होगा, अगर जरूरी काम न होता तो मैं आता ही नहीं, अब चलूँगा, फिर बातें होंगी।”

“तो……?”

रंजना की यह संकोच-भरी प्रश्न-सूचक वाणी सुनकर निखिल उसका आशय समझ गया। जाते-जाते वह बोल उठा—“मैं कोशिश करूँगा रंजना, तुम चिन्ता न करो।”

आँगन में फूलमती से उसकी भेंट हो गई और उससे भी दूकान पहुँचने में कहीं देर न हो जाय यह कह वह बाहर पथ पर आ गया।

ब्रिजली के प्रकाश में राजधानी की सड़क चम-चम कर रही थी। निखिल भी उस चकाचौंध में पथ के जन-समुद्र में आ खो गया। कलाई में बँधी रिस्त्वार्च पर नजर धूमी, सात बज गये थे। एक बार मन हुआ कि रिक्शा पकड़े और जल्दी दूकान पर पहुँच जाय। भीड़ अधिक थी। वह चावड़ी तक आया। सामने से ट्राम गुजर रही थी। जल्दी से उस पर सवार हो गया। चावड़ी से जामा मस्जिद तक सड़क पर इतनी रेल-पेल रहनी कि ट्राम को चींटी की तरह रेंगना पड़ता था। एक जगह भीड़ के कारण वह रुक गई; लेकिन निखिल को इसका बोध नहीं हुआ। वह सोच रहा था कि आदमी कभी-कभी अपना महत्व रखने के लिए एकदम सफेद भूठ बोल जाता है। अब सोचता हूँ कि रंजना को मैं भूठा आश्वासन क्यों दे आया? यह सही है कि मैं माँ को समझाकर इसके लिए राजी कर लूँ कि वे भइया को फिर घर में रखलें। लेकिन उनका तो वही धंधा है। दो दिन बाद ही कोई नई बात पैदा हो जायेगी, तब फिर यही होगा! मेरा इसमें कुछ भी कहना-सुनना व्यर्थ है।

इसके बाद ट्राम चल पड़ी। निखिल सोचता रहा और जामा मस्जिद में जाकर जब ट्राम खाली होने लगी तो उससे उतरने वाला अन्तिम यात्री वही था।

×

×

×

रंजना को कुछ-कुछ संतोष-सा हो गया था कि निखिल घर की फूट

आगे नहीं बढ़ने देगा । मैं जानती हूँ कि वह मेरा कहना कभी नहीं टालेगा । देखो, जो कुछ होगा सामने आयेगा, उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिये । क्रोध आदमी को आता तो बहुत जल्दी है, लेकिन शांत धीरे ही धीरे होता है । लेकिन प्यार एक क्षण में महसूस होने लगता है और आजीवन उसका प्रभाव अमिट होता है । प्यार अपना प्रभाव जल्दी ही डाल देता है किन्तु प्रतीति देर में होती है । मैं निखिल को जानती हूँ वह चरित्र का धनी है; किन्तु कर्त्तव्य उसे अकर्मण्य बना रहा है । काश ! मेरा देवता, मेरी पूजा स्वीकार कर लेता तो वह घर स्वर्ग बन जाता । मैं दीदी की सेवा करती, जीजा जी की देखभाल रखती और घर के सभी आवश्यक अंगों की पूर्ति में जुटी रहती तो यह मेरा बहुत बड़ा सौभाग्य था । लेकिन दुनिया में विस्फोट पहले है और शांति पीछे । मैं विस्फोट नहीं चाहती । शान्ति में सुरक्षा है, सहमति है और इन्सानियत है । इन्सानियत से पीछे हटना मनुष्य का धर्म नहीं । मनुष्य एक मिट्टी का लोढ़ा है, नश्वर और नाशवान ! मैं पीछे क्यों हटूँ ? दीदी देवी हैं और जीजा जी एकदम विदेह । ऐसे पात्रों की कटु आलोचना मनुष्य को पाप में डालती है । भावनायें दूतिका हैं और कर्त्तव्य प्रमुख ! मेरा प्यार जीवित है, जाग्रत है और संज्ञा में है । मैं जानती हूँ कि निखिल मेरा है । उस पर सामाजिक नियन्त्रण कभी विजय नहीं पा सकते । वह किसी का हो चुका है और इसीलिए वह उसी में खो जाना चाहता है । किन्तु दुर्भाग्य मनुष्य का दुश्मन है ! वह उसकी साँसों से खेल सकता है और विचारों को पलट सकता है । लेकिन निखिल मेरा उपास्य है और मैं उसकी आराध्या ! जीव देह से कभी पृथक् नहीं रह सकता । दोनों का संगम सृष्टि करता है और सृष्टि पनपती है तभी मानव आगे बढ़ता है । यह कुछ है मनुष्यगत संस्कार जिनसे आदमी मुकर नहीं सकता ! अखिल और शारदा ने एक ऐसी खाई को जन्म दे दिया है जिसको मैं और निखिल जीवन भर पाटते रहेंगे; फिर भी वह न भरेगी । ऐसी है वह खाई जहाँ मनुष्य गिरता है और गिरकर उठ नहीं पाता । उठने का नाम जिन्दगी है और गिरने का नाम पतन । लेकिन पतन चरित्र-भ्रष्टों के लिए है न कि सज्जानों के लिए ! अपनी खुशी प्रधान है, बाकी तो यह सारी दुनिया दुःख और सुख के पहियों पर चलती ही रहती है । काश ! निखिल मेरा हो पता तो मैं जीजा जी और दीदी के

जीवन को बिल्कुल बदल देती, या तो वे मेरे अनुकूल होते अथवा मैं उनके आदेश पर चलने लगती। यह मेरा परम सौभाग्य होता ! भगवन् ! वह दिन शीघ्र लाओ, जब मैं बिगड़ी को बना लूँ और मेरा शरीर चाहे क्षत-विक्षत हो जाये।

नीले गगन में रुपहले सलमे-सितारे टँक रहे थे और दूध-गंगाएँ रावत हाथी के लिए मार्ग स्पष्ट कर रही थी। रात सकुचा रही थी, तारे झिलमिल रहे थे और चाँद मुस्कुरा रहा था। रजत ज्योत्स्ना धरती को शांति दे रही थी; मगर उद्गार व्याकुल थे। रंजना की स्थिति ऐसी ही थी। वह सुधबुध खोकर भिट जाना चाहती थी और भिटकर फिर पनपने की आशा उसे बल दे रही थी।

: ६ :

रानी नये विचारों की तरुणी थी। विचारों की स्वतन्त्रता, रुचि की पूर्णता और हावी की प्रमुखता ने उसे अन्धा बना दिया था। वह न घर की रही और न घाट की ! माँ उसे प्यार करती थी, बाप दुलार करता था और भाई निखिल स्नेह बरसाता रहता था। तभी वह स्वेच्छाचारिणी बन विचरती रहती। वह गुप्त कार्य करने में अधिक पटु थी। प्रोफेसर जीवनलाल के वह पीछे-पीछे घूमा करती थी। वह बीसवीं सदी की साक्षात् अभिनेत्री थी, अत्यन्त कुशल और बहुत प्रवीण। वह शारदा से डरती थी, तभी पथ के रोड़े को नेस्तनाबूद कर देने की सोच, उसने अपना कौतुक रचा था। वह सालगिरह के दिन रंजना के घर नहीं गई; क्योंकि माँ की आज्ञा न मानना, उसकी राह को रोकना था। तीन दिन बीत गये। चौथे दिन जब आद्रा नक्षत्र के बादल आकाश पर मँडरा रहे थे, लगता था, अभी मूसलाधार वर्षा होगी। हवा बिल्कुल बंद

थी । तभी वह रंजना के घर गई और फूलमती के सामने पहुँच उसके प्रश्नों का उत्तर देती हुई कुछ लपेट की बातें करने लगी—“आप नहीं जानती माँ, भइया ने क्या-क्या किया है और भाभी की जिम्मेदारी उस पर कहाँ तक है ? कंगन खो गया तब।”

“हाँ, वह तो निखिल ने बताया था ।” रंजना ने रानी की बात का समर्थन किया ।

और रंजना आगे कहने लगी—“यह सब तो मैं जानती हूँ वहन ! हमें बनने की ओर ध्यान देना है न कि बिगड़ने की ओर । घर में क्या कुछ हुआ यह तुम जानती हो, उसकी व्याख्या से पेट नहीं भर सकता । समस्या सुलझाव चाहती है और सुलभाव क्या है उसे हम, तुम और सबको सोचना है, कि खाई पाटनी है, आगे बढ़ानी नहीं ।”

रानी विक्षोभ से भर आई और मुख-मुद्रा को कृत्रिमता में रँग कर कहने लगी—“रंजना वहन, तुम मेरी भावी भाभी हो इसको सभी जानते हैं । फिर तुम से दुराव क्यों ? मैं तो साफ-साफ कहूँगी, चाहे तुमको बुरा लगे, चाहे माँ को; भइया को सुधारने के लिए ही माँ ने यह नाटक रचा है । इसमें किसी का विरोध करना भइया और भाभी को पतन में डालना है । मैं उत्थान चाहती हूँ और इसीलिए चुप हूँ । समय किसी की राह नहीं देखता, मनुष्य उस पर निर्भर है । भइया सम्भल जाएँ, गृहस्थी सुधर जाये, बस यही चाहिये मुझको, माँ को और पिता जी को ! माँ ऐसी नहीं हैं जो अपने घर में ही हड्डी डालकर कुत्ते लड़ायें ! वे जितनी सख्त हैं, उतनी ही नरम भी । यदि उनका यह अस्व भी अर्थ सिद्ध हुआ तो फिर बात आगे बढ़ेगी । लेकिन मैं पर्दा डालना चाहती हूँ और वह तभी सम्भव है जब भइया अपनी आँखें खोल लें ।”

रानी कहती जा रही थी और फूलमती उसको ध्यानपूर्वक सुन रही थी । यही स्थिति रंजना की थी ।

फूलमती के पास कोई तर्क नहीं था जो वह रानी की बात काटती और रंजना ही ऐसे अस्त्रों का प्रयोग करना जानती थी जो अचूक और तर्क के सम्मुख वितर्क बनकर खड़े हो सकें । दोनों चुप रहीं और रानी कहनी गई—“आखिर और कौन-सा रास्ता था जिसकी आड़ लेकर भइया को सुधारा

जाता ? पता नहीं, कितनी मिलनसारिता है उनमें जो उन्हें इन्सानियत से को
दूर लिए जा रही है और वे प्रसन्न हैं कि दुनिया उन्हें मानती है । सच कहते
हैं माँ, उनकी भावनाएँ ही उनकी दुश्मन हैं । मनगढ़न्त से किसी का पेट न
भरता, पेट भरता है काम करने से और मेहनत करने से । और वे, केवल को
कल्पना से पेट भर लेना चाहते हैं तो इसके लिए क्या किया जाये । मैं तो
हैरान हूँ ।”

रानी इसी भाँति एक-एक घटना का सविस्तार वर्णन करती रही, जिससे
रंजना चौंक-चौंक उठती थी और फूलमती के कान खड़े हो जाते थे । देर तक
वह वहाँ बैठी रही । निमन्त्रण में न आ पाने वाली अपनी मजबूरी का विवरण
जो कल्पित था, उसको यथार्थ का रूप दे, वह उठ खड़ी हुई, और जाते-जाते
कहने लगी—“अब जाऊँगी माँ, देर हो रही है ।”

रानी चली गई और जब वह घर पहुँची तो शारदा आँगन में बैठी माधु
को दूध पिला रही थी और विनोद ऊपर आँगन में पड़े हुये लोहे के जाल पर भी जँचाव
खड़ा अपनी बहन को पुकार रहा था—“मादुली ! ओ मादुली !” रानी के पाँ
जीने की ओर बढ़े तब तक उसकी दृष्टि शारदा से संगम कर बैठी । शिष्टाचार
निर्वाह चाहता था; इसलिए रानी उसकी मर्यादा को भंग न कर सकी । सरल
मुद्रा और सहज स्वर में शारदा के पास पहुँचते ही उसके मुँह से निकल गया—रहता ।
“भाभी ! क्या मुझसे भी नाराज हो ? तुम ऊपर नहीं आई ? और मैं यह डरते
रही कि अभी माँ का गुस्सा ताजा-ताजा है वह ठण्डा होने पर ही अच्छी । शा
रहेगा । तभी मैं नहीं आ पाई । सहेली के आजाने का तो सिर्फ एक बहाना था अपने स्वा
जो माँ ने बताया था । उन्हीं के डर से मैं गोपेश की सालगिरह में नहीं ग
थी । आज गई थी और अभी वहीं से आ रही हूँ । मेरी ओर से अपने मन में अवकाश
मलाल मत लाना । मैं तुम्हारी थी और अब भी वही हूँ, जैसी पहले थी, मन में उसका
छोटा करो भाभी । बड़ों की आदत बिगड़ने की होती है और उसको सह जान
ही छोटी की क्षमता का प्रतीक है । तुम में बड़ी समाई है । मैं तुम्हारा आद
करती हूँ । बोलो भाभी, कहो न, तुम तो चुप बैठी हो !”

शारदा के अधर हिले और दाँतों की पंक्ति बाहर निकल आई । शालीनता
के पुट से ओत-प्रोत वाणी में वह बोली—“अरे पगली ! तुझे मैं कुछ कहती

हूँ क्या ? तू तो मेरी रानी बिटिया है—जैसी छोटे पर थी वही अब ! ऐसी बातें नहीं सोचा करते !” यह कहकर शारदा उठ खड़ी हुई और रानी का हाथ पकड़ कमरे में लीवा लाई । वहाँ पर लगभग एक घण्टा बीत गया और दोनों की दुनियादारी चलती रही ।

जब रानी ऊपर आई तो सुभद्रा की आँखें तनी हुई थीं । आँखों में बल पड़ रहे थे और नथुनों में फुरकन हो रही थी ।

जिसने × × ×
 अब फूलमती को रानी की बातों से यह प्रतीति हो गई थी कि अखिल को घर से अलग नहीं किया गया है । वह अपनी जुम्मेदारियों को महसूस करते-करते और मन लगा कर कमाने का प्रयत्न करे । इसीलिये यह तरकीब निकाली गई है ।

इस तरह फूलमती को संतोष हो गया और यही बात उसने गयाप्रसाद को माल पभी जँचादी ।

दिन सप्ताह बन गये और सप्ताह भी आगे बढ़ने लगे । इस बीच शारदा प्लानेटा के पास नहीं आ पाई । क्योंकि पहले से अधिक गृहस्थी का उत्तरदायित्व सरल अब उस पर आ पड़ा था । अखिल हमेशा उसे प्रसन्न रखने की कोशिश करता गया—रहता । और जहाँ से भी जो थोड़े-बहुत रुपये मिल जाते उनको उसके हाथ डरती पर लाकर रख देना । किसी प्रकार घर की गाड़ी ईंचती-बसिटती चल रही अचूकी थी । शारदा किसी के आगे हाथ नहीं पसारना चाहती थी । वह दिन-रात अपने स्वामी की मंगल-कामना में लगी रहती । घर का काम और बच्चों की देख-रेख में ही उसका सारा समय व्यतीत हो जाता था । जब कभी थोड़ा-सा अवकाश मिलता तो वह सुभद्रा के पास जाकर बैठ जाती और गृहस्थी के कामों में उसका हाथ बटाने लगती; किन्तु सुभद्रा उससे सीधे मुँह बात नहीं करती थी ।

माँ की भाँति रानी मुँह की कड़वी तो न थी; परन्तु वह शारदा को पता नहीं गैर क्यों समझती थी । शायद इसलिए कि उसका पैर कभी घर में नहीं टिकता था । कभी इस सहेली के यहाँ कभी उस सहेली के यहाँ और कालेज आना-जाना तो लगा ही रहता था । माँ सुभद्रा को वह जो बता देती वह उस पर विश्वास कर लेती; लेकिन शारदा उसकी स्वेच्छाचारिता को भली-भाँति

समझती थी। धीरे-धीरे रानी इस बात को ताड़ गई और तभी से उसके मन में उपेक्षा ने घर कर लिया। अब शारदा नीचे रहती थी इसलिए रानी अपने लाल पूर्णतया स्वतंत्र थी। कभी-कभी वह उसके पास आ कर बैठ जाती और लल्लो-चप्पो करने लगती।

एक दिन माँ के बुलाने पर शारदा अपने पीहर गई। फूलमती को उससे मुँह से यह सुनकर बहुत सन्तोष हुआ कि अखिल अब कमाने की ओर ध्यान देने लगा है। वह पुत्री को समझाती रही और जब वह चलने को उद्यत हुई तो रंजना से कहने लगी—“जाओ बेटी रंजना, अपनी दीदी को भेज आओ।”

इस तरह रंजना शारदा के साथ उसके घर पहुँची। नीचे तनिक देर ठहरा कपड़े बदल कर शारदा बहन के साथ ऊपर आ बैठी। सुभद्रा को यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगा। वह रंजना को बहू के रूप में स्वीकार करने को तैयार थी लेकिन इस शर्त पर कि वह शारदा जैसी पति-परायणता पर न उतर आए और आते ही घर लुटाने लगे। पहले सुभद्रा इतना नहीं सोचती थी जितना किना, मुझे अब। रंजना को सामने देखते ही उसके मन में विचार उठने लगते कि यदि रंजना निखिल के गले बँध गई तो वह घर में सबसे पहले बहन का पक्ष लेगी और अखिल निकम्मा होता जायेगा; क्योंकि उसकी गृहस्थी का पेट रंजना चोरी चोरी भरती रहेगी। अगर पहले व्याह हो गया होता तो मजबूरी थी; लेकिन क्या अब जान बूझकर आग से नहीं खेलना है।

सुभद्रा ने रंजना से दो-चार रूखी-सूखी दुनियादारी की बातें कीं जिससे रंजना इस तथ्य पर पहुँची कि दीदी के सम्पर्क के कारण सुभद्रा मुझसे घृणा करेगी—“अकेली लगी है। वह उसके पास न बैठकर रानी के कमरे में चली गई। रानी तब आदमनट भी न कद आइने के सामने खड़ी साड़ी का पल्लू सम्हाल रही थी, फिरोजी जाजेंट की साड़ी थी और वैसा ही ब्लाउज, सिर के बाल मुक्त थे और वे काले घुँघराते।” कुन्तल उसके कटि-प्रदेश तक झूम रहे थे। रंजना ने जाते ही पीछे से उसकी आँखें बन्द कर लीं और रानी हँसी के मिस अपनी आँखों से उसके हाथों को हटाती हुई बोल पड़ी—“मैं जान गई, रंजना है।”

रंजना खुल-खुल कर हँस पड़ी और कहने लगी—“कहाँ की तैयारी हो रही है?”

मन है "मेरे एक मित्र हैं, भइया के वे बड़े भक्त हैं। अरे तुम जानती नहीं, प्रोफेसर
 लाल जो लास्ट ईयर मुझे पढ़ाने आते थे। भइया से उनकी इतनी
 पढ़ता है कि वे मुझे अपनी शिष्या न समझ कर बहन समझते हैं और बरा-
 का व्यवहार करते हैं। आज उनकी वर्षगांठ है, वहीं जा रही हूँ।" रानी
 दी-जल्दी यह सब कह गई और फिर कुछ सोच तनिक ठहर कहने लग
 र ध्या— "निखिल भइया तो शाम को जायेंगे और शायद बड़े भइया पहुँच चुके
 यत हूँ क्योंकि वे मौजी जीव हैं ! चार बज रहे हैं, मुझे जल्दी ही पहुँच जाना
 ओ ! हिये !"

र ठहा रंजना सुनती रही। वह कहती भी तो क्या ! जो सुन रही थी वह उसके
 बिल्कुल पार्क से दूर की बात थी। रानी ने जल्दी से अपना टूँक खोला, उसमें से एक
 र थी टी प्लास्टिक की डिबिया निकाल अपने गोल्डेन पर्स में डाल ली। फिर घड़ी
 र आगे ओर दृष्टि उठा यह कहती हुई कमरे से बाहर निकल आई— "क्षमा करना
 रना बिना, मुझे देर हो रही है नहीं तो अभी थोड़ी देर तो बैठती ही !"
 क यदि रानी चली गई और सुभद्रा शारदा के पास से उठ, छज्जे पर जा, एक
 क्ष लेगीसिन से बातचीत में लग गई। यह देख शारदा भी वहाँ बैठे न रह सकी।
 चोरों वह नीचे आ रही थी, तो जीने में उसे निखिल मिला। वह पूछने लगा—
 लेकिन क्या कर रही है भाभी ?"

"वह तो कहीं गई है।" शारदा का उत्तर बहुत छोटा था और बिल्कुल
 जिससे। वह नीचे उतरने लगी और निखिल सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ बड़बड़ाने
 आ रहा— "अकेली ही चली गई रानी। चार बज गये थे तो क्या वह घर में एक
 आदमनट भी नहीं रुक सकती थी ? मैंने कहा था कि अगर मैं चार बजे तक न आ
 वें तो क्या तो शाम को प्रोग्राम के समय जरूर पहुँच जाऊँगा, शायद इसलिए चली
 घरातें।"

उसकी सीढ़ियाँ पार कर जब निखिल ऊपर आया तो चौखट पर रंजना आ रही थी।
 यों निखिल ने उसकी ओर देखा, उसका मुँह बन्द हो गया और वह उसकी बड़ी-
 नी आँखों को निहारने लगा।

री हो रंजना एकाएक निखिल को सामने देख चौंकती हुई बोल उठी— "अभी
 प नहीं गये दावत में, रानी बहन कह रही थी कि शायद आप शाम को

जायेंगे ! अभी-अभी तो वह गई है ।”

“हाँ रंजना, सोचा तो था, कि शाम को ही जाऊँगा; लेकिन दूकानदारों ने सन्नाटा था इसलिए चला आया कि रानी के साथ ही वहाँ पहुँच जाऊँगा। वहाँ घूमकर कहाँ हैं ?” निखिल की दृष्टि बात कहने के साथ चारों ओर घूम गई ।

“वे बाहर के छज्जे पर खड़ी किसी से बातें कर रही हैं !” यह कहकर रंजना दो सीढ़ियाँ उतर गई ।

तब निखिल दाहिने हाथ से जीने की दीवाल पकड़ कर खड़ा हो गया। उसके स्वर में मिश्री घुल गई थी, वह धीरे-धीरे कहने लगा—“ऐसी भी जल्दी है रंजना, मैं आया और तुम चल दीं । आओ दो मिनट बैठो, मैं भी जा ही रहा हूँ ।”

रंजना संकोचवश उसको कुछ उत्तर नहीं दे पाई और निखिल फिर लगा—“जहाँ पर मन का मेल हो, वहाँ किसी प्रकार की शंका नहीं चाहिये । मैंने जो कहा है, भइया के लिये वह सब कर रहा हूँ, और प्रयत्न काम में बदलने में समय लगता है । बड़ा मुश्किल है, बिगड़ते देर नहीं लगे और बनाने में दाँतों पसीना आ जाता है । लेकिन मैं इस खाई को पाटूँगा रंजना, जिसमें तुम प्रसन्न रहो !”

रंजना वहीं पर घूमकर खड़ी हो गई और मन्द-मन्द हँसी बिखेरती धीरे-धीरे कहने लगी—“अच्छा, तो मुझको प्रसन्न करने के लिए आप सब कर रहे हैं और करना चाहते हैं, और वैसे यह आपका फर्ज नहीं है !”

निखिल भी हँस पड़ा और हँसते-हँसते बोला—“तुम बहुत वाक-पटु हो रंजना, मुझे तुम्हारा हर अभिनय अपनी ओर खींच लेता है । जहाँ तक फर्ज का मामला है, उसके साथ पूरे अंशों में दुनियादारी भी जुड़ी रहती है ! मैं नहीं हूँ, क्या प्यार का कुछ भी अस्तित्व नहीं है ?”

“है क्यों नहीं ?” रंजना यह कहकर मुस्कराई और उसकी दृष्टि अपनी दृष्टि मिला कहने लगी—“यह आप स्वयं अपने से ही पूछ लें । मैं नहीं कहूँगी ! अच्छा, नमस्ते ! अब चलती हूँ, माँ आ रही होंगी और दीदी मेरी प्रतीक्षा कर रही होंगी ।” यह कहते-कहते रंजना ने उस के दोनों हाथ जोड़ दिये और सीढ़ियों से नीचे उतरने लगी ।

“सुनो रंजना !” निखिल ने उसे पुकारा । उत्तर में रंजना ने केवल एक धमकती आँखों से घूमकर उसकी ओर देख लिया । वह मुस्करा रही थी और निखिल उसकी मुस्कराहट पर प्रसन्नता के दूने वेग से अपने मन को आलोड़ित कर उठा था ।

×

×

×

आज रंजना बहुत प्रसन्न थी । उसे लग रहा था कि निखिल उसका है । वह उसकी प्रत्येक बात को बहुत महत्व देता है, ऐसी स्थिति में केवल जीजा जी ही कल्याण नहीं है, यह सभी के लिये मंगल-प्रतीक है । मा का स्वभाव वैसा ही है जैसा कर्कश हो; लेकिन निखिल की वाणी देव-तुल्य है । वह मेरे सपनों का राजा है और मन का देवता ! कितना ध्यान है उसे मेरी कही हुई बात का ! वह एक कुशल नायक है जिसकी प्रत्येक भूमिका मेरे रोम-रोम पर अपना प्रभाव डाल देती है । मेरे हृदय में उसके लिए बहुत बड़ी गुंजाइश है जो शायद और किसी के लिए नहीं !”

और घर में कपड़े बदलता हुआ निखिल सोच रहा था कि रंजना कितनी प्यारी है—एक सुकुमार कुसुम की तरह ! मैं उससे बार-बार झूठ नहीं बोल सकता । एक बार माँ पर-काबू पा जाऊँ, तो भइया को घर में फिर शामिल कर लिया जाय । उसके बाद जो होगा, वह होता रहेगा, मेरा वचन पूरा हो जायेगा । आज ही रात को मैं माँ से कहूँगा, जहाँ तक होगा, परिस्थिति को ध्यान में रखकर ही रहूँगा । रंजना मेरे मन की देवी है और देवी को नाराज नहीं किया जा सकता !

अषाढ़ का चमकता हुआ सूरज पश्चिम की ओर बढ़ रहा था । बाहर सड़क पर उमस थी और हवा कुछ रूठ गई थी जिससे नये कपड़े पहने हुए निखिल सीने से तर-बतर हो रहा था । मार्ग में भी निखिल के सोचने का क्रम नहीं टूटा था । इस समय उसके सम्मुख यह समस्या थी कि रंजना मुझ पर कितना विश्वास करती है और मैं उसके कोमल विश्वास को झुठला नहीं सकता । मैं उसे प्रतिकार चाहता है, लेकिन किसी पदार्थ का नहीं, केवल मन के व्यापार का जो निःसीम है, अदृश्य है, और अनुभूतियों से उसका गठबन्धन है । काश ! सारे जीवन में वह दिन शीघ्र ही आ जाता, जब मैं रंजना जैसी पत्नी पाकर, अपने भाग्य को सराहते न थकता ।

रास्ता तय हो रहा था। विचारों का तारतम्य अनवरत रूप से बढ़ता था और निखिल को यह आभास भी नहीं हो पाया कि वह कितनी दूर आया है। सामने सहसा उसकी दृष्टि पड़ी और वह चौंक उठा। प्रो. जीवन लाल का घर दूर से दिखाई दे रहा था। वह सोचने लगा, अरे! का कुछ पता ही नहीं चला। सोचा था अजमेरी गेट पहुँचकर का बैठूँगा; लेकिन पैरों की गाड़ी शरीर को इस नई दिल्ली तक ढो लाई और मालूम भी नहीं हुआ, ताज्जुब है।

: १० :

भावनाओं में बहने वाले भावुक पुरुष का पुत्र भी प्रायः भावुक ही है। प्रोफेसर जीवन लाल भी अपने पिता के एक ऐसे ही पुत्र थे। प्रो. आजकल के नवयुवकों की दृष्टि में एक सनक-सी समझी जाती है। जीवन पूर्णाशों में एक अध्यापक थे। साहित्य में उनकी रुचि थी और किताबों से ऐसे कीड़े थे कि दिन थक जाता, रात सो जाती, किन्तु वे नहीं थकते थे।

जीवन लाल प्रोफेसर रामानन्द के छोटे पुत्र थे। बड़े भाई का ही निधन हो गया और अब जीवन ही उनकी आँखों की ज्योति बना हुआ वह उनके जीवन की ज्योति-पिंड था जो धीरे-धीरे निखरता जा रहा था।

जीवन लाल ने अभी तक व्याह नहीं किया इसका एक कारण था। ऐसा मत था कि व्याह अभी उसके विकास में बाधा डाल सकता है। मन प्रेरणा देगा तभी यह कार्य सम्पादित हो सकता है। उसकी अवस्था छ वर्ष की थी। देह खूब भरी हुई, गोरे शरीर पर भूरे, घुँघराले लम्बे बाल बहुत ही आकर्षक बना देते थे। धोती, चप्पल और कुरता यह लिबास घर-भीतर और कालेज सब जगह चलता था। कभी भूले-भटके वह

वाँधता और सूट पहन लेता था। वह हृष्ट-पुष्ट उठती उम्र का जवान था, जो अनायास ही सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेता। रानी उस पर मोह गई। उसका सब से पहला कारण यही था।

जीवन अखिल का मित्र था। दोनों ने साथ-साथ बी० ए० किया था। इस कारण मैत्री बढ़ती गई। जीवन के घर में केवल दो प्राणी थे—बाप और बेटे। खाना रसोइया बनाता था और वर्तन महरी मलती थी। बाकी घर के और आवश्यक अंगों की पूर्ति बेचारा रसोइया ही दिनभर दौड़-दौड़ कर किया करता था। रामानन्द जैसी साधु प्रकृति के सरल और सीधे व्यक्ति थे वैसे ही अपनी जिन्दगी की मस्त ध्वनियों पर प्रगति के गीत गाता हुआ जीवन मुस्करा रहा था। दोनों बाप-बेटे स्वतंत्र थे।

रानी जब हाई स्कूल की छात्रा थी तो उसको घर पर पढ़ाने के लिए सबकी सम्मति जीवन के लिए ही हुई थी। जीवन निःशुल्क रानी को पढ़ाता था। अतः रानी भी पढ़ने में ढील डालती थी। इस वर्ष उसने इण्टरमीडियेट की परीक्षा पास की और कालेज खुलते ही थर्ड इयर में पदापर्ण करना चाहती थी। नारी एक ऐसी शक्ति है, जो एक बार समस्त ब्रह्माण्ड को विचलित कर सकती है। रम्भा और मेनका आदि अप्सराएँ जब विश्वामित्र जैसे कर्मठ योगी की समाधि भंग कर सकती हैं तो जीवन का क्या अस्तित्व ! उसने रानी की दृष्टि में प्रहचान ली; किन्तु नीति में परिवर्तन कर उसे नाराज नहीं होने दिया। जीवन प्रहिंसावादी व्यक्ति था और अहिंसा के सामने हिंसा अपना घूँघट कभी नहीं खोलती है। यही कारण था कि उसे क्रोध बहुत कम आता था और यदि कभी दमाग गरम हो गया तो दो-चार क्षण के बाद ही वह उस बात को भूल जाता था। इसलिए वह फूल-सी कोमल रानी के जी को दुखाना नहीं चाहता था। उसका बाह्य-व्यवहार रानी को बहुत प्रिय लगता था; लेकिन अन्तर को टोलने कौन जाता है ? उस अथाह अन्तराल में, पता नहीं क्या-क्या छिपा हुआ है, जिसकी थाह लेने की क्षमता किसी में नहीं !

जीवन रानी को प्यार करता था। लेकिन दोनों के पथ अलग-अलग थे। एक वासना को महत्व देती थी, वह इन्द्रिय-लोलुप थी शायद इसलिए, और सारा मित्र की बहन को अपनी कनिष्ठा समझ, उसे बहलाने और भटकाने का

प्रयास कर रहा था। वह चाहता था कि मुझे रानी से कुछ कहना न पड़े। एक दिन यह स्वयं ही स्वीकार कर ले कि वह मेरी धर्म-बहन है।

इस भाँति जीवन आने वाले समय की प्रतीक्षा कर रहा था और उसके लिए उद्विग्न थी, आकुल तथा त्रिलविला रही थी।

रानी जब आग्रह करती तो जीवन उसके साथ रेसकोर्स जाता, क्लव और चल-चित्र देखता था। आधुनिक चमचमाहट रानी को बहुत भाती थी। इसका कभी विरोध नहीं करता। ऐसी थी जिन्दगी रानी और जीवन दोनों ही अपने रूपों के परिवर्तन में व्यस्त थे।

आज जीवन की वर्षगाँठ थी। उसके मित्रों की भाषा में 'वर्थ-डे' खुशी के मौके पर रामानन्द ने हमेशा की भाँति इस बार भी एक प्रीति का आयोजन किया था। उसमें उनके सभी व्यवहारी और परिचित आदि थे। आज भी एक होटल की ओर से प्रबन्ध था और मकान की-खुली मेजें तथा कुर्मियाँ लग रही थीं। खाने की डिशें (तश्तरियाँ) मेज-पोखे सजा दी गई थीं और उन पर रँग-विरंगे भीने आवरण डाल दिये गये थे।

बाहर फ्लैट के प्रमुख द्वार पर विजली के रंगीन बल्ब जगमगा रहे। उसमें प्रकाश लहरियों में दौड़ता फिरता था। लगता था कि बन्दनवार हिल रहे हैं। स्वागतम् और शुभागमन का काम भी विजली के रंग-विरंगे से ही ले लिया गया था। पूरा फ्लैट विद्युत प्रकाश से जगमगा रहा था। इस पर बज रहा था लाउड-स्पीकर मीठे-मीठे स्वरों में। अभ्यागतों को बाप-बेटे हाथों-हाथ ले रहे थे।

वहाँ का सबसे पहला अतिथि अखिल था, जिसको उक्त अवसर पर रामानन्द की कविता-पाठ करने के लिए, रामानन्द ने दोपहर को ही बुला लिया था। इसके बाद उस समय उसने भोजन वहीं किया और जीवन तथा रामानन्द साथ आयोजन के कार्यक्रम में व्यस्त रहा। दूसरी अतिथ्या रानी थी जो चल रहे साढ़े चार बजे, जीवन के घर आ गई थी। इन दोनों के बाद फिर क्रम गया। लगभग साढ़े पाँच बजे निखिल आया और फिर आने वालों की बढ़ने लगी।

नियत समय पर पिता ने पुत्र को तोहफ़ा दिया और फिर वक्ष से लग

न पहे चूम लिया। तत्पश्चात् उपहारों की वाढ़-सी आगई। कोई फूल-माल, कोई दर-सी पुस्तक, कोई अलवम और कोई सेन्टेड हैंडकर्विफ (सुगंधयुक्त रुमाल) और किसी-किसी ने पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार क्रिशमिश के कार्डों की तरह वली (प्यारे) कार्ड उपहार में दिये।

छत पर हँसी गूँज रही थी। हवा में सिहरन भर आई थी; लगता था रात की रानी ने शृंगार करने के लिए निमन्त्रण दे, नीले शून्य में शशि धुला लिया था। हँसिया की धार जैसा टेढ़ा मुस्कराता चाँद, जब अम्बर नीले सागर में आकर तैरने लगा, तो दूधिया सितारे दूने वेग से जगमग ने लगे—ठीक अंधेरे में जुगनू की तरह। लाउड-स्पीकर चलचित्र-जगत् का प्रीति-प्रिय संगीत प्रसारित कर रहा था और छत दूनी रोशनी पा निखर उठी। वह एकदम गोरी हो गई थी—एक तो रजत-चन्द्रिका दूसरे विद्युत प्रकाश। कृतिक और अप्राकृतिक दोनों दृश्य सामने थे और दावत चल रही थी। मेजों ज-पोश गिलास बजते, चम्मच खनकते और प्लेटें परस्पर टकरा-टकरा कर बज-बज ये थीं। नमकीन और मीठे की तश्तरियाँ रिक्त होते ही अभ्यागतों के मुख, सफेद वर्दी पहने, होटल के वैसे पेय पदार्थ ला-लाकर उपस्थित वार होने लगे।

खूब हँसी-खुशी के साथ दावत पूरी हुई। फिर इलायची, पान, सुपारी हाथर सिगरेट आदि के दौर चले।

तो को अखिल जा चुका था। भीड़ अब धीरे-धीरे समाप्त हो रही थी। निखिल रानी की प्रतीक्षा इसलिये नहीं की क्योंकि आठ बजने जा रहे थे और परान बन्द करने का समय हो रहा था। रामानन्द अब तक व्यस्त थे। लेकिन लिया धन उकताकर अपने कमरे में आ, आरामकुर्सी पर बैठ गया था। उसके रामानों हाथ कुर्सी के हत्थों पर थे और वह कुछ थका-थका-सा बैठा पूरी रफ्तार थी जोचल रहे पँखे की वायु का सेवन कर रहा था।

क्रम “वाह साहब, आप बहुत अच्छे हैं!” कहती हुई रानी जीवन के पास आकर नों की गई और आते ही अपना पर्स खोलते-खोलते बोल उठी—“अभी तक मेहमान रहे हैं, और आप यहाँ बैठे हैं; बहुत जल्दी थक जाते हो?”

से लगा जीवन चुप था। उसके होठों पर हँसी की रेखा दौड़ रही थी। रानी ने

पर्स से प्लास्टिक की डिविया निकाली और उसमें से राने की चैन लगी। क्वालिटी की रिस्ट-वाच जीवन के हाथ में बाँध दी।

जीवन रानी का मुँह देखने लगा। इस पर वह कुछ चंचल होकर लगी—“आप तो चौंक गये, क्या यह नाचीज तोहफा अच्छा नहीं लगा ?

“अच्छा लगा रानी, लेकिन...”

“लेकिन क्या, कहिये न, आप चुप क्यों हो गये ?” रानी के स्वयत्ता थी, और था थोड़ा-सा कम्पन।

जीवन तथ्य को समझता था। उसको पता था कि रानी ने किस इस घड़ी की व्यवस्था की थी। लेकिन उसने पहले भी नहीं टोका था। समय भी बात बनाता हुआ बोला—“तुम बहुत बड़ा हृदय रखती हो। अच्छा है, आदमी को महत्वाकांक्षी होना ही चाहिये !”

तब रानी आनन्दातिरेक से भूम उठी और उसी प्रवाह में थोड़ा-सा का पुट लेकर साड़ी के छोर को ऐंठती हुई, कहने लगी—“एक प्रार्थना है, तो नहीं करेंगे आप ?”

“नहीं रानी, तुम कैसी बातें करती हो ? कहो, कोई खास बात है ?”

रानी जीवन को सर्वथा अपने पक्ष में पा, तनिक हँसकर बोल उठी—“खास ही समझिए, अगर आम होती तो फिर यह भूमिका बाँधने की कता न पड़ती।”

“क्या ?” जीवन ने पूछा। और रानी कहने लगी—“यह सिर्फ आप और मैं। लेकिन तीसरे व्यक्ति के पूछने पर आपको यही कहना होगा, रिस्ट-वाच मेरे एक पुराने मित्र ने भेंट की थी। मैं अपने उद्गारों को पाई, इसीलिए प्रवाह में बह गई। अब स्थिति आपके सामने है—आप और यह कमरा !”

जीवन हँस पड़ा। उसके मुँह से निकल गया—“यह तो एक बड़ी सी बात है रानी ! मैं भला तुम्हारी बात टाल सकता हूँ ?”

“मुझे आप पर नाज़ है, मैं तो अपने को आपकी कनीज समझता हूँ। यह कहते-कहते रानी कुछ शरमा गई। उसकी पलकें नीचे झुक गईं। रामानन्द की आवाज़ आई। वे जीवन को घुला रहे थे।

“आया पिता जी ।” कहता हुआ जीवन बाप के पास चल दिया और रानी धीरे-धीरे जीने से नीचे उतर आई ।

×

×

×

रानी चली गई और जीवन पर एक ऐसी छाप छोड़ गई; जिससे वह सारी बातें भूलकर इस तथ्य पर पहुँचने की कोशिश करने लगा कि आखिर राज क्या है ? उपहार में मुक्त को घड़ी देना रानी के लिए कोई नई और बड़ी बात नहीं । लेकिन वह ऐसा क्यों कहती है कि तीसरा आदमी इस भेद को छू भी न पाये । यह तय है कि रानी ने यह काम मां-बाप की अनुमति के बिना किया है । प्यार ने उसकी अन्तर्ज्योति को ढँक लिया है । उसकी आँखों पर स्वार्थ-लिप्ता की चरवी छा गई है । तभी उसने घर वालों को धोखा देने की कोशिश की और उसमें सफल हो गई । अब समझा कि कल वह कोहनूर ग्रानामिन्ट हाउस क्यों गई थी ! बड़ी विचित्र है जगत की रीति, जिसमें स्त्री पानी की तरह पतली होकर बहने लगती है और कभी असीम सागर की भाँति गम्भीरतम हो जाती है । रानी में वचपना है, और जिसने ज़िन्दगी में एक भी ठोकर न खाई हो, वह इन्सान नहीं है । ऐसे ही रानी इन्सानियत को नहीं तोल पाती है । तभी कदम-कदम पर फिसल पड़ती है । जवानी का जोश अन्धा होता है और ज्वार बहरा । फिर उसके सम्मुख यह शूँगी सृष्टि भला कैसे वाचाल हो सकती है ? लेकिन मेरा पथ निश्चित है । एक दिन रानी को इन सब कृत्यों के लिए सोचना अवश्य पड़ेगा । अभी वह हवा के रथ पर सवार है और हवाई घोड़े छलांगें मार रहे हैं । एक बार जहाँ वह आकाश से गिरी तो फिर ठोकर लगेगी और उसे जमीन-आसमान एक नज़र आने लगेंगे ।

रात की बारात विदा होने जा रही थी । कूँच के नक्कारे बजने लगे थे और जीवन करवटें बदल रहा था । वह सोच रहा था और प्राची के आकाश में पी फटने के लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे ।

: ११ :

कालेज खुल गये थे जिससे रानी के सम्मुख अब कोई प्रतिबन्ध नहीं गया था । छुट्टियों भर वह माँ से कोई न कोई बहाना कर मुश्किल से बाहर निकल पाती थी । लेकिन अब उसकी पौ बारह थी । जितना समय वह काम में देती थी उससे कहीं अधिक सहेलियों और जीवन को । शारदा पहले भी जानती थी और अब भी देखती थी, किन्तु वह मौन थी । वह जानती कि रानी के प्रति माँ से कुछ भी कहना, स्वयं अपने ही लिए काँटे बोना है । रानी चंचल-स्वभाव की लड़की है, उससे भी इस सम्बन्ध में कुछ कहना-सुनना व्यर्थ ही होगा ।

किन्तु शारदा को इतने से सन्तोष नहीं हो पाता था । रानी उसके लाल लाल लाज थी और लाज आवरण में ही शोभा देती है । रानी पाश्चात्य प्रणाली पर चल रही थी । उसे न तो भविष्य के लिए कोई चिन्ता थी, और न वर्तमान का ही ध्यान था । वह वही चली जा रही थी अपने प्रवाह में; क्योंकि बाह्य शक्ति से अधिक उसकी माँ ने उसे स्वतन्त्रता दे रखी थी ।

यों तो शारदा अखिल से भी घर की ऊँची-नीची बातें नहीं करती थी, लेकिन रानी का विषय प्रधान था । आखिर उसने एक दिन कह ही दिया—“रानी आजकल दिनभर घूमती रहती है, तनिक देर के लिए उसका पैर घर में नहीं लगता और माँ कुछ नहीं कहती । तुम क्या जानते कि रानी आज्ञासी की भूखी है । मैं जब ऊपर रहती थी तो उस पर प्रताप का अंकुश तो नहीं था, मगर दुनिया और दुनियादारी दोनों से वह डरती कहीं मैं पूछ न बैहूँ कि वह अपनी सहेलियों के यहाँ इतनी देर क्यों लगा है, इसलिए मुझे देखते ही वह कहने लगती थी कि अमुक काम था, सहेली ने उठने ही नहीं दिया, बड़ी देर हो गई भाभी, माँ कुछ कहती तो न तब मैं हँसकर रह जाती और उस धीमी हँसी से रानी डरती रहती थी किन्तु अब उसके पर खुल गये हैं और कहीं अगर बाहर वालों के मुँह उस टीका-टिप्पणी करने लगे तो फिर वे बन्द नहीं होंगे । मैंने कई बार कोशिश की माँ के कान खोल दूँ; लेकिन हिम्मत नहीं पड़ी । क्या तुम पिता जी

आगाह नहीं कर सकते हो ?”

शारदा की बातों को अखिल ध्यान से सुन रहा था, ऊबकर उसने एक निःश्वास भरी और भरे हुये स्वर में बोला—“शारदा ! यह युग उल्टा है, भलाई करने वाले के ही हाथ जलते हैं । जिस तरह तुम माँ को नहीं समझा सकतीं उसी तरह रानी का मामला लेकर मैं पिता जी के सामने नहीं बोल सकता । मैं कुछ और कहूँगा, वे कुछ और समझेंगे ! मामला आगे बढ़ जायेगा । मुसीबत हम दोनों पर आ पड़ेगी । पिता जी ही क्या, रानी के सम्बन्ध में मैं निखिल से भी एक शब्द नहीं कह सकता । मेरे अपनत्व को यह सब लोग गैर समझते हैं । इसलिए अभी मौन रहना ही अच्छा है । जब देखूँगा कि पानी सिर पर चढ़ रहा है तो फिर बोलना ही पड़ेगा ।”

यह समय रात के दस बजे का था । अखिल खाना खा रहा था और शारदा चौके में बैठी उस पर पंखा डुला रही थी । दोनों की वार्ता चल रही थी कि एकाएक ऊपर से सुभद्रा का कर्कश स्वर सुनाई दिया । वह निखिल को डाँट रही थी; क्योंकि उसने अखिल को ऊपर घुला लेने के लिए आज माँ से बड़ी जोरदार सिफारिश की थी ।

सुभद्रा कह रही थी—“बड़ा आया हमदर्द बनकर । मैं अपने गले में यह फाँसी नहीं डालूँगी । अभी कुछ कमाता तो है अखिल, गृहस्थी समेट लेने पर ही बिल्कुल निकम्मा हो जायगा, निकम्मा—मैं जानती हूँ कि तू सिखा-पढ़ाकर मेरे लिए पास भेजा गया है । लेकिन मुझे तेरी सलाह की जरूरत नहीं है । क्या मैं अखिल को गैर समझती हूँ ? मेरे कामों में दखल न दिया करो, निखिल ! यह मैं नहीं प्रत्यापसन्द करती !”

इसके बाद दबा हुआ निखिल का क्षीण-स्वर दम्पति के कानों में पड़ा—“माँ, तुम तो बात कहते ही बिगड़ने लगती हो । मैंने कोई ऐसी बात नहीं कही है जो...”

“जो और तो मैं नहीं जानती ! तुम अभी लड़के हो निखिल ! बड़ों के कामों में दखल न दिया करो । तेरी कौन-कौन बात मानूँ । दिन में दस बार तू रानी की शिकायत करता है और ऐसे ही हमेशा जब भी मेरे पास बैठता है, बका ही करता है । चलो, सो जाओ । रात ज्यादा हो रही है ।”

इसके बाद थोड़ी देर तक सुभद्रा का बड़बड़ाना सुनाई पड़ता रहा जो फिर रात की साँय-साँय । शारदा और अखिल दोनों परस्पर बातें करते-करते अपने-अपने विस्तर पर जा लगे और नींद उनसे मँत्री बढ़ाने लगी ।

: १२ :

आज के युग में, यदि मनुष्य अपने लिए रोटी और कपड़ा जुटा पाता है तो यही उसके लिए पर्याप्त है । पैसे का बाहुल्य है तभी उसका मूल्य बहुत कम हो गया है । एक की जगह चार खर्च करके भी आज का आदमी अपना पेट भर पाता । अखिल भी ऐसी ही स्थिति में था जब वह सम्मिलित परिवार रहता था । तब केवल यही चिन्ता रहती थी कि कपड़े बनवाने हैं, चप्पल पहनाने हैं और अपने व्यक्तिगत खर्चों को भी पूरा करना है । उस समय रोटी का प्रश्न उसके सामने नहीं था । किन्तु अब सबसे पहले उसी का सवाल था । उस बाद ही दूसरी जरूरतें पूरी हो सकती थीं । दिन बीतते गये और उसकी स्थिति बदलती गई । माँ की गृहस्थी से अलग हुये उसे छः महीने हो गये थे । ईंच-घसीट कर उसने किसी प्रकार दीवाली के त्यौहार पर बच्चों को कपड़े वाये और खिलौने तथा मिठाई खरीदी ।

इसी बीच निखिल को एक महीने का भी दूकान का किराया अखिल दे पाया था । निखिल टोकता रहता था और वह वादों पर वादे करके भी पूरा नहीं कर पाता था । यद्यपि सिन्धी चाय वाले का रूखा व्यवहार अखिल बहुत खलता था; लेकिन वह विवश था और उसे उधार लेना पड़ता था । वह सब करता था वह अपने मौखिक सहानुभूति प्रकट करने वाले मित्रों के लिए शिष्टाचार से उसे बड़ा लगाव था इसलिए हमेशा उसकी जेब खाली रहती थी ।

अब निखिल का तकाजा, सिन्धी के पैसों की चिन्ता और शारदा के लि

रहा जोड़ी आदि की चिन्तायें अर्हनिश अखिल को घेरे रहतीं । वह अपने लिए
 भी नहीं चाहता था, परन्तु स्त्री और बच्चों के लिए सब कुछ करने को
 त्पर था । लेकिन अफसोस ! उस कलाकार का मोल दुनिया नहीं जानती थी ।
 उसे उसके सहयोग की आवश्यकता होती वह मीठी-मीठी बातें करके उससे
 अपना काम निकाल लेता । और उसकी आवश्यकताओं की ओर ध्यान देना जैसे
 किसी को आता ही नहीं था । यह थी अखिल की कहानी जो विवशताओं से
 घरी पड़ी थी ।

सहसा घर में एक नई बात हो गई । विनोद को सर्दी से ज्वर हो आया ।
 अखिल उसे धर्मार्थ चिकित्सालय से दवाइयाँ लाकर देता रहा । मगर नीचे
 हमरे में सील थी और जाड़े के दिनों में आंगन में धूप के दर्शन नहीं होते थे ।
 पाता है कि विनोद निमोनिया का शिकार हो गया । उसकी पसलियाँ धौंकनी सी चलने
 हुत कम लगीं और कफ धीरे-धीरे गले में बजने लगा ।

ना पेट न शारदा किसी के सामने नहीं रोती; लेकिन अकेले में वह अपने आँसू नहीं
 परिवार से रोक पाती थी । अखिल दवाइयों पर दवाइयाँ ला रहा था और वह ईश्वर से
 पल पहल अपने बच्चे के लिए दुआ माँग रही थी । तब ऐसी स्थिति में सुभद्रा दुनिया-
 य रोटी दारी करने आ पहुँची और रानी भी उसके पीछे-पीछे लगी चली आई । निखिल
 था । उसको भी तरस आया, उसने माँ से डाक्टर लाने के लिये कहा तो वह अपने सामने
 उसकी उल्टे चन्द्रभान बाबू की ओर देखकर भुस पर लीपती हुई बोली—“देखो, अखिल
 के कितना ऐंठू है । आज चौथा दिन है, बच्चे की क्या हालत हो गई है । मारे ऐंठ
 के मुझ से यह नहीं कह सका कि डाक्टर लाना है । मुझे तो यही कहकर
 सन्तोष दे देता रहा, सर्दी का बुखार है माँ, अस्पताल से दवा ले आया हूँ । दो-
 एक दिन में ठीक हो जायेगा ।” यह कहने के साथ सुभद्रा चारपाई पर पड़े विनोद
 के पास पहुँच गई और उसको गोद में ले, पति को दिखाती हुई बोली—“देखो,
 इसकी पलई लग रही है, और यह लड़का.....” सुभद्रा की दृष्टि अखिल पर
 जा पड़ी और वह कहने लगी—“कानों में तेल डाले बैठे हैं । अरे निखिल, जा
 भैया ! जल्दी से डाक्टर पाण्डे को बुला लाओ, राम-राम ! फूल जैसा बच्चा कैसा
 कुम्हला गया है ?”

अखिल की दृष्टि विनोद के मलिन मुख को निहारने लगी । उसकी आँखें

भर आई । निखिल डाक्टर को बुलाने जा चुका था और चन्द्रभान अखिल डेंट रहे थे—“क्यों अखिल ! तुम माँ से माँगने में संकोच करते थे, तो रुपये ले लेते । बाहरे तुम्हारा स्वाभिमान ! बच्चे की जान पर आ बनी है, तुम... ।”

सहसा विनोद को दवा पिलाते ही उलट गई जो रानी के आँचल गिरी । वह जोर-जोर से खाँसने लगा । उसकी सारी देह लाल हो गई रानी रोने लगी—“पिता जी, देखो भइया को क्या हो गया ? कहीं निखिल देर न हो जाय । मैं जाती हूँ और पाण्डे साहब को अभी लेकर आती हूँ ।”

चन्द्रभान पुत्री को कुछ भी जवाब न दे, पास रखे तौलिए से विनोद मुँह पोंछने लगे और सुभद्रा उसको जल्दी से अपने कन्धे से लगा थपकियाँ दे हुई कमरे में टहलने लगी ।

अखिल बुत बना बैठा था । शारदा का घूँघट आँसुओं से गीला हो गया था । चन्द्रभान उद्विग्न से, आँगन में आ, डाक्टर की प्रतीक्षा कर रहे थे । उस समय रंजना ने घर में प्रवेश किया ।

कमरे की चौखट पर बैठी माधुरी कुछ घबराई हुई—सी सुबक रही थी शायद भाई को उल्टी करते और खाँसी से परेशान हो विलविलाते देखकर रंजना ने आते ही उसे गोद में उठा लिया; फिर सामने सुभद्रा को विनोद बहलाते देख वह सकुचा कर वहीं पर खड़ी हो गई और पूछने लगी—“कैसे तबियत है विनोद की, माँ ? रात को देख गई थी तो बुखार कुछ कम हो आया था, अब... ?”

“कुछ पूछो न रंजना, तुम्हारी बहन की मति पर तो गाज गिर गई है । अपना फायदा-नुकसान भी नहीं समझ पाती । कल मुझे रानी ने बताया कि विनोद का दो दिन से बुखार है और जब मैं इसे देखने आई और अखिल से पूछा कि किसकी दवा कर रहा है, तो इसने यह कहकर मुझे समझा दिया कि माधुरी सा बुखार है माँ ! अस्पताल की दवा दी है । मेरा तो कलेजा नुचा आता बेटी, तनिक देखो तो यह कैसा हो गया है ।”

तब रंजना सुभद्रा के पास आ गई और माधुरी को बहन की गोद में विनोद को अपने अंक से लगा लिया । और सुभद्रा कहने लगी—“मेरी बड़ी आ

अखिल है, तुम्हीं बताओ रंजना, क्या मैं दुश्मन थी इन दोनों की ? बच्चे को अधमरा कर डाला । तुम्हारी माँ यही सोचती होंगी कि मैंने उनकी लड़की और दामाद को अलग कर दिया है । लेकिन मैं अपना कलेजा चीरकर कैसे दिखाऊँ कि मेरे लिए सब बराबर हैं । कम से कम यह तो होना ही चाहिये था कि मुझे उसी समय बताया जाता जब बच्चा बीमार हुआ था । तो भला इसकी यह हालत होती ! यही तो कहा जाता है कि जवान लड़के और बहुओं में जोश तो बहुत होता है, लेकिन ऐंठ के कारण वे कर कुछ भी नहीं पाते ! सब ऐसा ही है, लिटा दो न इसे ! उसका गुरिया-गुरिया दुख रहा है ।”

बात समाप्त करते ही सुभद्रा ने रंजना की गोद से विनोद को लेकर चारपाई पर लिटा दिया । फिर कुछ सोच बाहर आई और बरबस ही उसके पाँव जीने की ओर बढ़ गये । उसने जल्दी से जाकर चन्द्रभान बाबू के कमरे में चारपाई बिछा दी और मेज तथा कुर्सियों को जल्दी-जल्दी झाड़-पोंछ दिया । यह सब कर वह तनिक देर में ही नीचे आगई और विनोद को अपने अंक में भर लिया और जाते-जाते रंजना से कहती गई—“आओ रंजना ऊपर आओ ।”

फिर आँगन में पहुँच चन्द्रभान बाबू से बोली—“डाक्टर साहब को ऊपर ले आना ।” मैं विनोद को वहीं लिये जा रही हूँ ।

तब चन्द्रभान बाबू के मस्तिष्क में तत्क्षण ही यह बात घूम गई कि सुभद्रा जितनी कठोर है उतनी ही नरम भी । वह अखिल को दुतकारती है, तो प्यार भी करती है । उसका दुतकारना दुरुस्त है । इस समय कितनी समझदारी का काम किया है उसने ! भला डाक्टर पाण्डे अपने मन में क्या सोचते, जब बीमार बच्चे को नीचे अन्धेरे कमरे में पड़ा देखते । यही तो लोगों का कहना है कि बिना गृहिणी के घर नहीं चलता है !

चन्द्रभान बाबू का अन्तर्द्वन्द्व अचानक रुक गया । सामने डाक्टर पाण्डे आ रहे थे । उनके पीछे निखिल था । हाथ में चमड़े का बैग लटकाये पीछे-पीछे रानी चली आ रही थी । आँगन में आ निखिल ने रानी के हाथ से बैग ले लिया । इतने में उसके सम्मुख एक नया आश्चर्य आ खड़ा हुआ । ताज्जुब की बात थी कि चन्द्रभान डाक्टर साहब को नमस्कार कर उनके साथ जीने पर चढ़ने लगे । रानी भी चौंकी । उसने शारदा के कमरे की ओर देखा तो वह उसकी कुण्डी

बन्द कर रही थी। तब रानी समझ गई कि विनोद ऊपर लिटाया गया है।
जल्दी-जल्दी जीने पर पैर रखने लगी। कमरे में डाक्टर आला लगाये विनोद की परीक्षा कर रहा था। शारदा जाकर एक कोने में बैठ गई और डाक्टर के पास ऐसे खड़ी थी मानो कोई परीक्षार्थी अपना परीक्षा-फल जानने के लिए अकुला रहा हो।

चन्द्रभान डाक्टर के पास ही कुर्सी पर बैठे थे और रानी तथा निखिल विनोद के सिरहाने उदास-मुद्रा में खड़े थे। रंजना फर्श पर बिछी दरी पर मोधुरी के कन्धे से लगाये बैठी थी और अखिल भी बैठा था जड़ बना, मूक वधिर-सा और बिल्कुल निश्चेष्ट।

कमरे में सन्नाटा था। एक खिड़की से अग्रहण की हल्की धूप अन्दर आ रही थी। सब लोग डाक्टर का मुँह निहार रहे थे और डाक्टर थर्मामीटर का पारा देखता हुआ कह रहा था—“बुखार बहुत तेज है। मत्थे पर यू डी कोलो की पट्टी बराबर रखी जायेगी जब तक बुखार एक सौ एक डिग्री पर नहीं पहुँच जायेगा। बाकी……।”

“हाँ, डाक्टर साहब, बाकी क्या? हालत कैसी है?” चन्द्रभान बाबू उसकी हल्की स्वर काँप-सा रहा था। वे बहुत उद्विग्न थे।

डाक्टर पाण्डे ने उनके इस प्रश्न पर एक बार विनोद की ओर दृष्टि डाली मन्ती को फिर उँगली से संकेत कर उनको कमरे से बाहर लिवा गये। वहाँ वे कहने लगे—“आपको पहले दिखाना चाहिये था। वच्चे की हालत बहुत गिरा हुआ है। दोनों फेफड़े बलगम से जकड़ गये हैं। मैं तो यह डर रहा हूँ कि कहीं इंगई की आक्सीजन न देनी पड़ जाय।”

“तो जल्दी कीजिए, डाक्टर साहब! जैसे भी हो वच्चे को बचाइये। मैं……।”

चन्द्रभान बाबू की बात पूरी नहीं हो पाई थी कि डाक्टर पाण्डे विनोद के पास आ गये। कोरामिन और पेंसिलीन दोनों के इंजेक्शन लगा प्रिसक्रिप्शन लिखकर, निखिल के हाथ में दे बोले—“इसे अभी लपककर बनवा लाओ। कम्पाउन्डर से कहना कि जल्दी कर दे। चलो, मैं भी चलता हूँ।” यह कह निखिल के साथ चन्द्रभान बाबू को चलते-चलते तसल्ली दे; बाहर चले आये।

है। और चन्द्रभान बाबू को उनके आश्वासन भरे वाक्य इस समय वरदान जैसे प्रतीत हो रहे थे—‘आप घबड़ाइये नहीं, चन्द्रभान बाबू, मैं अपनी कोशिश में कुछ उठा नहीं रखूँगा। आप दुआ कीजिए, मैं दवा कर रहा हूँ, बच्चा जल्दी ही अच्छा हो जायेगा।’

अब दिन के ग्यारह बज रहे थे और सात घोड़ों के रथ पर सवार सूरज प्राकाश के मध्य में पहुँच रहा था।

: १३ :

इंजेक्शन और दवा का प्रभाव विनोद पर कुछ-कुछ अंशों में पड़ने लगा। बाबू उसकी हाँपने की आँधी कम हो गई और पसलियाँ भी अब लगनी धीरे-धीरे कम हो रही थीं। रंजना दोपहर को लगभग बारह बजे घर गई थी, तब उसने फूल-फूल्ट डालीमती को विनोद की हालत के विषय में बतलाया था। फूलमती ने गयाप्रसाद से बातें कही और गयाप्रसाद उसी समय विनोद को देखने के लिए अखिल के घर की ओर भागे। उनके आते ही सुभद्रा परदे में हो गई। वह दूसरे कमरे में चली गई थी और चन्द्रभान गयाप्रसाद से कह रहे थे—‘हालत बहुत खराब हो गई थी, जब से इंजेक्शन लगे हैं कुछ शांत हुआ है। यह सब हमारे अखिल साहब बचाइये! मेहरबानी है! न मुझ से कहना, न सुनना। मानमानी करते रहे और बच्चे को इस हालत में पहुँचा दिया।’

विनोद ने गयाप्रसाद ने चन्द्रभान बाबू की बातों को सुना और समझा और बराबर प्रतिक्रिया उनको तसल्ली-बख्श जवाब देते रहे। तत्पश्चात् थोड़ी देर ठहर जब वे घर लाये तो सोचने लगे कि दोष सब अखिल का ही है। क्या करें चन्द्रभान बाबू और क्या करूँ मैं? दोनों ही अपने-अपने भाग्य को झीखते हैं। फूलमती से जब गयाप्रसाद की बातें हुई तो वे छूटते ही बोल उठे—‘तुम

हमेशा अखिल के घर वालों को ही दोषी समझती रहती हो। लेकिन मैं कहूँ कि कसूरवार है अखिल। गरूर में चूर रहा, बच्चे को खैराती अस्पताल में भेज दिया। और मारे शान के वाप नहीं कहा। अपना रोना रो रहे थे बेचारे चन्द्रभान बाबू ! फिर मैं कैसे कह सकी। वहाँ उन लोगों में घुराई है। अब कुछ समझ में आया तुम्हारी ?”

फूलमती पति को कुछ जवाब नहीं दे पाई। वह चुपचाप सुनती रही। साथ ही गयाप्रसाद कहते रहे। और माँ

इसके बाद रंजना ने भी बाप की बातों का माँ के सामने पुष्टीकरण किया। उसने बताया कि जीजा जी की लापरवाही से ही विनोद इतना बीमार हुआ कि जब घर में क्या रानी, क्या माँ और क्या निखिल सभी एक पैर से नाच रहे हैं। जरूरत की दीदी बेचारी क्या करे, जैसा जीजा जी कहते गये वैसा ही वे करती गईं। डाक कठोर हैं पाण्डे का हाथ अच्छा है, ईश्वर चाहेगा तो विनोद जल्दी ही अच्छा हो जायगा। जी पर

इस प्रकार फूलमती को पूरा विश्वास हो गया कि चिन्ता की कोई बात नहीं है। मुझे निश्चिन्त रहना चाहिये। जहाँ पर घर के सब लोग दौड़-धूप कर रहे हैं वहाँ पर मेरा दखल देना अच्छा नहीं। “यह अपने वंश योग्य बन

फूलमती को अब होश आया कि अच्छा हुआ जो मैंने रंजना के हाथ रुपये शारदा के पास नहीं भेज दिये। भला क्या कहते उसके सास-ससुर ! शिकारों हालत में मुझे नीचा देखना पड़ता। लेकिन फिर भी मैं पुछवा लूँगी शारदा की धीरे-धीरे जिसमें कहीं वह यह न सोचने लगे कि इस गाढ़ के समय में माँ ने मेरी ओर ध्यान नहीं दिया। इस निष्कर्ष पर पहुँच वह सवेरे रंजना से बोली—“कि रंजना, तुम्हारे कहने के माफिक मैं जानती हूँ कि विनोद के दवा-इलाज में तुम भी उठा नहीं रखा जा रहा है, मगर फिर भी आज शारदा को पुछ लेना, अब कुछ जरूरत हो तो संकोच न करे; साफ-साफ बता दे, रुपये मैं दूँगी।” कहते आ

इस आधार पर जब रंजना ने प्रातः बहन के सम्मुख रूपों वाला प्रसंग खेला तो वह धीरे से बोल उठी—“रंजना, माँ और पिता जी कठोर बाद में हैं और उदार पहले। तुम्हारे जीजा जी पर वे लोग नाराज रहते हैं। इसीलिये कभी कभी हाथ खींच जाते हैं। परन्तु अब जो हो रहा है, वह तुम देख ही रही हो। माँ को समझा देना वे चिन्ता न करें। और जब जरूरत होगी तो मैं क्या न निकट बहुत क मन वि

न में क
स्पताल
बैठी रहूंगी ?”

के बाप शारदा के इस सन्तोष-पूर्ण उत्तर के सम्मुख रंजना कुछ भी नहीं बोल
कैसे कह सकती। वह देखती रही। डाक्टर आया, उसने विनोद की परीक्षा की। वह रुपये
में आठ आने भर सुधर चुका था। लेकिन अभी इंजेक्शनों की आवश्यकता थी।
रही साथ ही दवा, प्लास्टर और पुड़ियाँ भी चलनी थीं। उसने सन्तोष की सांस ली
और माँ से जाकर कहने लगी—“माँ, आज विनोद की तबियत अच्छी है।
उसकी पसलियाँ अब शांत हैं। कोई चिन्ता की बात नहीं है। दीदी कहती थीं
कि जब घर के सब लोग अपनी जिम्मेदारी सम्हाल रहे हैं तो फिर रुपयों की
जरूरत क्यों पड़ेगी? आज मैंने जाना माँ, कि माँ सुभद्रा जितनी कर्कशा और
ई। डाक कठोर हैं उतनी ही ममतीली भी। हर काम में वे आगे-आगे दौड़ती हैं। जीजा
जायाजी पर वे चाहे जितनी नाराज हों पर विनोद को प्यार करती हैं।”

कोई क “यह तो होता ही है रंजना, मूल से व्याज ज्यादा प्यारा होता है! फिर
ड-धूप अपने वंश के पौधे को कौन नहीं सींचता। किसी तरह अखिल गृहस्थी चलाने
योग्य बन जाता तो उसकी भी घर में कदर होने लगती।” फूलमती यह कहते-
कहते आत्म-सन्तोष की अनुभूति में वह गई और प्रातःकालीन शरद हवा मन्द
झकोरों में आ उसे स्पर्श करने लगी। तभी सूरज की सुनहरी इन्द्र-धनुषी किरणों
शारदा धीरे-धीरे गर्म होने लगीं।

मेरी ओ
ति—“कें
ज में कु
नेना, अ
”

: १४ :

संग खे
में हैं ओ
लेये क
रही हो
में क्या

माधुरी लगभग दो साल की हो आई थी और शारदा का तीसरा प्रसव
निकट था। उसकी देह भारी थी। चलने-फिरने, उठने-बैठने और काम करने में
बहुत कष्ट होता था। लेकिन वह उफ़ तक नहीं करती थी, क्योंकि उसका
मन विनोद की ओर लगा था। वह दिन-रात जागकर एक कर देती। किन्तु

भूख-प्यास और नींद इनसे मनुष्य पृथक् नहीं रह सकता । अचानक ही जागती और थोड़ी देर बाद चौंककर आँखें खोल देती ।

यही गति अखिल की थी । वह रानी, सुभद्रा, निखिल, पिता चन्द्रभानु पत्नी सबसे यही कहता रहता कि मैं जाग रहा हूँ, सब लोग क्यों हैरान हो, लेकिन सो वह भी जाता था । आखिर एक माँस-पिण्ड ही तो था । वह था कि रानी दिन में नहीं सोती है और निखिल दिन भर दूकान में बैठे-बैठे जाता है । ऐसे ही पिता जी भी कुर्सी पर ही बैठने वाले आदमी हैं । किन्तु कष्ट क्यों दिया जाय ?

लेकिन जहाँ पर खून का रिश्ता और साथ ही विरोधी भावनाएँ हैं वहाँ पर एक बार मंगल-कार्यों में मनुष्य सहयोग न दे, वह बात दूसरी है, दुःखद समस्या सामने आते ही सारा भेदभाव विलीन हो जाता है । यही रहा था अखिल सुभद्रा के प्रति । और तभी वह उसे प्रसन्न बनाये रखने के लिए, रानी और निखिल को भी, रात में जागने के लिए, मना करता था । कभी-कभी ऐसा अवसर भी आ जाता कि भोजन करना तो दूर उसकी ओर आँख उठाकर देखने का भी उसका मन नहीं होता । तब वह पूछ देती—“क्यों अखिल, तुमने रात को खाना नहीं खाया ?”

उत्तर में अखिल कह देता—“भूख ही नहीं लगी माँ ।”

शारदा के साथ भी ऐसी ही परिस्थितियाँ जुड़ी थीं । वह भी अक्सर जागती रह जाती । कभी-कभी रानी आग्रह करके उसे खिला देती और कभी स्वयं दो-चार कौर खाकर पानी से तृप्ति कर लेती । यद्यपि विनोद के स्वप्न में सुधार हो रहा था; फिर भी दम्पति बहुत चिन्तित थे । अखिल हमेशा खोया सा बना रहता और शारदा जीर्ण-शीर्ण और मलीन सी । कभी-कभी ऐसा भी होता कि रात का खाना न शारदा खा पाती और न अखिल । तब वह सवेरे बड़बड़ाने लगती—“अच्छा, आज मैं न बहू को पूछूँगी, और न बहू को ! जब मैं घर में हूँ तो दोनों इतने हैरान और परेशान क्यों हैं ? बच्चे तबियत सुधर रही है । रात को मैं आधी-आधी रात तक जागती हूँ । समाधि दवा देने के लिए रानी घड़ी में अलार्म लगा देती है और निखिल सोते-सोते जागता ही रहता है । फिर मियाँ-बीवी का रात भर का जागरण मेरी स

नहीं आता। मानती हूँ, कि श्रीलाद की कलक सब को होती है। लेकिन ऐसा भी क्या, जब घर में चार आदमी हैं तो अकेले ही जानमारी की जाय !”

पत्नी की इस उक्ति पर चन्द्रभान भी उसके समर्थन में बोल उठते—“क्यों अखिल, तुमने रात को खाना नहीं खाया और वहाँ भी कितनी पागल है कि उसने खाने की सुविधा ही नहीं ली। यों तो मुझे रात को बहुत कम नींद आती है मगर तुम जब चाहो बुला सकते हो। मुझे जगा दिया करो और खाना खाकर थोड़ी देर आराम किया करो। नहीं तो तुम भी चारपाई पकड़ लोगे।”

अखिल बाप के सामने कुछ नहीं बोलता और माँ के पूछने पर कह देता—“खाना लाने के पहले पूछ लिया करो माँ, न जाने क्या हो गया है कि भूख ही नहीं लगती।”

सुभद्रा तब उस पर एक और नया दोष मढ़ देती—“तुम यह सोचते होगे अखिल कि खाना बरवाद होता है, इसलिए मैं कहती हूँ। लेकिन भैया, खाओगे नहीं तो चलोगे किस बल-बूते पर। और वहाँ तो जैसे वैदेही हो गई है। न देह की चिन्ता है, न पेट में पल रहे बच्चे की, भला कैसे काम चलेगा ? आज देखूँ, तुम लोग खाना कैसे नहीं खाते हो। मैं काम-काज में जुटी रहती हूँ और रानी को इतनी बुद्धि कहाँ कि दुःख में आदमी की भूख मर जाती है, तब उसे कोंच-कोंचकर खिलाना पड़ता है।”

सुभद्रा की इस बात पर पास बैठे चन्द्रभान बाबू तनिक हँस पड़े और कहने लगे—“अखिल को तुम्हीं सुधार सकती हो, निखिल की माँ ! यह बचपन से ही ऐसा रहा और अब दो बच्चों का बाप हो गया है, फिर भी इसे समझ नहीं आई।”

सुभद्रा मन ही मन तो बहुत प्रसन्न हुई पर प्रकट में उसका बड़बड़ाना बंद नहीं हुआ।

डाक्टर पाण्डे के इलाज को तीन दिन हो गये थे। अब विनोद खतरे के बिन्दु से बाहर आ गया था। घर में सभी लोग उसकी परिचर्या में रत थे, तत्पर थे, और व्यस्त थे। शारदा की निराशा के बादल छूट रहे थे और अमावस का मुँह लुका लेने वाला चाँद क्रमशः अपने आकार में वृद्धि कर रहा था। घर में सबसे अधिक प्रसन्नता निखिल को थी, क्योंकि इस प्रकार रंजना को दिया हुआ

उसका वचन किसी हृद तक पूरा हो गया था।

समय अपनी कीली पर अनवरत रूप से नाच रहा था, और धरती के बदन
तिरछी धुरी पर चक्कर काटती हुई सूरज की परिक्रमा कर रही थी। प्रादि से
दिन डूबने पर रात होती और रात के बाद प्रभात ! ऐसे ही मनुष्य की क्षिणुभूति
बदलती रहती है। परिवर्तन परिस्थितियों में व्यक्त होता है, और उन्हीं में
जाता है। विनोद स्वस्थ हो रहा था। शारदा और अखिल के लिए यह
बड़ा ईश्वरीय वरदान था।

: १५ :

अखिल शांतिप्रिय सद्भावनावादी और सन्तोषी व्यक्ति था। पाप
परिभाषा वह जानता न हो ऐसा नहीं, लेकिन पुण्य क्या है, और मानव
क्या है, इससे वह अनभिज्ञ नहीं था। और यही स्थिति थी उसके कार्य-क
की। भलाई करना वह अपना कर्त्तव्य समझता था और घुराई को देख
मीच लेता था। यह सही है कि सत्यवादी जिन्दगी भर भँकट ही भेलता
है। सो यह दुर्भाग्य रूपी सौभाग्य, कुछ शिल्पी के साथ बंधा था। किन्तु
धर्म-निष्ठ, कर्त्तव्य-परायण, कवि और सदाचारी था। उसकी विजय हुई
विनोद रोग-मुक्त हो गया।

और शारदा थी एक प्राचीन भारतीय संस्कृति की साक्षात् प्रतीक
सादी सुलभ रमणी। क्योंकि वह प्रत्येक के लिए सुलभ थी जब कि उसकी
आवश्यकताएँ ही उसे स्वयं अपने लिए दुर्लभ बनी हुई थीं। माँ का आँचल
आँसू बहें और मन आकुल होकर ईश्वर से विनय करे और फिर भी
नीरोग न हो यह कैसे हो सकता है।

इस भांति शारदा की मनोतियों ने उसके अनुमान के अनुसार देवी-देवता

को रिझा लिया था। यह सब मिलाकर तथ्य निकल आया था कि अब विनोद धरती के बदन में केवल कमजोरी ही शेष रह गई है। खांसी, बुखार और जुकाम की आदि से वह निवृत्ति पा चुका था। अब शारदा प्रसन्न थी। शिल्पी सन्तोष की अनुभूति ले रहा था। निखिल ने मानो बहुत बड़ी लड़ाई जीत ली थी जबकि उसका आधार-सूत्र रंजना की ओर केन्द्रित था और रंजना उसे तभी उपलब्ध हो सकती थी जब शारदा की सहमति हो।

रानी प्रसन्न तो क्या थी, निश्चिन्त हो सांस ले रही थी कि चलो अच्छा आ कि विनोद जल्दी स्वस्थ हो गया। नहीं तो मेरे लिए बंधन था, पूरा बंधन! एक मिनट के लिए भी घर से बाहर नहीं निकल पाती थी। अब मैं आज ही जीवन के घर जाऊँगी, एक हफ्ते से ऊपर हो गया और उससे भेंट नहीं हुई।

और चन्द्रभान बाबू अब नहीं चाहते थे कि अखिल और शारदा फिर नीचे कमरे को अपना आवास बनाएँ। इस समय सुभद्रा दोनों पर प्रसन्न है, अखिल निक राह-राह चले तो सब काम बन सकता है।

लेकिन सुभद्रा सोच रही थी कि चलो भ्रंश खत्म हुआ, लड़का अच्छा हो या। तनिक में कुछ नेक-वृद्ध हो जाता तो दुनिया मुझे ही बदनाम करती और। पाप दनामी से हर आदमी डरता है। इसीलिए मुझे इतनी बेगार करनी पड़ी, और र मानव रती न तो जाती कहाँ? वे (चन्द्रभान) भला मानते! इसीलिए तो मैं पहले कार्य-कर्म चेत गई, किन्तु अब दो-चार दिन में ही अखिल को फिर पुरानी राह पर छोड़ को देख रहा है। नहीं तो वह फिर राजा बाबू बन जायगा। कमाए निखिल और बुढ़ापे भेलता है। दफ्तर में बैठे-बैठे वे कलम घिसें और मजा करे अखिल। यह नहीं होने दूँगी। किन्तु। जैसा चल रहा था वैसा ही चलेगा। तकलीफ-आराम की बात और है। जय हुई है—हँसाई से सभी दूर भागते हैं। इसलिए ऐसे मौकों पर मन जो नहीं चाहता वह मजबूर होकर करना पड़ता है। दुनिया का दस्तूर है कि दुनियादारी प्रतीक है और इंसानियत पीछे।

उसकी आ इस तरह घर में सबके अपने-अपने विचार यत्र-तत्र डोल रहे थे और शारदा आँचल पर अधिक परिश्रम, लगातार कई रातों तक जागना, अब उसको हैरान करने भी लगा था। गर्भ के पूरे दिन थे। अग्रहण बीत रहा था और पूस का कलेजा कँपा वाला शीत धरती पर उतर आया था। शारदा को उठना-बैठना दूबर हो रहा देवी-देवता

था और अखिल के सिर पर उसकी गति-विधि देख एक नई चिन्ता का सवार हो गया था कि बच्चे की बीमारी की बात और थी, क्या सौर भी माँ और पिताजी ही उठावेंगे ? मुझे उन पर निर्भर नहीं रहना चाहिए क्या कहूँ, बाजार में तमाम पैसे बाकी हैं । लेकिन माँगने जाओ तो लोग सीधा समझा देते हैं । अब कौन-सा रास्ता अपनाऊँ जिसमें दुनिया मेरी दारी से नाजायज फायदा न उठा सके । मैं दान नहीं माँगता और न चाहता हूँ; केवल अपनी मेहनत का मोल चाहता हूँ । कितनी छोटी है जो एक कलाकार का मूल्य नहीं आँक पाती है । लोग मुझसे डिजाइनें हैं, स्टेच्यू आग्रह कर मनचाहे समय पर पूरा करवा लेते हैं । कवि-सम्मे गभ गवे की भाँति कान पकड़कर जब चाहते हैं खींच ले जाते हैं और एही दुबला संगीत-नाट्य के आयोजनों में जबरदस्ती घसीट ले जाते हैं; लेकिन कोई मालगी थी लाल यह नहीं सोचता कि मेरा भी पेट है । पेट और दाँत अगर इन्हीं अखिल न मिले होते तो वह अपने स्वाभिमान पर जीवित रह सकता था । बैठ जाऊँ दुनियादारी से तो काम नहीं चलता । समझ में नहीं आता कि क्या वहीं तो कुछ भी हो मुझे भविष्य के लिए सजग रहना चाहिए । क्या पता क होता है ।

इसी सिलसिले में सहसा अखिल के मस्तिष्क में यह बात घूम गई किहने ल आठ-नौ महीने होने को आये और मैंने निखिल को किराये की एक पाई यह अवि दी । आरम्भ में उसने दो-चार बार टोका, मैं उसे आश्वासनों पर टिका और इधर तो उसने कई महीनों से माँगना ही वन्द कर दिया है । मुझे चाहिए कि वह कहीं क्रुद्ध तो नहीं हो गया है । मैं उससे कहूँगा कि तुम न करो निखिल, मैं धीरे-धीरे सब किराया चुका दूँगा ।

और जब एक दिन अखिल ने निखिल से कहा—“निखिल, कई मैंने माँ आ गये और मैं किराया नहीं दे पाया । तुम संशय मत करना, जल्दी ही पिता ज करके सब दे दूँगा !” को सम्

तब निखिल हँस पड़ा और दृष्टि पृथ्वी पर टिका धीरे-धीरे कहते कहता “इसकी तुम चिन्ता न करो भइया ! इस महीने तक का किराया मैंने बु है, अब आगे की देखो ।” में ही है

अखिल भाई का मुँह देखकर दंग रह गया। वह कुछ कहना चाहता था; लेकिन निखिल धीरे-धीरे वहाँ से खिसक गया था।

: १६ :

गर्भावस्था स्त्री के लिए बहुत बड़ा बोझ होती है। शारदा का शरीर यों ही और भी दुबला-पतला था, उस पर गत दो सप्ताह से वह कुछ अस्वस्थ-सी प्रतीत होने लगी थी। उसे लगता था प्रसव आज हुआ कल हुआ। उसने एक दिन अवसर पार इन्तज़ार से कहा—“मुझे तकलीफ बढ़ रही है, पता नहीं किस समय अलग हो जाऊँ। कुछ प्रबन्ध अपनी ओर से भी रहना चाहिए। यही सोचती हूँ, क्या नहीं तो माँ बड़ी जल्दी बड़बड़ाने लगती हैं।”

अखिल को जिस बात की चिन्ता थी उसको जब शारदा ने दुहरा दिया तो वह एकदम चौंक गया। किन्तु तत्क्षण ही अपनी स्थिति पर नियंत्रण पा वह मुँह नहीं खोलकर कहने लगा—“मेरी राय तो यह है कि तुम अस्पताल ही क्यों न चली जाओ ! एक पाई यह अधिक अच्छा रहेगा, खर्च भी कम होगा और परेशानी भी न होगी।”

“लेकिन माँ जाने देंगी ? विनोद और माधुरी के समय नहीं गई। सौर घर में ही हुई थी। फिर अबकी बार यह नया काम कैसे करूँ ?” शारदा पति के सम्मुख यह शंका रखते समय संकोच से गड़-सी गई थी।

अखिल ने फिर कहा—“जैसा मौका होता है, वैसा करना पड़ता है ! घर में माँ अकेली हैं, रानी की अर्ध-वार्षिक परीक्षा चल रही है; मैं, निखिल और पिता जी दिन भर घर से बाहर रहते हैं, फिर दो-दो काम कैसे निपटेंगे। बच्चों को सम्हालना और सौर-परिचर्या यह सब तो नहीं कर पायेंगी माँ ! इसीलिए कहता हूँ कि अस्पताल जाने में सुविधा रहेगी।”

इस तरह अखिल और शारदा ने यह योजना बनाली कि यह प्रसव अस्पताल में ही होगा।

मटाने लगे। वह कहती है—“मुझ से क्या पूछती हो माँ, मुझे अब पीर सहा नहीं हो रही है; जैसा ठीक बातचीत करो। लेकिन देर न लगाओ।” जिस समय शारदा यह कह रही थी उसके तब प्रसव-वेदना उसके आनन पर स्पष्ट हो रही थी।

के चेहरे सुभद्रा अखिल के पास गई और उससे बोली—“जल्दी जाओ, अखिल, मैं वहाँ को अस्पताल भेजना चाहती हूँ। एक ताँगा ले आओ, और सुनो, तुम क्या उसके कहते हो? घर में तमाम झगड़ हैं, और वहाँ का भी मन है। मैंने यही ठीक को न समझा है। अब……।”

‘ठीक है माँ, मैं अभी ताँगा लाया।’ यह कहने के साथ अखिल चला गया और सुभद्रा शारदा के पास बैठ उसे सांत्वना देने लगी।

रानी और निखिल दोनों ही घर में नहीं थे। वह कालेज गई थी और अखिल दूकान। अखिल भी चला गया होता। मगर शारदा ने उसे रोक लिया। चन्द्रभान बाबू की आज छुट्टी थी, जो तातील (नागे) से पृथक् विनोद की मारी में ली गई थी। आज उसका अन्तिम दिन था। वे बाहर चबूतरे पर कला—हल रहे थे। ताँगा आगया। सुभद्रा शारदा को लिये-दिये आकर उसमें बैठ रहे। दोनों बच्चे चन्द्रभान बाबू के साथ थे। माधुरी गोद में चढ़ी थी और उसे टाली उँगली पकड़े था। ताँगे पर सफेद चादर का आवरण डाल दिया गया। और जब अखिल जाने को उद्यत हुआ तो चन्द्रभान ने संकेत से उसको अपने पास बुलाया और पास आते ही मनी-बैंग से दस-दस के पाँच नोट निकाल उसके थैले में दे धीरे से कहने लगे—“ये रखो, अगर और जरूरत पड़े तो संकोच न करना, माँग लेना।”

अब दोपहर हो आई थी। और पूस की फीकी धूप बदन में कुछ-कुछ साहट भर-भर देती थी।

आखिर वह समय आ पहुँचा जब शारदा प्रसव-वेदना से छटपटाने लगी घर में दौड़-धूप मच गई और सुभद्रा उसकी व्यवस्था में लग गई। वह चूल्हा के बावू को अपने कमरे में लिवा ले गई और वहाँ जाते ही उसने बातचीत में सिलसिला ऐसा जमा दिया जिससे वे उसकी बातों को काट नहीं सके। सब प्रसव-वोली—“एक बात कहूँ अगर मानो !” कहने के साथ सुभद्रा के चेहरे पर आकृति विनयी बन गई और चन्द्रभान बाबू बोल उठे—“क्या ?”

सुभद्रा धीरे-धीरे उनको परिस्थिति का बोध कराने लगी। उसके कहने से इतनी लल्लो-चप्पो और लेसा-पोती थी की चन्द्रभान उस पालिश को न देखे उसके अनुकूल बन उसकी हाँ में हाँ मिलाने लगे।

सुभद्रा का कथन था—“मैं सोचती हूँ कि वहाँ को इस बार सौर करने में ताल भेज दूँ तो कैसा रहेगा—देखो न, रानी के इम्तिहान चल रहे हैं, रानी अभी बीमारी से उठा है और माधुरी की देखभाल भी आवश्यक है। मैं वहाँ का काम देखूँगी, बच्चे सम्हालूँगी या सौर समेटूँगी ?—जैसा बताओ करूँ।”

चन्द्रभान कुछ सोचने लगे और उसके बाद उनके मुँह से निकला—“वहाँ ही है, लेकिन पूस का महीना है। जाड़े-पाले में अस्पताल में अच्छा रहेगा। हर्ज है अगर बच्चा घर में ही हो ? काम जो सामने आ जाता है उसे टाल नहीं जा सकता, करना पड़ता ही है। सोच-समझ लो, मैं जोर नहीं देता।” कहकर चन्द्रभान कुछ रुके और फिर पुनः कहने लगे—“हाँ, एक बात और वह अस्पताल जाने में कुछ बुरा तो नहीं मानेगी; उसकी भी तो राय ले लो।”

वस यही पकड़ थी। सुभद्रा का फेंका हुआ तीर दाँव पर लग गया। इसलिए वह वार्ता को आगे न बढ़ा यह कहती हुई व्यग्रता प्रदर्शित कर बह चली गई कि वहाँ पीड़ा से हाल-बेहाल हो रही है, जल्दी करनी है, मैं जाती हूँ।

सुभद्रा शारदा के निकट जा ऐसे भावों को प्रकट करती हुई अपनी बातें लगी मानो वह उसकी सगी माँ हो, जो हर हालत में उसका हित ही चाहती है। वह बात को फैलाव देने लगी—“वहाँ, अगर तुम्हारा मन हो तो अस्पताल ही क्यों न भेज दूँ ? घर की हालत तो जानती ही हो, अकेले और सब काम निपटाना है, तो....।”

“हाँ, माँ ! दूध और पूत किसे प्यारा नहीं होता । मैं बहुत बहलाती हूँ; लेकिन यह माधुरी ऐसी पीछे पड़ जाती है कि लाना ही पड़ता है ।” रंजना यह कहकर माधुरी को सुभद्रा को सौंप आती ।

सर्वत्र शांति व्याप्त हो रही थी, कहीं पर भी उलझन न थी । अखिल आपत्तियों के मुँह में जा-जाकर वापस लौट आया था । इस समय उसे कुछ निश्चिन्तता सी हो आई थी । तभी उसकी अर्हनिश वाली अस्थिरता में स्थिरता आ गई थी । किन्तु सुभद्रा गिन-गिनकर दिन काट रही थी कि कब शारदा अस्पताल से आये और मैं दुनिया भर के भँभटों से मुक्त हो सकूँ ? माधुरी रात को कभी रानी के पास लेटती, कभी चन्द्रभान बाबू के पेट पर सो जाती और अधिकांश होता यह था कि सुभद्रा को ही उसे सम्हालना पड़ता । अखिल को विनोद ने अपने तई ऐसा जकड़ रखा था कि क्या दिन और क्या रात, वह उसके पीछे-पीछे लगा रहता था ।

दोपहर की बेला थी । सुभद्रा रसोई से निवृत्ति पा धोबी को मँले कपड़े गिनकर दे रही थी, इतने में माधुरी ठुमकती हुई वहाँ आई और सुभद्रा से लिपट गई । सबेरे से काम में सिर गड़ाये-गड़ाये सुभद्रा ऊब गई थी । उसने उसको झिड़क दिया । माधुरी रोने लगी तो धोबी बोला—“बुप करा लीजिये न माँ जी ! मुझे कौन ड्यूटी पर जाना है । दो मिनट देर ही हो जायगी, तो क्या बिगड़ जायगा ।”

इस पर सुभद्रा ने दिखावे के लिए माधुरी को गोद में उठा लिया और आँचल से उसके आँसू पोंछने लगी । फिर धीरे से उसको समझा कर कहने लगी—“हाँ भाई, माधुरी तो मेरी रानी बिटिया है, शाम को जब बाबा आयेंगे तो बहुत से कम्पट और विस्कुट माँगा दूँगी बिटिया को । हाँ अब रानी बेटी खेलेंगी ।” यह कहकर सुभद्रा ने उसको गोद से उतार दिया और माधुरी कम्पट और विस्कुट का आश्वासन पा कमरे में खेलने लगी ।

धोबी कपड़े गिन रहा था । सुभद्रा कापी पर लिख रही थी और माधुरी जा पहुँची थी जंगले पर; फिर उसके बाद बाहर के छज्जे पर । छज्जे की खिड़की खुली थी और गैस भरा रबड़ का एक गुब्बारा नीचे कार्निंस में लटका हवा में भूल रहा था । माधुरी ने अपना नन्हा हाथ उसकी ओर बढ़ाया और गुब्बारा पास

शारदा ने पुत्र प्रसव किया । अस्पताल में उसकी पूरी देख-रेख होती थी । नित्य शाम को सुभद्रा और रानी उससे मिलने जाती थीं और रंजना तो दो-दो चक्कर लग जाते थे । कभी-कभी सुभद्रा के जाने से पहले या तो के बाद फूलमती भी वहाँ पहुँच जाती थी । तीन दिन हो गये थे । विनोद से बीमार हुआ तब से बहुत चिड़चिड़ा हो गया था । माँ की अनुपस्थिति से बाप को एक मिनट के लिए नहीं छोड़ता था । इसके अतिरिक्त अब माधुरी धीरे-धीरे चलने लगी थी । दोनों आपस में जितना खेलते नहीं अधिक झगड़ते थे । इस झगड़े को शान्त रखने के लिए और दिन भर को चीं-चीं करके रोते रहने के कारण सुभद्रा ने उकता कर अखिल को दिया—“ले जाओ न अखिल, विनोद को अपने साथ, वहाँ कुछ बहलाओ और यहाँ रहेगा तो रोयेगा और माधुरी से लड़ेगा । माधुरी को मैं अकेले लूँगी ।”

उस दिन से विनोद अखिल के साथ दूकान चला जाता था और सुभद्रा के साथ घर में रह जाती थी ।

रंजना ने गत वर्ष से ही पढ़ाई स्थगित कर रखी थी । अतः वह कभी इस बीच सुभद्रा के पास आकर बैठ जाती और घर के कामों में उसे देने लगती । माधुरी उससे खूब हिल गई थी । वह उसे जाने नहीं देती । पकड़ कर लिपट जाती, साथ जाने के लिए ज़िद करती और मचलने लगे तब विवश होकर रंजना उसे अपने घर ले जाती और थोड़ी देर खिल कर छोड़ जाती ।

अब फूलमती को यह बहुत अच्छा लगता था कि सुभद्रा शारदा पर रूपेण दयालु है । जब कभी माधुरी को उसके घर में आये अधिक देर हो जा वह रंजना से हँसकर कहने लगती—“जाओ रंजना, माधुरी को छोड़ो उसकी दादी राह देख रही होगी । सुना है दोनों बच्चों को वह चाहती है ।”

रोती छाती पीटती शारदा आई और बच्ची को सुमद्रा से ले छाती से लगा धुक फाड़कर रोने लगी ।

पक्षी उड़ गया था । पिंजड़ा खाली पड़ा था और वह भी टूटा-फूटा तथा बिल्कुल व्यर्थ-सा । रुदन की धारा बह रही थी और मातम में हवा ऐसे धीरे-धीरे डोल रही थी जैसे वह मौत पर अपनी चादर डालकर उसमें बल दे रही हो ।

: १८ :

घर का मौन वातावरण लम्बी-लम्बी साँसें ले रहा था । एक नहीं प्रायः सभी चुप रहते थे । शारदा अकेले में बैठी आँसू बहाती रहती और सोचती रहती कि जब कोई दुर्घटना होने वाली होती है तो सारे कार्यक्रम वैसे ही बन जाते हैं । कहाँ से यह अस्पताल जाने वाला भूत मेरे और उनके सिर पर सवार हुआ और बच्ची हाथ से चली गई । काश ! यदि मैं घर में होती तो मेरी माधुरी कभी नहीं मरती । माँ बेचारी क्या करें, अकेले कौन-कौन सा काम सम्भालें; मगर कम-से-कम उनको (अखिल) तो इस बात का ध्यान रखना चाहिये था । जहाँ विनोद को अपने साथ ले जाते थे वहाँ माधुरी को भी ले जा सकते थे । यह कुछ नहीं । सब भाग्य का खेल है, तकदीर में जो बदा था, वह हुआ । लेकिन माँ का हृदय मोम होता है, उसे पत्थर कैसे बना लूँ ? मैं माधुरी को जितना भुलाने की कोशिश करती हूँ, उतना वह याद आती है । हाय मेरा दुर्भाग्य ! मुझे कहीं भी क मिनट चैन नहीं लेने देता है !

और सुमद्रा दिन-रात यह सोचा करती कि मैं माधुरी को अपने पास न कि माँ रखती तो अधिक अच्छा होता । रंजना को सौंप देती या अखिल के साथ ही उतारा कर देती, लेकिन दुविधा में जान थी, न अखिल से ही कह सकती थी कि इस छोटी-सी बच्ची को अपने साथ ले जाओ और न घर का मान ही तोड़ सकती थी

आकर फिर दूर हो गया तब वह नन्हीं-मुन्नी सी तनिक आगे और खिसक कर दोनों हाथ आगे बढ़े, पैर फिसल गये और वह अपने को न सम्हाल पाई; अचानक नीचे जा गिरी। किन्तु सुभद्रा कुछ भी नहीं जान पाई।

माधुरी सड़क पर गिरी थी। उसका सिर फट गया था और तारकोल काली सड़क रक्त से लाल हो गई थी। रास्ता चलने वालों में तहलका मच गया भीड़ इकट्ठी हो गई और हाहाकार मच गया। एक आदमी ने आगे बढ़कर माधुरी की क्षत-विक्षत देह को उठाया। वह निश्चेष्ट हो गई थी। तब वह भागा-मादरवाजे पर आया और जोर-जोर से आवाज देने लगा। धोबी ने कहा—“जी, कोई धुला रहा है।” और सुभद्रा नीचे आई तो सामने का दृश्य देखकर के मुँह से एक चीख निकल गई। उसने माधुरी के शव को अंक में छिपा लिया और फूट-फूट कर रोने लगी।

पड़ोसी दौड़ पड़े। खबर दूकान पहुँची। निखिल और अखिल भागे आये। माधौ दफ्तर भागा और एक आदमी कालेज। रानी आ गई। चन्द्र बाबू आगये और बात की बात में घर मुहल्ले के स्त्री-पुरुषों से भर गया। शारदा के प्रसव को आज सातवाँ दिन था। शिशु का नाल गिर गया और एक-दो दिन में छुट्टी मिलने ही वाली थी, तब तक वहाँ निखिल पहुँचा उसने भाभी को यह दुःखद घटना सुनाई। वह रोती-विलखती, छाती पीक जल्दी से छुट्टी ले देवर के साथ घर की ओर भागी।

वहाँ घर में सुभद्रा रों रही थी। रानी विलख रही थी और रंजना खबर सुनकर आ पहुँची थी। वह भी जार-बेजार हो रही थी। आँगन में प्रसाद खड़े थे। उनके सम्मुख सुभद्रा मुँह पर घूँघट डाले माधुरी के शव छाती से चिपकाये ऐसी फफक रही थी मानो माधुरी उसकी प्राण थी।

चन्द्रभान बाबू शोक प्रकट करते हुये लोगों से कह रहे थे—“होनहार वान होती है भाई। कौन जानता था कि खेलती-कूदती बच्ची एक मिनट में उठ जायेगी।”

सुभद्रा पास बैठी स्त्रियों से कह रही थी—“मैं नहीं जानती थी कि हाथ से बे हाथ हो जायेगी। तनिक देर के लिये उसको गोद से उतारा धोबी को कपड़े देने लगी तब तक यह गाज फट पड़ी।

सिर थोपा जायगा। हाय राम, मैं क्या करूँ ! किसी भी तरह तो कल नहीं है !” सहसा सुभद्रा धड़धड़ाती हुई कमरे में घुस आई और जो मन में आया वह बकने लगी ।

सुभद्रा की आदत हो गई थी कि जब से शारदा अस्पताल से वापस आई तब से वह अक्सर उसकी और अखिल की बातें सुनने की फिक्क में रहती थी, कि कहीं दोनों मेरी निन्दा तो नहीं कर रहे हैं । आज भी अखिल के आते ही दरवाजे के पास ओट में वह छिपकर खड़ी हो गई और जब मन्तव्य मिल गया तो जाकर त्रिया-चरित्र दिखलाने लगी । वह दोनों हाथों से अपना सिर पीट रही थी और चिल्ला-चिल्ला कर कह रही थी—“भान लो, बच्ची तुम दोनों के ही साथ होती और उसकी मौत आ गई होती तो क्या तुम रोक लेते ? यह कहो, मैं सौतेली हूँ और सौतेली माँ को बदनाम करने में कितनी देर लगती है । आने दो आज उनको दफ्तर से । तुम लोग ऐसे पात्र नहीं हो जो तुम्हारे साथ भलाई की जाय । मैंने नेकी की उसका यह फल मिला ! तो भइया, मैं तुम्हारी दुश्मन हूँ । मेरा साथ छोड़ो, और जैसे नीचे वाले कमरे में रहते थे वैसे ही जाकर रहो, क्योंकि आज को यह कहते हो कल को कुछ और कहने लगोगे, तो क्या मैं तुम्हारा मुँह पकड़ लूँगी ! वस वे आ जाएँ, मैं यह भ्रंश ही खत्म कर दूँगी ।”

सुभद्रा कहती रही और शारदा सिसकती रही । किन्तु अखिल बिना भोजन किये ही घर से चला गया था ।

×

×

×

रात को चन्द्रभान बाबू से सुभद्रा ने दोपहर की घटना खूब नमक-मिर्च मिलाकर सुनाई जिससे वे कुछ नहीं बोले, अपने प्रयत्न भर उसको टालने और समझाने की ही कोशिश करते रहे । लेकिन बाल-हठ, राज-हठ और त्रिया-हठ, पुरातन परम्परा की यह तीन कड़ियाँ हैं । सुभद्रा का त्रिया-हठ चल गया और दूसरे दिन दोपहर को शारदा फिर अपनी उसी गृहस्थी में आ गई जहाँ दो महीने पहिले थी ।

इस परिवर्तन को देखकर अखिल की चिन्ता बढ़ी और उसने तय कर लिया कि कुछ भी हो मुझे दिन-रात काम में जुटे रहना है । आखिर कहाँ तक मेहनत व्यर्थ जायगी । एक दिन ऐसा भी आता है, जब सूखे झूठ की जड़ में नई कोंपलें

जो उसको रंजना के हवाले कर देती । जान-बूझकर आदमी जो गुनाह करता है उसका उसे कभी दुःख नहीं होता, मगर अनजान में जो काण्ड हो जाता उससे मनुष्य जिन्दगी भर सोचता और पछताता रहता है । वह क्या करेगी अपने मन में कि मैंने माधुरी को यत्न से नहीं रखा, इसीलिये वह गई । मैं अपनी सफाई कैसे दूँ, कि दोष मेरा नहीं । होनहार बलवान् थी ।

अब नवजात शिशु एक महीने का हो गया था । शारदा ने मासिक कर सौर से शुद्ध हो रसोई बनाई थी । उसने अपने हाथों से सबको थापि परोसीं और घर-गृहस्थी का काम उसी भांति सम्भालने लगी, जैसे पहले करती थी ।

किन्तु सुभद्रा अब अपने मन्तव्य पर पहुँच जाना चाहती थी । वह चाहती थी कि अखिल और शारदा उसके परिवार में सम्मिलित रहें । वह अपनी खाल निकालने के प्रयत्न में रहती कि कोई बहाना मिले और मैं दोनों फिर से नीचे के कमरे में पहुँचा दूँ ।

एक दिन जब शारदा रोनी सी सूरत बनाये अपने कमरे में बैठी शिशु दूध पिला रही थी तभी आ गया अखिल । वह उसकी उदास मुद्रा को देख बैठ कहने लगा—“अब दुःख करने से कोई लाभ नहीं शारदा, माधुरी हम नहीं थी, उसको भूल जाओ ।”

यह सुनते ही शारदा की आँखें भर आईं और वह एक लम्बी साँस ले बोल उठी—“वह तो कर ही रही हूँ और करना पड़ेगा । लेकिन क्या तुम नहीं कर सकते थे जो विनोद के साथ उसको भी दुकान ले जाया करते ।”

“मौत के आगे किसी का जोर नहीं चलता है शारदा ! जब माधुरी मरना ही था तो दुकान ले जाने पर भी यही होता, जो घर में हुआ ।” अखिल यह बात एक गहरी सम्बेदना के साथ कही और कुरता उतार कर खूँटी टांगने लगा ।

तब तक शारदा फिर बोल उठी—“मेरी मति पर पत्थर पड़ गये थे । अस्पताल जाती और न माधुरी हाथ से बेहाथ होती । मैं.....”

“तो तुम्हारे कहने का मतलब यह है कि मैंने लापरवाही की, इसीलिए माधुरी गिर पड़ी । यही न ! मैं तो पहले ही जानती थी, कि सारा दोष

सिर थोप
है !” स
बकने ल
सुभ

तब से व
कि कहीं
दरवाजे
तो जाक
थी और
साथ हो
सौतेली
आज उ
जाय ।
मेरा सा
क्योंकि
मुँह पक

सुभ
किये ही

रा
मिलाक
समझाने
पुरातन
दूसरे त
महीने

इस
कि कुछ
व्यर्थ ज

जाती । न उसे अच्छी तरह भूख लगती थी, न प्यास । वह अब बहुत दुबला हो गया था ।

: १६ :

शांत चित्त में जब अशांति की लहरें उठने लगती हैं तो आदमी के हाथ-पैर फूल जाते हैं और वह बहुत कुछ करते हुए भी कुछ नहीं कर पाता । वह एक असहाय की भाँति सहारा खोजने लगता है, तब सहारे के नाम पर उसे असहयोग का भाजन बनना पड़ जाता है । हाथ पसारने वाले को दान कभी नहीं मिलता; लेकिन मेहनत करने वाले को उसका फल अवश्य मिलता है । किन्तु अखिल के साथ न जाने कौन-सा दुर्भाग्य जुड़ा था कि उसे अपने पथ पर आगे नहीं बढ़ने देता । वह दिन-रात एक करके चित्र बनाता रहता, क्योंकि उन पर पैसा जल्दी मिलता था । मगर होता यह था कि चार की जगह एक देकर लोग उसे उल्टे-सीधे और कई तरह से समझा देते कि मैं तो आपका प्रचार कर रहा हूँ । अगर डिजाइनें चल गईं तो माँग बढ़ेगी और आपके खर्च किये नहीं चुकेगा । अखिल को इससे सन्तोष नहीं होता था ।

धरती पर वसन्त उत्तर आया था । पतझड़ के बाद पेड़ों ने हरित परिधान धारण कर लिये थे और मौसम में गुलाबीपन आगया था । इस समय अखिल दिन-रात एक करके काम कर रहा था, जिससे किसी प्रकार उसकी गृहस्थी का खर्च चल रहा था । समय पर भोजन न करना और रात-रात भर जागना । यह सब वह सह्य नहीं कर सका और एक दिन अचानक बीमार पड़ गया ।

अखिल के पास सारा काम बैठने का ही था । इससे उसकी पाचन शक्ति मन्द पड़ गई थी और पेचिश ने उसे धर दबाया था । एक दिन वह आगया जब रात हो

निकल आती हैं। इसी तरह कार्य-व्यस्त व्यक्ति कभी भूखा नहीं रह सकता उद्योग मेरा काम है, वह मैं करूँगा।

अखिल कोरा कलाकार हो ऐसा नहीं। वह गुणवान था। उसमें विलस प्रतिभा थी। किन्तु प्रतिभा विकास चाहती है। और अखिल की जीवन-कवि विकसित होने की अपेक्षा कुण्ठित होकर कुम्हला रही थी। बाजार में उस डिजाइनें चलती थीं। लेकिन उनका मूल्य बहुत कम आंका जाता था। वह सि कला के साथ मूर्ति-कला पर भी खूब ध्यान देने लगा और साथ ही साथ श्रवण के क्षणों में गद्य और पद्य की ओर उसकी प्रेरणा पूर्ण रूप से जाग्रत उठती। तब विचार के क्षणों में कहानी, उपन्यास और लघु कथाएं वह लिख बढ़ करता और थकावट आ जाने पर मुनमुनाता हुआ कविता रचने लगता कभी किसी पत्र में कोई कविता छप गई या लघु कथा निकल गई तो पाँच सात रुपये के लगभग उसको प्राप्त हो जाते। यही गति आवरण चित्रों की भी उन पर भी ऐसा ही मिलता जो न मिलने के बराबर ही होता।

अखिल अब पहले की भाँति कभी निश्चिन्त नहीं रहता। वह अर्धचिन्तन में खोया रहता कि यह आवश्यक है कि मनुष्य हमेशा अपने कर्मक्षेत्र कमर कसे काम में जुटा रहे। लेकिन मैं व्यर्थ कब बैठता हूँ ! काम अलग-अलग होते हैं जैसे प्रत्येक व्यक्ति के विचार भिन्न-भिन्न ! जिसका जिसमें मन लगता वह वही करता है। मैं भी वलर्क बन सकता था, 'लॉ' कर सकता था, एम. बी. बी. एस. की डिग्री भी पा सकता था, परन्तु अपने अन्दर के कवि को कैसे कुछ डालूँ ! दुनिया का मुँह देखापन मेरे लिए एक बहुत बड़ी बाधा है, दलबर्ध का रोग हर समिति, प्रत्येक विभाग और प्रत्येक कार्य के साथ लगा हुआ है। कोई किसी का उचित मूल्य नहीं माप पाता। जमाना तो यह है कि मनुष्य ऐसा हो गया है कि जिधर से हवा चलती है उधर ही वह अपनी पीठ कर देता है लेकिन मैं ऐसा नहीं कर पाता। तभी लोग मुझे सनकी कहते हैं और आधा पागल। यह कुछ है, परिभाषा मेरी, दुनिया की निगाहों के सामने, तभी मेरा परिश्रम सफल होकर भी कभी सफल नहीं हो पाता।

अखिल के मस्तिष्क में दिन-रात ऐसी ही पता नहीं कितनी विचारधारा बहती रहती। जिससे उसके चेहरे की प्रसन्नता एकान्त उदासी में परिणत हो

: २० :

जब डाक्टर पाण्डे का लम्बा बिल चन्द्रभान बाबू के सामने आया तो वे निखिल से कहने लगे—“बिल की कोई बात नहीं इससे भी ज्यादा होता, लेकिन पाण्डे साहब अखिल को अच्छा नहीं कर सके । मेरा ख्याल है कि अब इलाज बदल देना चाहिए ।”

इस पर निखिल के बोलने के पहले ही सुभद्रा कहने लगी—“पुरानी आंव की शिकायत है, इसमें डाक्टरी इलाज काम नहीं देगा । पहले मैंने इसलिए नहीं टोका कि सब लोग मेरी बातों का दूसरा अर्थ लगाने लगते । किसी वैद्य का इलाज करो तभी यह रोग जड़ से जायेगा ।”

वैद्य ठीक रहेगा या डाक्टर ! सोचता हूँ पहले कुछ दिन किसी दूसरे डाक्टर की दवा करूँ । अगर वह भी नाकामयाब रहता है तो वैस्ट पटेल नगर में मेरे एक वैद्य मित्र हैं, उन्हीं के सुपुर्द कर दूँगा अखिल को । वे पुराने तबुर्वेकार हैं, शकल देखते ही नब्ज पहचान लेंगे ।” चन्द्रभान यह कहकर पत्नी और पुत्र का मुँह निहारने लगे ।

निखिल माँ-बाप के बीच में नहीं बोलना चाहता था । वह चुप रहा और सुभद्रा कहने लगी—“तो जो वाद में करना चाहते हो, वह अभी क्यों नहीं करते ? डाक्टरी इलाज में पैसा भर-मुट्ठी खर्च होता है और रोग कभी जड़ से नहीं जाता और वैद्य की दवाइयाँ देर में अपना असर पहुँचाती हैं, लेकिन रोग का नाम-निशान मिट जाता है । मेरी मानो और अखिल से भी पूछ लो । हर हालत में वैद्य का ही इलाज अच्छा रहेगा ।”

इस तरह सुभद्रा का सुझाव निखिल और चन्द्रभान पर पूर्णार्शों में छा गया । तब नीचे जाकर स्वयं चन्द्रभान ने अखिल से कहा—“आज शाम को मैं तुम्हें वैद्य शंकर दयाल के यहाँ ले चलूँगा; डाक्टरी दवा तो कारगर होती नहीं दिखाई देती । वे मेरे दोस्त हैं, अपनी कोशिश में उठा नहीं रखेंगे ।”

उत्तर में अखिल केवल इतना कह पाया—“जैसा आप उचित समझें ।”

अब वैद्य का इलाज आरम्भ हो गया था । उसने खाद्य-पदार्थों के लिये

वह चलने में अशक्त हो गया और घर से बाहर नहीं निकल सका। घर में जा घरेलू उपचार करती रही, मगर पेचिश बन्द नहीं हुई।

बात घर में सबको मालूम हुई और निखिल बाप के कथनानुसार उ नित्य डाक्टर के यहां ले जाने लगा।

शारदा अब बहुत चिन्तित हो गई थी। उसे लगता था कि माधुरी के ने ही उनकी यह गति कर दी है। काम पहले भी वे करते थे लेकिन इस नहीं कि चारपाई पकड़ लें। उसकी मृत्यु के बाद जब घर में कलह ने पुनः लिया तब से वह सजग हो गये। सुप्तावस्था में वह पहले भी नहीं थे, नींद से बैर कभी नहीं किया था। अब उनको यह धुन सवार हो आई थी, काम नहीं करूंगा तो बच्चे कैसे जियेंगे। इसलिए प्रायः वे रात-रात भर से छूटे रहते थे। वह जागरण ही अपच का कारण बन गया जिससे उनकी मर गई और व्याधि में वृद्धि हो गई। इलाज चल रहा है और रोग बढ़ रहा पता नहीं अभी कितने दिन तक वे रुग्ण बने रहेंगे, यह कोई नहीं जानता।

नित्य का नियम था कि निखिल अपने साथ रिक्शे पर बैठकर अखिल डिस्पेन्सरी ले जाता। दवा के पैसों का बिल चन्द्रभान बाबू के नाम बनता किन्तु कोई लाभ नहीं हो रहा था।

समय आगे बढ़ता गया। लगभग दो सप्ताह डाक्टर पाण्डे का उ चला और एक दिन उन्होंने यह घोषणा कर दी कि अखिल खाने-पीने में नहीं करता है, पेचिश पुरानी हो गई है, संग्रहणी हो जाने का भय है।

यह सुनते ही अखिल को परिवार की चिन्ता ने घेर लिया और शारदा सांस जहाँ की तहाँ रह गई।

आदमी के हाथ-पैर फुला देता है । मैं अपन पैरों पर खड़ा होना चाहता हूँ । निखिल, क्या तुम इसे स्वीकार करोगे ? बीमारी और आराम यह तो जिन्दगी में चलता ही रहता है । मेरा विश्वास है कि ये कार्य स्वाभाविक हैं और इनका चलना भी आवश्यक है । मैं अच्छा हो जाऊँगा, जब ग्रह अनुकूल होंगे । तुम चिन्ता न करो भाई ! माँ को सन्तुष्ट रखो । पिताजी को सुखी रखो और चाहे मेरी ओर से आँखें ही फेर लो, मुझे मन्ज़ूर है ।”

तब निखिल कहने लगा—“भइया, दिन बहुत हो गये हैं और तुम्हारी पेचिश अच्छी नहीं हुई । क्यों न किसी अच्छे फिज़िशियन का सहारा लें ? पिताजी को छोड़ो, वे पुराने चाल के आदमी हैं, और कछुआ चाल पसंद करते हैं । मैं कुछ और चाहता हूँ जो शायद उनके विचारों से सर्वथा भिन्न हो । मेरी राय है कि डाक्टर सान्याल का इलाज करना चाहिए । भइया, जो खर्च आयेगा मैं समूल हूँगा, न कहना माँ से न पिताजी से । भइया, आँतों का मामला है, अगर वे खराब हो गईं तो जिन्दगी दूभर हो जायगी । जो बताओ सो करूँ । वैद्यकी को इलाज कोई घुरा नहीं है लेकिन वह नौ दिन में ढाई कोस चलने वाला मसला में की है ।”

इस भाँति उस दिन दोनों भाइयों में देर तक बातें होती रहीं । शारदा—“भइयान्तुष्ट थी कि निखिल अपनत्व को नहीं भूला है और निखिल इस अवसर की कभी प्रतीक्षा में था कि किसी प्रकार मैं भइया को नीरोग कर पाऊँ तो रंजना का विश्वास मुझ पर दृढ़तम हो जायेगा ।

हैं ।
ता हूँ ।
हिनी
के अ
रहा है
। इ

: २१ :

उपचार चल रहा था और अखिल की यह स्थिति थी कि न तो यह लगता कि वह अच्छा हो रहा है और न यही कि रोग अपना विकराल रूप धारण किए है । डाक्टर ने तो केवल यही कहा था कि संग्रहणी हो जाने की सम्भावना

सख्त मनादी कर दी और भूख लगने पर मट्ठा पीने को बता दिया। इस अव अवखिल पूरे दिन मट्ठा पीकर रहने लगा और शहद मिलाकर पुड़ियाँ चाटता रहा।

जब से अखिल बीमार हुआ था तब से सुभद्रा और रानी ने शारदा नीचे खाना नहीं बनाने दिया। उसे बच्चों को सम्भालना होता था और उनकी परिचर्या का भी पूरा-पूरा ध्यान रखना था। वह बारबार टट्टी जाता अथमरा सा आकर बिछौने पर लेट जाता। कभी-कभी यदि उसके कपड़े बिजाते तो वे शारदा ही धोती थी। इसलिए कभी उसके लिए नीचे भोजन की आ जाती और कभी खाने के लिए उसको ऊपर घुला लिया जाता था। बीमार ही था और दिन भर सबके साथ खाया-पिया करता था।

गयाप्रसाद और फूलमती की भी चिन्ता बढ़ी। किन्तु गयाप्रसाद को भान बाबू ने पूरी तसल्ली दे दी कि देर जरूर लगेगी; लेकिन रोग समूल हो जायगा। उन्होंने यही बात जाकर फूलमती को समझा दी।

रंजना का आवागमन अब नित्य ही होता था। जिससे निखिल को तुष्टि हो जाती थी और वह सन्तोष कर लेता था कि रंजना सिद्धान्तों की अनुयायिनी है और वह मेरी किसी भी गतिविधि में असन्तुष्ट नहीं है।

एक दिन वह अखिल के पास जा शिष्टतापूर्वक कहने लगा—“भस्मन्तुष्टी दुनिया की निगाहों में मैं सौतेला भाई हूँ, लेकिन मुझे अपने से पृथक् कभी समझना। मैं तुम्हारे साथ हूँ, जैसा कहोगे वही होगा। माँ को छोड़ो, वे विचारों की स्त्री हैं। इसलिए दकियानुसीपन को अधिक महत्व देती हैं। तो समझदार हो भइया, मुझको बताओ मैं तुम्हारे किस काम आ सकता हूँ।

इस पर मुस्कराता हुआ अखिल बोल पड़ा—“निखिल, अगर दाहिनी शरीर से पूछने लगे कि उसका प्रयोग क्या है, तो यह बात आदिकाल के युग की प्रतीक है। लेकिन अब विज्ञान का युग है, व्यक्ति आगे बढ़ रहा है मनुष्य का कर्तव्य क्या है, इसे पहचानना हम सबका एकमात्र ध्येय है। न तुम इंकार कर सकते हो और न मैं। मैं अगर अकर्मण्य हूँ और मुझे कर्मनिष्ठ देखना चाहते हैं, तो उसका एकमात्र साधन यही है कि मेरे हाल पर छोड़ दें। सहयोग आगे बढ़ने के मार्ग को रोकता है और सह

अवश्यक काम होगा, उसी अटकाव के कारण तुम नहीं आ पाईं ।” यह कहकर जीवन ने तत्क्षण ही प्रसंग को दूसरी ओर मोड़ दिया । वह बोला—
 “अखिल भाई बहुत दुबले हो गये हैं । कितने दिन हो गये बीमारी को ?”

रानी को यद्यपि जीवन की यह दुनियादारी अच्छी नहीं लगी, लेकिन फिर भी शिष्टाचारवश उसने कह दिया— ‘करीब एक महीना हो रहा है ।’

इसके बाद ही रानी फिर कहने लगी—“जीवन बाबू, अगर मैं आपके यहाँ किसी कारणवश नहीं पहुँच सकी तो आपको तो आना चाहिये था । आपको मेरा तनिक भी ख्याल नहीं रहता ।” बात समाप्त करते-करते वह हँस पड़ी ।

और हँसी आगई जीवन को भी । वह बोल उठा—“कौन कहता है, मैं तुम्हारे घर नहीं आता । अभी कहाँ बैठा हूँ, जानती हो ?”

“अच्छा ! तो आप हँसी कर रहे हैं । यह मेरी शिकायत का कितना सुन्दर जवाब दिया आपने कि तबियत प्रसन्न हो गई ।” अन्तिम शब्द पूरे करते-करते रानी खिलखिला पड़ी और जीवन भी बिना हँसे नहीं रहा ।

शारदा कमरे में आ रही थी और अखिल भी काँखता हुआ चारपाई पर आकर बैठ गया तो रानी यह कहकर वहाँ से चल दी, “अभी आई भाभी, जीवन बाबू के लिये कुछ नाश्ता ले आऊँ ।”

शारदा और जीवन की भी बातें हुईं । रानी पलक मारते ही जलपान की सामग्री ऊपर से ले आई । तभी निखिल कपड़े पहन तैयार होकर आगया और अखिल से कहने लगा—“चलो भइया, मैं रिक्शा ले आया हूँ ।”

अखिल ने थोड़ी देर प्रतीक्षा की । जब जीवन नाश्ता कर चुका तो वह उस के साथ बाहर निकल आया । रानी दोनों के पीछे-पीछे बाहर की चौखट तक गई । अब दोनों भाई रिक्शे पर बैठ गये थे और जीवन उनके साथ-साथ साइकिल पर बैठा बातें करता हुआ औषधालय जा रहा था ।

है, लेकिन वैद्य ने स्पष्ट कह दिया कि यह संग्रहणी का रोग है, अच्छे से समय लगेगा।

इस तरह अखिल चारपाई का बन्दी बना हुआ था। उसे धीरे-धीरे एक महीना हो गया। मट्टे का सेवन वह नित्य करता था और परहेज का मामले में हमेशा बहुत ध्यान रखता था।

दिन बहुत हो गये थे। जीवनलाल की अखिल से भेंट नहीं हुई। ए निखिल की दूकान पर पहुँचने पर उसे पता चला कि कवि को संग्रहणी हो गया है, तो वह घर पर उसे देखने आया।

नीचे के कमरे में अखिल को देखकर जीवन चौंका, यह नहीं हुआ। उसकी स्थिति से पहले से ही भिन्न था। वह चाहे अखिल के घर एक बार हो, लेकिन रानी नित्य ही उसके घर आती-जाती रहती थी। इससे एक दूर परिस्थितियों के साथ-साथ घर का हाल-चाल भी परस्पर मिल जाता था।

जिस समय जीवन अखिल के पास आया तब प्रातः के आठ बजे थे। और सुभद्रा दोनों चारपाई के पास नीचे बैठी थीं और शारदा बाहर नल के पास बैठी बच्चों के कपड़े धो रही थी। पहुँचते ही जीवन ने शिप की रस्म पूरी की। फिर अखिल के पास ही चारपाई पर बैठ गया। बातें होने लगीं।

सुभद्रा थोड़ी देर बैठकर ऊपर चली गई और निखिल कमरे की तक आ, भाई से यह कहकर लौट गया—“अभी तैयार होता हूँ भइया, यहाँ जल्दी पहुँचना है, आज कुछ देर हो गई है।”

अखिल ने केवल हाँ द्योतक सिर हिला दिया। इतने में उसके पेट ऐंठन मालूम हुई और वह लोटा उठाकर टट्टी की ओर चल दिया।

अब कमरे में रानी थी और जीवन था। रानी मुग्धा हिरणी की अपनी चंचल आँखों से जीवन के भूरे घुंघराले बालों को निहारती हुई धीरे बोली—“आप नाराज तो नहीं हैं, क्योंकि जब से भइया बीमार तब से मेरा कहीं भी जाना नहीं हो पाता है। कालेज की बात और है। यहाँ बहुत दिनों से नहीं पहुँच पाई। डरती थी कि कहीं आप रुष्ट न हों।

“नहीं रानी, जब तुम नहीं आती हो तो मैं यह सोच लेता हूँ कि

यह प्रश्न करते समय निखिल के चेहरे पर हँसी की रेखा दौड़ गई थी और रंजना अपने भोलेपन के साथ अनभिज्ञ की नाई कह रही थी—“तुम्हीं बताओ, मैं नहीं जानती।”

रानी उस उत्तर में निखिल ने बीच का एक पृष्ठ खोल दिया। इस पर रंजना का चित्र था। उसी की ओर इंगित कर वह हँसी के मिस बोल उठा—“यह।”

“हुम, मैं तो समझी थी कि किसी दूसरे व्यक्ति की तस्वीर है, जो आपको अधिक अच्छी लगी।” आप भी तमाशा करते हैं, अपने अलबम में मेरा फोटो लगा रखा है। अगर कहीं माँ, पिताजी या और किसी ने देख लिया तो क्या कहेंगे?” रंजना कुछ चौंकती हुई यह कह गई जिस पर निखिल ने तत्क्षण उस की शंका का समाधान कर दिया। वह बोला—“इसमें चौंकने की कौन-सी बात है। पूरे परिवार के फोटो लगा रखे हैं मैंने, जिसमें तुम हो और गोपेश आदि लोककर्म ! फिर क्यों कुछ कहेगा कोई ? तुम बहुत भीरु हो रंजना ! तुम्हारे घर से आओ तब तक मेरे घर तक सभी जानते हैं कि हम दोनों एक दूसरे के होने जा रहे हैं। फिर ऐसी बातें नहीं सोचनी चाहिए।”

रंजना शरमा गई और उसने दृष्टि नीची कर ली; फिर धीरे-धीरे संकुचित है। माँस्वर में बोली—“आप तो बहुत दूर की सोचने लगे। मुझे.....।”

रंजना की बात में व्याघात डाल निखिल मुस्कराता हुआ बोल पड़ा—“इस बीच और दूरी की मैं अब दूर नहीं रहने दूंगा; निकट की दूरी कोई दूरी नहीं होती।”

रंजना कुछ नहीं बोली और निखिल बराबर कहता गया—“मैंने तुमको इतना दूर भी अपने मन से एक क्षण के लिए भी नहीं हटाया है रंजना, और न यह मेरे लिए गोपेश की बात है। यही कारण है कि तुम्हारा चित्र अलबम में रखना पड़ा। मैं कि निर्भीक.....।”

सहसा चौंके से सुभद्रा ने आवाज दी—“निखिल, तुम भी आ जाओ। खाना तैयार है।”

निखिल ने माँ की आवाज सुनी और रंजना से यह कहता हुआ बाहर जाने लगा—“अच्छा अब चलता हूँ। माँ बुला रही हैं।”

“अच्छा।” रंजना यह कह उसके पीछे-पीछे कमरे से बाहर निकल आई।

जब रंजना और निखिल कमरे से बाहर आ रहे थे तो रानी सामने आकर

: २२ :

एक दिन रंजना जब निखिल को देखने आई तो आग्रह करके रानी उस अपने साथ ऊपर लिवा गई। वहाँ वह उसे अपनी नई कशीदे की कापी दिखा लगी जो उसको कल चन्द्रभान बाबू ने लाकर दी थी। सुभद्रा तब रसोई में निखिल के दूकान जाने का समय हो रहा था और देर हो रही थी चन्द्र बाबू को भी, क्योंकि दस बजने वाले थे।

सहसा सुभद्रा ने जोर की आवाज दी—“रानी, क्या कर रही है बेचारी? आ तनिक हाथ तो बटा ले।”

“आई माँ !” कहती हुई रानी उधर चल दी और रंजना चल दी नीचे। ओर । अचानक मुस्कराता हुआ निखिल उसके सामने आ मार्ग रोककर भी ! फिर हो गया। वह बोला—“रंजना ! अभी आई और अभी चल दीं। आओ तनिक देर बैठो, फिर चली जाना।”

रंजना ठिठककर वहीं पर खड़ी हो गई और संकोच-भरी वाणी में बोले—“कैसे हैं आप, मैं आपके कमरे में चलकर बैठूँ, मुझे संकोच लगता है। माँस्वर में कहेंगी, कि रंजना कितनी निर्लज्ज है ! चलने दीजिए।” यह कहकर उसने आगे बढ़ाया लेकिन निखिल ने बाधा दी। वह बोला—“इसमें संकोच और डूरी की क्या बात है ? तुम्हें तो इस घर की बहू बनना ही है फिर अशिक्षित की तरह छोटी-छोटी बातें क्यों करती हो। आओ तुम्हें अपना अलबम दिखभी आप जिसमें करीब-करीब सबके फोटो लगा रखे हैं मैंने और एक तुम्हारा भी—आग्रह की वजह से।”

निखिल के इस आग्रह पर रंजना कुछ कहने ही जा रही थी कि निखिल ने पहले ही बोल पड़ा—“आओ, तुम तो खड़ी हो। पढ़े-लिखे लोगों को संकोच का संकोच नहीं होना चाहिए। इसी बहाने दो बातें हो जायँगी, वैसे तो तैयार है करने का कभी मौका ही नहीं मिलता है।”

अब रंजना इन्कार नहीं कर पाई। वह धीरे-धीरे निखिल के पीछे उसके कमरे में पहुँच गई। वहाँ निखिल उसको अलबम खोलकर दिखलाता बोला—“मुझे इसमें केवल एक चित्र अच्छा लगता है। जानती हो कौन-सा

को लाने ! चलो, थाली परोसी रखी है ।”
 यहीं हो। निखिल ने माँ को जवाब देने की हिम्मत नहीं की। वह नीचे-नीचे देखता
 जवाब सुनकर रसोई-घर की ओर चल दिया। इधर रंजना के पाँव भी आगे बढ़े। वह
 ानी ! बातों से होंठ चबा रही थी और धोती के एक छोर को दोनों हाथों से एंठ रही
 थी। यह देख सुभद्रा उसके पास चल आई और उसके सिर पर हाथ रख उपड़ा-
 करती चुपड़ी करती हुई स्नेह प्रदर्शित कर बोली—“बुरा न मानना बेटी ! मैं तुमको
 निखिल कुछ नहीं कहती। निखिल को इसलिए डांटना पड़ा कि लड़के कुछ आज्ञादा
 रिस्तिवृत्तभाव के होते हैं। वे अदब-कायदे का ध्यान बिल्कुल नहीं रख पाते। जाओ
 भइया बेटी, मैं भी चलो !” यह कह सुभद्रा आगे बढ़ी। लेकिन दो कदम चलकर वहीं
 रुक गई और घूमकर जाती हुई रंजना से कहने लगी—“बेटी रंजना आओ !
 बाद सुनम भी खा लो, मैं तो बातों में कहना भूल ही गई।”

था, कि रंजना ठहर गई और अतीव शिष्ट एवं शान्त स्वर में बोली—“माँ, अभी
 जिसके सामने नहीं है, दोपहर के पहले मैं कभी नहीं खाती।” यह कहने के साथ ही वह
 मान बाधवहाँ से जल्दी-जल्दी चली गई कि कहीं सुभद्रा और बातें न करने लगे।

तुहसा उ किन्तु सुभद्रा ऐसा गुड़ नहीं थी कि जिसको चींटे खाते। दुनियाँदारी करके
 तीली उसने केवल रंजना का मुँह छुआ था। उस पर जब आशातीत उत्तर मिल गया
 उस वैराग्यो फिर मौखिकता ने अपना रूप और अधिक विस्तृत कर लिया। वह झूठी
 आगई सी हँसकर बोली—“हाँ बेटी, मेरी भी आदत कुछ ऐसी ही है। सबसे बाद
 पककर मैं खाती हूँ और तब तक दोपहर हो जाती है।”

हूँ और रंजना सुभद्रा की शायद पूरी बात नहीं सुन पाई थी और सुभद्रा वहाँ से
 ना की आ अपना गुस्सा निखिल पर उतारने लगी—“तुम बड़े निर्लज्ज हो निखिल !
 अपना सबके सामने अपनी होने वाली पत्नी से बातें करते हो, शर्म नहीं आती तुम्हें ?
 अब समझदार हो। आगे मुझे टोकने का मौका मत देना। और कैसी है यह
 रंजना, कि जो तनिक भी नहीं सकुचाई ? अच्छी लड़की है, लगता है जैसी बहन
 ल से कहें यह उससे भी चार हाथ आगे ! राम-राम !”

कड़ा हो सुभद्रा बड़बड़ाती रही और निखिल चुपचाप भोजन करता रहा।

हैं शर्म × × ×
 र गप्पें निखिल जब दूकान पर पहुँचा तो वह सोच रहा था कि रंजना मर्यादा का

खड़ी हो गई—शायद वह निखिल को बुलाने आई थी। लेकिन रंजना को सामना ! चलो
देख वह एकदम चौंक गई और कहने लगी—“अरे रंजना ! अभी तुम यहीं हो। निखिल

रंजना कुछ सितपिटा गई और वह जल्दी में रानी को कुछ भी जवाब न दे पाई। तब परिस्थिति को सुधारता हुआ निखिल बोल उठा—“रानी ! रातों से हम
अभी तैयार नहीं हुईं, दस तो यहीं बज रहे हैं।”

रानी समझ गई कि रंजना निखिल के कमरे में बैठी उससे बातें करती चुपड़ी कर
और अब जा रही है और बातचीत का विषय बदलने के लिए ही निखिल कुछ नहीं
से ऐसा प्रश्न कर रहा है। वह प्रकट में उस समय की चल रही परिस्थिति-व्यवस्था के
अनुसार सरलता के साथ कह गई—“मुझे कितनी देर लगती है भइया खेटी, मैं भ
तैयार ही समझो। खाना खाया और चल दी।”

रसोई के बगल में चन्द्रभान बाबू का कमरा था और उसके बाद सुभद्रा भी ख
का। ठीक इन दोनों कमरों के सामने दो कमरे और थे। एक बन्द था, कि रंजन
अखिल और शारदा रहते थे और दूसरा कमरा निखिल का था, जिसके सामने नहीं
छत पर खड़े निखिल, रानी और रंजना बातें कर रहे थे। चन्द्रभान बाबू वहाँ से ज
जल्दी थी। वे भोजन से निवृत्त हो बाहर आ कुल्ला करने लगे। सहसा ऊ किन्तु
दृष्टि इन तीनों पर गई। वे चुपचाप अपने कमरे में चले गये और तौलिये उसने केव
मुँह-हाथ पोंछते हुए यह सोचने लगे कि शायद निखिल रंजना के पास बैठे हों फिर म

और सुभद्रा निखिल के आने में देर समझ रसोई के बाहर आ गई थीं ही हँसक
उसने तीनों को खड़े बातें करते हुए पाया तो कुछ खीझ गई और लपककर में खाती
जा तमककर कहने लगी—“वाह निखिल, मैं कब से बुला रही हूँ और रंज
बातों से ही फुरसत नहीं।” यह कहकर सुभद्रा ने ध्यानपूर्वक रंजना की आ अपना
देखा और उसकी दृष्टि उस पर ऐसी टिककर रह गई कि रंजना ने अपना सबके साम
नीचे झुका लिया। अब समझ

अब सुभद्रा के मुँह से व्यंग्य भरा स्वर निकल पड़ा—“अरे रंजना, रंजना, वि
समझी थी कि तुम चली गई और तुम यहीं थीं ! अच्छा, निखिल से बातें यह उस
रही होंगी ! बड़ा बातूनी है !” और इसके बाद ही उसका रुख कड़ा हो सुभद्रा
और आँखें निखिल को घूरने लगीं। वह तेज गले से बोली—“तुम्हें शर्म
आती निखिल, जिस लड़की से रिश्ता हो रहा हो उसके साथ बैठकर गर्प्ये

। फोड़ सुरभित बयार रात के वातावरण में महक रही थी। अन्धेरा निखर रहा था।
खेगा तो रंजना सोच रही थी और ऐसे ही विचारों की आंधी चल रही थी निखिल के
। वह तो मानस-प्रदेश में।

। मिनटः

यह काष्

ने अपना

कठोर ज

वारे व्यं

मन्न का

: २३ :

र-वार क यदि एक बार आदमी को किसी के प्रति अविश्वास हो जाय तो वह
र दिन विश्वास में बदला तो जा सकता है; लेकिन उसमें बल नहीं रहता। ऐसे ही
। माँ ने फूलमती को पहले यह सन्देश हुआ कि अखिल और शारदा को सुभद्रा ने अलग
डे हाथों करने की सोच ली है, तभी दोनों को गृहस्थी से अलग कर दिया है। किन्तु
माफ़ी फिर उसने रंग बदला; विनोद बीमार हुआ, सुभद्रा ने अपना अपनत्व पूर्णार्थों
। मुझे में प्रदर्शित किया, जिससे फूलमती और गयाप्रसाद दोनों यह समझने लगे कि
निखिल अखिल को रास्ते पर लाने के लिए ही उसकी विमाता इतनी सख्त है। वह
। मिला उसका अहित नहीं चाहती है। मगर उसके बाद पुनर्निर्वासन दम्पति को यद्यपि
। मीठी व असह्य तो नहीं था, लेकिन मन को कचोटता रहता था। जहाँ एक दिन दोनों
व गई मे प्राणी इस ओर से निश्चिन्त थे कि रंजना के लिए वर नहीं खोजना होगा,
त बिगड़े निखिल उसके लिए सर्वथा उपयुक्त है; वहाँ अब अन्तर्द्वन्द्व चल रहे थे कि जब
न वे बेच शारदा को सुख नहीं मिला तो रंजना की कैसी कटेगी। मान लिया निखिल
जव ऊ कमाता है और घर में कोई अभाव नहीं है, परन्तु क्या सुभद्रा के साथ रंजना का
रानी न निर्वाह हो सकेगा! सुभद्रा पत्थर जैसी सख्त है और रंजना फूल-सी कोमल!
। बात यह नहीं चलेगा। मंगनी नहीं हुई है, बातचीत नहीं चली है, केवल दोनों पक्षों
की ओर से एकमात्र लगाव था, झुकाव था और था मंतव्य! मन में बनाई
हुई योजना को प्रकट में लाने के पहले ही सहज-स्वभाव बदला जा सकता है।
मानव स्वभाव विचित्र और विलक्षण है। उसमें परिवर्तन ही प्रधान है

कितना ध्यान रखती है जबकि मैं चित्त में स्थिरता नहीं ला पाता । फोटो सुरभित व
लिए तो वह कहती थी कि आपके अलबम में कोई मेरा चित्र देखेगा तो रंजना सो
कहेगा ? वह यहाँ तक डरती है । मैंने नाहक ही उसे विवश किया । वह तो मानस-प्रदे
रही थी; किन्तु मैं अपना लोभ संवरण न कर सका कि उससे दो मिनट
कर लूँ ! अचानक ही अलबम दिखाने की बात सूझ गयी और यह काण
गया कि मैं शर्मिन्दा हुआ । वह बेचारी कटकर रह गई, और माँ ने अपना
अदा कर दिया । दुनिया का दस्तूर है कि माँ का मीठा स्नेह और कठोर
ही पुत्र का निर्माण करते हैं । खड़े पिताजी भी थे । लेकिन वे बेचारे व्यथ
सिर-दर्द कभी मोल नहीं लेते हैं । यह तो दुनिया भर की सारी समझ का
माँ ने ही ले रखा है ।

निखिल का मन दूकान में बिल्कुल नहीं लग रहा था । बार-बार यदि
मस्तिष्क में यह बात टकरा जाती थी कि रंजना शायद अब दो-चार दिनों विश्वास
घर ही न आये । बहुत भेंप गई थी वह । चलो यही अच्छा हुआ जो माँ ने फूलमती
कुछ नहीं कहा । मेरी तो जान सूख रही थी कि मेरे बाद ही वे आड़े हाथों करने की
रंजना को । अब जब रंजना से भेंट होगी तो उसके सामने मैं माफी फिर उसने
स्वाहिशगार हूँगा कि रंजना, मेरे कारण तुमको शर्मिन्दा होना पड़ा, मुझे प्रदर्शित
कर दो । अखिल क

ऐसे ही रंजना मन ही मन सोचती रही कि व्यर्थ के लिए मैं निखिल
कमरे में गई । न जाती और न उनकी माँ को कुछ कहने का मौका मिलता
पूरी बहूरूपिया हैं वे—मिनटों में रूप बदलती हैं । मुँह पर मीठी-मीठी प्राणी इस
करती हैं और पीछे वाल की खाल निकालती हैं । कहां जाकर पहुँच गई मैं निखिल
पछता रही हूँ कि अगर माँ को यह बात मालूम हो गई तो वे बहुत बिगड़े शारदा क
मुझ पर । दीदी के कानों तक तो सब पहुँच ही चुका होगा, लेकिन वे बेच कमाता है
देवी हैं । इधर की उधर करने की उनकी आदत नहीं है । मैं अब जब निर्वीह हो
सामने जाऊँगी तो एकाएक सामने मुँह करते नहीं बनेगा । मरी रानी, यह नहीं
जबरदस्ती ऊपर खींच ले गई । ईश्वर जो करता है अच्छा करता है । बात की ओर
पर समाप्त हो गई, यही क्या कम है । हुई योजन

दिन का प्रकाश अब रात के अन्धकार में बदल गया था और व

समयानुरूप हूँ ।”

फूलमती पति की बातों पर कुछ सोचने लगी और उसको चुप देख गया—
साद फिर कहने लगे—“अब और कुछ सोचना-विचारना व्यर्थ है । मेरी
मझ से जीवन सब तरह ठीक रहेगा । और दस हजार कम नहीं होते हैं ।
केसर रामानन्द जरूर मान जायेंगे ।”

“हां ।” फूलमती ने यह कहकर एक दीर्घ उच्छ्वास ली और धीरे से
बोली—“सोचा कुछ और था और होने कुछ और जा रहा है । रंजना समझदार
लड़की है, मुँह से भला वह क्या कहेगी; लेकिन मन उसका जरूर छोटा हो
जायेगा । शारदा की ससुराल से उसे बड़ा लगाव था । वह...”

“लेकिन तुम यह क्यों भूल जाती हो शारदा की माँ, कि हम लोग उसकी
सफाई कर रहे हैं । सोना-चांदी और रुपया-पैसा आदमी की क्षुधा शांत
नहीं कर सकते । उस घर में बड़े भंडार हैं, चौबीस घण्टे की कलह, चार ही दिन
पर अन्न सूखकर कांटा हो जायेगी रंजना । उसका मन दुखेगा, तुम यह न सोचो !
रंजीत भी इस पर खूब विचार कर चुका । कल मैं रामानन्द के पास जाऊँगा और
उसे सिद्दी सप्ताह ब्याह पक्का कर लूँगा ।” गयाप्रसाद ने पत्नी की बात काटकर
कई चीजें यह सब एक साँस में ही कह डाली । फूलमती चुपचाप बैठी सुनती रही । उसकी
निखिलचुप्पी ने गयाप्रसाद को शान्ति नहीं लेने दी और वे फिर बोल उठे—“एक बात
उठती और है, शायद अभी तुम वहाँ तक नहीं पहुँची होगी !”

“क्या ?” फूलमती आश्चर्यपूर्वक पति की ओर देखने लगी और गयाप्रसाद
कहने लगे—“यह भी हो सकता है कि मैं रंजना के ब्याह की बात लेकर चन्द्र-
मान बाबू के पास जाऊँ और लड़के की माँ इन्कार करदे । वह इसलिए कि
रंजना शारदा की सगी बहन है । अगर वह घर में आगई तो फिर अखिल और
शारदा की खूब चैन से कटेगी । कई बातें पैदा हो सकती हैं । इसलिए मेरी समझ
से निखिल से ब्याह करना उचित नहीं । बोलो, तुम्हारी राय क्या है ?”

फूलमती कई क्षण तक मौन रही, फिर ऊबकर लम्बी साँस लेती हुई
बोली—“मैं क्या बताऊँ, जो ठीक समझो करो । ब्याह तो इस साल करना
ही है ।”

यद्यपि फूलमती का उत्तर पूर्ण सन्तोषजनक नहीं था, उसमें द्विविधा और

जो उसका विश्लेषण करता रहता है, जिससे मनुष्य सोचता है और समझता है। पछताता, रोता और हँस देता है। ऐसा ही परिवर्तन था सम्मुख फूलमती गयाप्रसाद के ! अब वे सोच रहे थे कि दहेज उतना ही देना होगा जितना शास्त्र के व्याह में दिया था। फिर लड़का क्यों न मनमाना खोज लिया जाय ! मन पचकता हो वहाँ पैर नहीं रखना चाहिए। तब उनकी दृष्टि में जीवन, प्रोफेसर रामानन्द का एकलौता ! वे दोनों मुग्ध हो गये।

योजना कार्य का रूप लेने जा रही थी और रंजना को इसकी तनिकली खबर नहीं थी।

एक दिन रात को द्वितीय पहर में जब फागुन की गुलाबी हवा बहने लगी थी और शुक्ल पक्ष की तृतीया का कँठोला चाँद नीलाम्बर में तैर रहा तारे झिलमिला रहे थे; झिल्ली और भीगुरों की शहनाई मधुर आकर्षक सन्ध्याई कर लित स्वर में बज रही थी—चीं-चीं-चीं। तब छत पर खपरैल के नीचे किहीं कर चारपाई पर गयाप्रसाद लेटे थे और फूलमती नीचे बैठी उनके सिर पर शीशू सुखकर आँवला का तेल मल रही थी। रंजना नीचे गोपेश के पास लेटी सो रही थी भी इस घर में रात की नीरवता व्याप्त हो रही थी। आज सायं से गयाप्रसाद के सिर पर सप्ताह इतना दर्द था कि आँखें निकली पड़ती थीं। सहालगों सिर पर आ गई थीं यह सब ए वे रंजना के लिए दृढ़ निश्चय नहीं कर पाये थे कि उसका व्याह निश्चित चुप्पी ने ग करें या जीवन से। अधिक सोचने की क्रिया में मस्तिष्क गर्म हो उठता और है, श शिराओं में रक्त का प्रवाह इतने वेग से होने लगता है कि आदमी पीड़ा से पटाने लग जाता है। यही गति गयाप्रसाद की हुई थी। वे नींद लाने के निकलने लगे पलकें मूँदते; लेकिन वे फिर खुल जाती थीं। वे बहुत थके और धीमे स्वप्नमान वावू फूलमती से बोले—“शारदा की माँ, फागुन आधा हो गया और रंजना के रंजना हम लोग अभी कुछ भी तय नहीं कर पाये। वह आगे पढ़ना चाहती थी शारदा की लेकिन बी० ए० के बाद पारसाल मैंने इसीलिए उसका पढ़ना बन्द करा दिया था, कि अगली सहालगों में कन्यादान ले लूँगा। मगर वह सम्भव नहीं हुआ चन्द्रभान वावू के घर में एक न एक भँझट लगा ही रहा, जिससे उनसे सम्बन्ध में बातें ही नहीं हो पाईं। अब तुम्हारा भी मन नहीं है और मैं चाहता हूँ कि निखिल का ख्याल छोड़कर इसी साल रंजना का व्याह जीवन

त्तोप अव
 स प्रसंग
 ने का वहा
 द के यहाँ क्यों जा रहे हैं ? मेरी कुण्डली साथ ले जाने का मतलब स्पष्ट है कि
 जीवन के साथ मेरा रिश्ता करना चाहते हैं । जिस बात का मुझे डर था
 खिर वही हुई । मैं मन ही मन इस गुप्त भय की आशंका से आतंकित बनी
 होती थी कि निखिल के घर की रोज नई तब्दीलियाँ, कलह-पात और मनमुटाव
 हीं माँ और पिता जी को चौंका न दें, जो वे निखिल के साथ मेरा सम्बन्ध
 करने का विचार ही बदल दें । इसे कहते हैं भाग्य ! जिसकी उम्मीद थी वह न
 और निखिल कर अब और कुछ मिलने जा रहा है । देखो क्या होता है । अभी से सारी
 वह बहुत तें सोच डालूँ, यह कुछ समझ में नहीं आता ! मेरी तो मति इस समय किसी
 । बाधा जैसे हर ली है । जिसकी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी, उस व्यक्ति की
 का मन पत्नी बनने जा रही हूँ । जो मुकद्दर में होता है वह मिल कर रहता है ।
 साथ रंजना के हाथों में मटर की फलियाँ फिसल रही थीं । दो छोटी-छोटी
 औरियाँ फुदकती हुई थाली में पहुँचीं और चोंच में मटर दाब फुर्र से उड़ गईं ।
 गी । तभी उसका ध्यान थाली और मटर पर आकर केन्द्रित हो गया और गौरियाँ
 लखाने से बाँगन में आ फिर फुदकने लगीं ।

: २४ :

रोगावस्था में रोगी को जितना कष्ट मिलता है उससे कहीं अधिक उसकी
 करो । परिचर्या करने वाला भ्रष्ट में पड़ जाता है । शारदा परिचारिका थी और अखिल
 रण ! पति को पूरा आराम मिलना चाहिये । उसको किसी प्रकार का कष्ट न
 वहीं पर ही, इस बात का ध्यान वह सदैव रखती थी । दोनों बच्चे सम्हालना, अखिल
 और उनके कपड़े धोना तथा उपचार, साथ ही पति के समुचित पथ्य का ध्यान
 रखना—यह सब करते-करते शारदा थक गई थी ।
 यद्यपि फागुन का महीना था, सर्दी बहुत कुछ कम हो चली थी; लेकिन

असमंजस दोनों ही मिश्रित थे; फिर भी गयाप्रसाद को यह सन्तोष अबन्द के य गया था; कि मैं जो कहूँगा फूलमती उसे मान लेगी। वे फिर उस प्रसंग के जीवन न कर इधर-उधर की बातें करने लगे। तत्पश्चात् पलकें मूँद सोने का वह खिर व फूलमती को वहाँ से जाने के लिए विवश कर दिया।

×

×

×

फूलमती विस्तर पर आँदर तक करवटें बदलती रही। उसके सामने ही माँ के व्याह की समस्या थी। एक ओर जीवन था और दूसरी ओर निखिल के स्वभाव में दिन-प्रतिदिन हो रहे परिवर्तन को देखकर वह बहुत होती थी कि वह शारदा और अखिल का बहुत मान करता है। बाधा थी जो एकमात्र घर की स्वामिनी थी। वस इसीलिये फूलमती का मन था और वह पति से साफ-साफ नहीं कह पाई कि जीवन के साथ रंजना व्याह कर ही दो।

रात बीत गई। फूलमती की कहीं सबेरे जाकर आँख लगी। तभी चढ़े तक वह सोती रही। फिर जब उठी तो स्नान करके गुसलखाने से निकली ही कि गयाप्रसाद उसके सामने आगये। कुरता-सदरी पहने वे कहीं को तैयार होकर आये थे। आते ही पूछने लगे—“अच्छा तो मैं अब जा प्रोफेसर रामानन्द के घर। आठ बजे हैं, कालेज जाने के पहले ही उनसे दे बैठ कर बात करने का मौका मिल जायेगा। लाओ, रंजना की कुण्डली मुँदो; अगर बात बन गई तो ज्योतिषी जी से भी मिलता आऊँगा।”

फूलमती ने कुछ जवाब नहीं दिया। अपने कमरे में जा अलमारी से निकालने लगी। रंजना आँगन में बैठी मटर छील रही थी और गोपेय मटर के दानों को बार-बार थाली से उठाकर मुँह में डाल लेता था।

गयाप्रसाद पत्नी के कमरे में गये और कहने लगे—“जल्दी करो। काम में देर नहीं होनी चाहिये।”

कुण्डली मिल गई थी। उसको पति के हाथों में दे, फूलमती वहीं पर रह गई और गयाप्रसाद बाहर चले गये।

×

×

×

रंजना ने बाप की बातें सुनीं और सुनते ही समझ गई कि वे प्रोफेसर

जाड़े से कुछ-पाँच दिन में तय हो जायेगी । उसने निखिल पर यह भेद प्रकट नहीं किया ।
 दिन उस राज को सीने में दबाये वह उससे मिलती, आवश्यक बातों का जवाब देती और
 रा का आश्रयः उसके सम्मुख अपने को किसी न किसी कार्य में व्यस्त रखती । निखिल
 समझता था कि रंजना पराये घर में संकोच करती है । उस दिन जब माँ ने
 ; वच्चे मुझको डाँटा था उस घटना से अब वह सजग रहने लगी है ।

सुभद्रा भी उसी दिन से रंजना पर खीझी हुई थी । लेकिन बीमारी और
 थी । गृहस्थी दोनों उसके अकेले सम्हालने के बश की नहीं थी । रानी नई रोशनी
 में सिर नहीं की लड़की थी । उस पर उसका जोर नहीं चलता था । अतः रंजना का रहना
 लये तुम उसे नहीं खल रहा था ।

रानी को रंजना का वहाँ टिक जाना बिल्कुल अच्छा नहीं लगा । वह
 र फूलमती जानती थी कि रंजना उसके घुमक्कड़पन को खूब जानती है । दुनिया को कहने
 की का मौका मिल सकता है कि जब घर में दो-दो मरीज पड़े हैं और पराये घर
 वश उसने की सयानी लड़की आकर काम-धन्धा सम्हाल रही है तो क्या मेरा दो-चार दिन
 के लिए कालेज से छुट्टी ले लेना उचित नहीं होगा ?

यही सब सोचकर रानी मन ही मन कुड़ती रहती थी । लेकिन प्रकट में
 नीचे सी किसी से कुछ नहीं कह पाती । वह रंजना से हँसकर बोलती थी । किन्तु उसके
 कि वह मन में वह शूल सी खटकती रहती थी । सोचती कि किसी प्रकार भाभी शारदा
 पर आना जल्दी अच्छी हो जाएँ और रंजना अपने घर जाये ।

इस प्रकार रानी रंजना की ओर से बहुत संशंकित रहती थी और मन ही
 मन सोचा करती कि जिस दिन रंजना इस घर में बहू बनकर आ जायेगी तो
 कभी शा वह मेरे लिये दूसरी शारदा प्रतीत होगी ।

: २५ :

रंजना दि
 क जीवन के
 ही पक्की है

निखिल को रंजना का स्वभाव बहुत अच्छा लगता था । वह उसकी विनय-
 शीलता पर प्रसन्न था और कार्य-चातुर्य से सर्वथा सन्तुष्ट । उसे लगता था कि

शारदा अभी जच्चा थी । जच्चा और वच्चा दोनों को ही जाड़े से बचाव-पाँव आवश्यकता थी मगर परिस्थिति अनुकूल नहीं थी । तभी एक दिन उस राज को ने धर दवाया । पहले जुकाम हुआ फिर खाँसी और अब बुखार का प्रायः उस समझता गया था । मुझको ड

घर में बड़ी किचकिच थी । सुभद्रा अकेली क्या-क्या करती; वच्चे सुभद्रा या शारदा को लेकर बैठती अथवा अखिल की शुश्रूषा । वह हैरान हो उसके मन के अन्तर्भावों को शारदा अच्छी तरह से पहचानती थी । गृहस्थी उसने एक दिन रंजना से कह दिया—“आज तीन दिन हो गये मैं सिर नहीं की लड़की पाती हूँ । माँ से पूछ लो रंजना, न हो तो दो-चार दिन के लिये तुम उसे नहीं जाओ ।” र

रंजना ने बहन की बात माँ फूलमती से जाकर कही । और फूलमती जानती अब रंजना का उस घर में अधिक आना-जाना पसन्द नहीं करती थी; का मौक उसे शारदा की दयनीय परिस्थिति पर तरस आगया और मोहवश उसने की सय को अनुमति दे दी । के लिए

अब घर में विशेष परिवर्तन हो गया था । शारदा की चारपाई ऊपर य के कमरे में बिछा दी गई थी । उसे सरदी का बुखार था और नीचे सीत किसी स थी । निखिल ने भी माँ को इस बात पर राजी कर लिया था कि वह मन में को लाकर अपने कमरे में लिटाये । अखिल ने भाई के प्रस्ताव पर आना जल्दी उ करते हुये टालने की बहुत कौशिश की, कि जीना चढ़ना-उतरना मेरे लिए इ कठिन हो जायेगा । लेकिन निखिल नहीं माना । मन सो

सुभद्रा गृहस्थी का काम देखती थी । फुरसत मिलने पर कभी शा वह मेरे पास आ जाती और कभी अखिल के पास आ बैठ जाती । ऐसे ही र सामने जो काम आ जाता वह उसे करने लगती थी । लेकिन रंजना व समय सतर्क रहना पड़ता था कि कहीं कोई वच्चा भूखा तो नहीं है, अरि छोटा वच्चा प्रमोद उसी पर निर्भर रहता था ।

निखिल रंजना के आगमन से बहुत सन्तुष्ट था । किन्तु रंजना दि खोई-खोई सी बनी रहती थी । उसे अच्छी तरह पता था, कि जीवन के उसके व्याह की बातचीत चल रही है और बात अगर अभी नहीं पक्की शीलत

उपचार में औषधि दोनों ही क्रमानुसार चल रहे थे। अखिल अब बहुत दुबला हो गया था।

एक दिन दोपहर को रंजना जब अखिल को मट्ठा देने गई तो उसमें सोंठ और काला नमक डालना भूल गई। अखिल ने गिलास मुँह से लगाया और दो घूँट पीकर मुस्कराता हुआ कहने लगा—“आज तुम कुछ भूल गई हो रंजना !”

रंजना को अपनी भूल का तत्काल ही बोध हो गया। वह जल्दी से गई और चम्मच में नमक ला, अखिल के हाथ से गिलास ले उसमें मिलाने लगी।

अखिल ने जब दुबारा गिलास होंठों से लगाया तब भी उसमें सोंठ और नमक का स्वाद नहीं मिला। यों तो वह सन्तोषी व्यक्ति था, यदि क्षुधा निवारण करनी होती तो इन सब प्रयोगों की कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वह चुपचाप आँख मूँदकर पूरा गिलास पी जाता। लेकिन औषधि-स्वरूप पथ्य के साथ खिलवाड़ नहीं करना चाहता था। तभी दो-तीन घूँट पी, गिलास सामने बड़े स्टूल पर रख वह मुँह पर हास्य ला, रंजना की ओर उन्मुख होकर कहने लगा—“अरे रंजना, अभी इसमें ऐसे ही दो चम्मच और घुल जायेंगे, तब कहीं बिल्कुल जाकर मात्रा पूरी होगी।”

रंजना ने जल्दी से गिलास उठाया और उसको हाथ में ले कहने लगी—“क्या बहुत खट्टा है, जीजा जी !”

इस पर अखिल को छोटी साली के प्रति विनोद सूझ गया; वह हँसी के मिस्रोल उठा—“खट्टा है, तभी तो कह रहा हूँ। अगर मीठा होता तो कब का पी होगा। चुका होता।”

“अच्छा, तो आपको मीठा बहुत अच्छा लगता है।” कहकर रंजना खिलखिला पड़ी। तभी रानी ने कमरे में प्रवेश किया।

जब रानी कमरे में प्रविष्ट हुई तो रंजना खिलखिला कर हँस रही थी और अखिल कह रहा था—“होना ही चाहिए, ब्राह्मण मधुरं प्रियं !”

रानी एक कुर्सी पर आकर बैठ गई और रंजना मट्ठे में नमक डालने का प्रदर्शन करती गई।

इस बार एक दूसरी समस्या आ खड़ी हुई अखिल के सम्मुख। मट्ठे में

शारदा के सारे गुण रंजना में कूट-कूटकर भरे हैं और रंजना भी श्रद्धा थी अपने बहनोई पर !

जब से रंजना घर में आई थी अखिल की परिचर्या बहुत ही सुचारु चलने लगी थी । उसमें निखिल का सहयोग था और रंजना की श्रद्धा ! भला रोग के पाँव क्यों न उखड़ते । वह अखिल के पास देर तक बैठी रहती उसका मन बहलाने के लिए इधर-उधर की बातें करती रहती । निखिल की इस स्थिति पर अत्यन्त मुग्ध था । मगर सुभद्रा को बिल्कुल अच्छा नहीं था । वह इसे फूहड़पन समझती थी और लज्जास्पद भी ! वह सब कुछ देख-भी चुप थी, केवल इसलिए कि दो-चार दिन में शारदा का ज्वर ठीक हो रंजना अपने घर चली जाएगी ।

रानी माँ का रूख पहचान गई थी । इसीलिए उसने एक सप्ताह की से छुट्टी ले ली । अब वह अधिक मात्रा में रंजना के पीछे ही पीछे लगी थी । मनुष्य सबसे पहले अपना स्वार्थ देखता है । इसके लिए उसे दूसरे का जितना बड़ा अहित करना पड़ जाय वह कर बैठता है और तनिक भी नहीं कता ! घर की वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए रानी यह अनुमान बैठी थी कि अब बात आगे बढ़ती जा रही है, माँ का इरादा बिल्कुल मालूम होता है कि बीमारी और आराप की बात और है, वैसे वे भइया और भाभी शारदा को गृहस्थी से अलग ही रखेंगी । ऐसी हालत में बहुत है कि वे रंजना के साथ निखिल भइया का रिश्ता मंजूर न करें । यद्यपि का भुकाव रंजना की ओर है और रंजना भी उसकी ओर आकर्षित है, अगर माँ ने एक बार भी इन्कार कर दिया तो फिर यह ब्याह नहीं होगा जी भी इसमें कुछ नहीं कर पायेंगे और निखिल का विरोध भी कुछ काम देगा । यों तो रंजना मेरी सहेली है और मुझे उससे कोई दुराव नहीं । मन न जाने क्यों पचकता है कि वह इस घर की बहू बनकर न आये ।

इस प्रकार रानी मन ही मन पता नहीं क्या-क्या सोचा करती और को एक सप्ताह हो गया था । मगर अभी वह ज्वर-मुक्त नहीं हो पाई थी ।

अखिल का इलाज वैद्य का ही चल रहा था । उसका कहना था कि कम अभी एक महीना और लगेगा, तब पेट ठीक होगा । पथ्य में मद्द

हैं । बड़ा भैँसट है, यहाँ तो जो आयेगा उसे इस घर की प्रथा के अनुसार जली-कटी जरूर सुनने को मिलेंगी । रंजना मेरे पास बैठती है, हँसती है, बोलती है, इसमें मैं कोई दोष नहीं समझता । जिसे मैंने बचपन से खेलते-कूदते देखा है उसे मुझसे भला संकोच क्यों हो सकता है । और फिर जीजा-साली का रिश्ता है । अगर छींकते ही माँ नाक काटती फिरेंगी तो कैसे पूरा पड़ेगा ?

अखिल की विचारधारा निरन्तर आगे बढ़ती जा रही थी और रंजना भी स्थिर न होकर आक्रोश में भरी बैठी विचार कर रही थी कि माँ सुभद्रा दूसरे की ही घुराई देखती हैं, अपनी नहीं । कभी रानी को भी कुछ कहा होता तो मैं समझती उनके घर में अदब-कायदे का बहुत ख्याल रखा जाता है । किसी और आदमी से हँसना और बोलना एक युवा लड़की के लिए लौकिक रीति से क्षम्य नहीं है । लेकिन जहाँ साली और बहनोई का नाता हो, वहाँ पर सुभद्रा का इस प्रकार बड़बड़ाना बिल्कुल व्यर्थ है । यह निरी ग्रहमता है । उस दिन निखिल को डाँटा था और आज उनका यह सख्त कदम ! उस दिन की बात को मैं घुरा नहीं मानती । परन्तु आज वे जो कुछ ऊल-जलूल बक रही हैं यह उनका ओछापन है ! दूसरे पर आक्षेप करने के पहले आदमी को अपने सम्पूर्ण अँगों का निरीक्षण कर लेना चाहिये । यही कमी है, वे दूसरों की घुराइयों को देखती हैं और अपनी पर पर्दा डालती हैं । कैसे अब तक दीदी रहती रहीं इस घर में ! मुझे तो बड़ा डर लगने लगा है, क्योंकि यहाँ पर पानी में पेड़ लगाया जा रहा है ।

इसके बाद रंजना जब कुछ शांत हुई तो अचानक उसके मस्तिष्क में यह बात टकरा उठी कि इसीलिए माँ और पिता जी निखिल को भूलकर जीवन की ओर बढ़ रहे हैं । वे जो सोचते हैं वह अक्षरशः सत्य है । इस घर की हालत अब दिन पर दिन कलह और हाय-हाय के कारण गिरती जा रही है ।

नमक ज्यादा पड़ गया था। उसने बहुत कोशिश की कि आँख मूँद कर पी-
किन्तु नमक से ऐसा मुँह बँध गया कि घूँट गले से नीचे ही नहीं उतरता
हार मानकर उसने रंजना से फिर कहा—“आज तुम्हें क्या हो गया है
पहले नमक डालना ही भूल गई, फिर डाला भी तो फीका रहा और अब
नमक हो गया है। इसमें थोड़ा मट्ठा और मिलाओ तब अनुपात बराबर हो

रंजना से यद्यपि भूल हुई थी, लेकिन सरलतावश उसके मुँह से हँसी
गई। वह हँसते-हँसते बोल उठी—“वाह, जीजाजी वाह ! आज का दि-
याद रहेगा ! अभी लाती हूँ मट्ठा !” यह कहकर वह चली गई और तब
भाई से दुनियादारी की बातें करने लगी।

इसके बाद रंजना आई। अखिल ने छाछ पी और फिर दोनों में दो-एक
हुई। रानी सब सुनती रही, देखती रही और वहाँ से उठते ही, माँ के प-
विष उगलने लगी।

इस पर सुभद्रा ने रसोई से ही जोर-जोर से बड़बड़ाना आरम्भ कर दि-
“ऐसी उलहती लड़की तो मैंने कहीं नहीं देखी। उस दिन निखिल से बतला-
और अब वहनोई के सामने खुलखुलाती है। मेरे घर में यह नाटक नहीं
अभी कुछ कह दूँगी तो मौसी का काजल हो जायेगा। राम-राम !
यह हाल है, शादी होने पर तो शायद मेरी छाती पर ही भूँग दलेगी।
नहीं किस दिन बीमारी इस घर का पीछा छोड़ेगी और ये सारी बातें
होंगी।”

सुना रंजना ने सुभद्रा की बातों को, और अखिल यह सब सुनकर
चौंक गया। शारदा की स्थिति क्या थी यह पता नहीं। लेकिन अखिल की
इधर रंजना भी चौंककर रह गई थी।

सुभद्रा उसी पचड़े को लेकर लगभग आध घण्टे तक कुछ न कुछ
ही रही।

अखिल सोचने लगा कि ऐसा भी स्वभाव किस काम का जिससे न
किसी का मन दुखे। माँ को पता नहीं क्या हो गया है, भला रंजना क्या
होगी अपने मन में ! घर में आये हुये सम्बन्धी को लोग आदर-सत्कार
से देखते हैं और माँ मुँह खोलकर सामने ही सामने नक्रद सौदा चुकाने

हैं । बड़ा भँझट है, यहाँ तो जो आयेगा उसे इस घर की प्रथा के अनुसार जली-कटी जरूर सुनने को मिलेगी । रंजना मेरे पास बैठती है, हँसती है, बोलती है, इसमें मैं कोई दोष नहीं समझता । जिसे मैंने बचपन से खेलते-कूदते देखा है उसे मुझसे भला संकोच क्यों हो सकता है । और फिर जीजा-साली का रिश्ता है । अगर छींकते ही माँ नाक काटती फिरेंगी तो कैसे पूरा पड़ेगा ?

अखिल की विचारधारा निरन्तर आगे बढ़ती जा रही थी और रंजना भी स्थिर न होकर आक्रोश में भरी बैठी विचार कर रही थी कि माँ सुभद्रा दूसरे की ही घुराई देखती हैं, अपनी नहीं । कभी रानी को भी कुछ कहा होता तो मैं समझती उनके घर में अदब-कायदे का बहुत ख्याल रखा जाता है । किसी गैर आदमी से हँसना और बोलना एक युवा लड़की के लिए लौकिक रीति से क्षम्य नहीं है । लेकिन जहाँ साली और बहनोई का नाता हो, वहाँ पर सुभद्रा का इस प्रकार बड़बड़ाना बिल्कुल व्यर्थ है । यह निरी ग्रहमता है । उस दिन निखिल को डाँटा था और आज उनका यह सख्त कदम ! उस दिन की बात को मैं घुरा नहीं मानती । परन्तु आज वे जो कुछ ऊल-जलूल बक रही हैं यह उनका ओछापन है ! दूसरे पर आक्षेप करने के पहले आदमी को अपने सम्पूर्ण अँगों का निरीक्षण कर लेना चाहिये । यही कमी है, वे दूसरों की घुराइयों को देखती हैं और अपनी पर पर्दा डालती हैं । कैसे अब तक दीदी रहती रहीं इस घर में ! मुझे तो बड़ा डर लगने लगा है, क्योंकि यहाँ पर पानी में पेड़ लगाया जा रहा है ।

इसके बाद रंजना जब कुछ शांत हुई तो अचानक उसके मस्तिष्क में यह बात टकरा उठी कि इसीलिए माँ और पिता जी निखिल को भूलकर जीवन की ओर बढ़ रहे हैं । वे जो सोचते हैं वह अक्षरशः सत्य है । इस घर की हालत अब दिन पर दिन कलह और हाय-हाय के कारण गिरती जा रही है ।

नमक ज्यादा पड़ गया था। उसने बहुत कोशिश की कि आँख मूँद कर पी किन्तु नमक से ऐसा मुँह बँध गया कि घूँट गले से नीचे ही नहीं उतरती। हार मानकर उसने रंजना से फिर कहा—“आज तुम्हें क्या हो गया है पहले नमक डालना ही भूल गई, फिर डाला भी तो फीका रहा और अब नमक हो गया है। इसमें थोड़ा मट्ठा और मिलाओ तब अनुपात बराबर हो

रंजना से यद्यपि भूल हुई थी, लेकिन सरलतावश उसके मुँह से हँसी गई। वह हँसते-हँसते बोल उठी—“वाह, जीजाजी वाह ! आज का दिन याद रहेगा ! अभी लाती हूँ मट्ठा !” यह कहकर वह चली गई और तब भाई से दुनियादारी की बातें करने लगी।

इसके बाद रंजना आई। अखिल ने छाछ पी और फिर दोनों में दो-पकड़ हुई। रानी सब सुनती रही, देखती रही और वहाँ से उठते ही, माँ के पास विष उगलने लगी।

इस पर सुभद्रा ने रसोई से ही जोर-जोर से बड़बड़ाना आरम्भ कर दिया। “ऐसी उलहती लड़की तो मैंने कहीं नहीं देखी। उस दिन निखिल से बातचीत और अब वहनोई के सामने खुलखुलाती है। मेरे घर में यह नाटक नहीं करेगा। अभी कुछ कह दूँगी तो मौसी का काजल हो जायेगा। राम-राम ! यह हाल है, शादी होने पर तो शायद मेरी छाती पर ही मूँग दलेगी। नहीं किस दिन बीमारी इस घर का पीछा छोड़ेगी और ये सारी बातें होंगी।”

सुना रंजना ने सुभद्रा की बातों को, और अखिल यह सब सुनकर चौंक गया। शारदा की स्थिति क्या थी यह पता नहीं। लेकिन अखिल के इधर रंजना भी चौंककर रह गई थी।

सुभद्रा उसी पचड़े को लेकर लगभग आध घण्टे तक कुछ न कुछ ही रही।

अखिल सोचने लगा कि ऐसा भी स्वभाव किस काम का जिससे किसी का मन दुखे। माँ को पता नहीं क्या हो गया है, भला रंजना क्या होगी अपने मन में ! घर में आये हुये सम्बन्धी को लोग आदर-सत्कार से देखते हैं और माँ मुँह खोलकर सामने ही सामने नक़द सौदा चुकाने

दिन उसने स्वयं अपनी आँखों देखा कि रंजना प्याली में शहद डाल हँस-हँसकर उँगली से उसमें औषधि घोल रही थी और अखिल उसके सामने चारपाई पर बैठकर मुस्कराता हुआ कह रहा था—“तुम क्यों इतना कष्ट करती हो रंजना, मैं स्वयं मिला लेता ।”

निखिल ने आगे सुना, रंजना हँसती हुई जवाब में बोल रही थी—“मैं अपने सामने आपको तकलीफ करने का मौका दूँ, यह अच्छा नहीं लगता । शायद आप पर माँ की बातों का कुछ प्रभाव पड़ा है, तभी अपनी मनोवृत्ति को संकुचित बना रहे हैं ।”

वस इससे अधिक न निखिल सुनना चाहता था और न उसमें क्षमता ही थी । सन्देह का गलित पदार्थ गल-गलकर उसकी समस्त शिराओं में रक्त बन व्याप्त हो गया था । वह उद्विग्न चित्त नीचे की ओर भागा और बैठक में जाकर साँस ली । उसके मस्तिष्क में तूफान उठ रहा था और ऐसा लगता था कि उसके विचारों का ज्वार-भाटा उसे निगल जायेगा । वह सोचने लगा कि मैंने रंजना को समझने में भूल की । उसका यह चरित्र ! मेरी रानी घुमना, फिरना अधिक पसन्द करती है और वाचाल भी है तो इसके मतलब यह नहीं कि वह पापों को पचाने की कला भी जानती हो । पाप कभी पचता नहीं ! मैं ग्रन्धकार दाल में कैसे नहीं रह सकता । अब मालूम हुआ कि पापी आदमी बहुत मीठा बोलता है । और अधिक मात्रा में चुप रहता है । मुँह का बड़बड़िया आदमी चरित्रवान होता है और शिष्टता का अधिक प्रदर्शन करने वाला चरित्र-हीन ! जैसी रंजना है, जिससे रंगी हुई और भइया अखिल विलकुल वैसे ही बगुला भगत ! यदि रंजना यहाँ ता कि कुछ दिन आकर न रही होती तो यह भेद कभी नहीं खुलता । पुरानी बातें जैसा कर वह कि लोग कहते हैं, पत्थर की लकीर होती हैं । ‘आदमी जाने वसे और सोना रती रहे जाने कसे’—शायद भाभी की बीमारी ही रंजना के जीवन की कसौटी थी । वह उसका पर उस पर खरी नहीं उतर पाई । अगर खरा कंचन होती तो माँ को कुछ कहने चत रूप का मौका कभी नहीं मिलता ।

निखिल के विचारों में एकदम परिवर्तन आगया और उसे रंजना से घृणा होने लगी । वह बैठक में बैठा था और यह सुधि ही नहीं थी कि दूकान जाने का समय हो रहा है ।

सुभद्रा का रंजना और अखिल के प्रति बड़बड़ाना तनिक भी सार्थक हुआ। उसकी समझ से रंजना उसके सम्मुख ठिठाई कर रही थी, खिल थी और बेहयाई पर उतर आई थी। उसकी गति-विधि में तनिक भी अन्तः पड़ा था। वह निःसंकोच ही अखिल से बोलती-चालती और उसकी परिस्थिति इस क्रूर लगी रहती कि सुभद्रा नित्य समय-समय पर कुछ न कुछ व्यंग्य बड़बड़ाती रहती। मगर रंजना के कानों पर जूँ नहीं रेंगती थी।

और ऐसा ही खुला हुआ स्पष्ट व्यवहार था अखिल का। जिसे उसकी गुस्ताखी समझती थी कि इन दोनों ने मिलकर मुझे चिढ़ाने को रखी है।

कर्कशा और मन में कपट रखने वाली स्त्री अपना स्वार्थ सिद्ध न होने पर बहुत कुछ कर उठती है। अब सुभद्रा रंजना के मुँह पर तो साफ नहीं कहती, लेकिन निखिल और रानी के सामने वह उस पर यह लाँछन लगा करती कि अखिल और रंजना की पुरानी प्रीति है। और फिर दुनिया की भाँति मैं वे जीजा-साली तो है ही, मैं सब समझती हूँ कि अगर कुछ दाल में नहीं है, तो रंजना इतनी शोख क्यों है? आधी उमर होगई है मेरी। कोई धूल नहीं झोंक सकता है ?

सुभद्रा इसी प्रकार एक न एक ऐसी बात कहती रहती थी जिससे रंजना के मन में सन्देह का बीज पनपता जा रहा था। वह सोचा करता कि यह सब क्या है ? अवज्ञा का तो लेशमात्र रंजना में नहीं था फिर वह अप्रसन्न होने के बावजूद भी अखिल भइया से घण्टों बैठी बातें करती रहने जाना नहीं जाता कि मनुष्य के मन में क्या है ? दुनिया को वह उसका नहीं होने देता। रंजना का मन पाप का आवास है, यह मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता, परन्तु गाड़ी अटकती जरूर है। क्या कारण है जो वह पर अधिक जोर दे रही है और कैसे हैं भइया अखिल जो दुनिया को देते हैं और रंजना को प्रगल्भता से नहीं रोक पाते !

निखिल के मन में दिन-रात ऐसे ही दूषित विचार उठते रहते थे और

तभी उसकी यह स्थिति है । किन्तु वह भी स्पष्ट न होकर गोल-मोल बातें करने लगा—“हाँ, मैं भी तैयार हो रहा हूँ । चलो साथ ही चलते हैं । मैं पहाड़गंज उतर जाऊँगा । और तुम अपने कालेज चली जाना ।”

इस प्रकार कपड़े पहनते-पहनते जीवन ने रानी से खूब-मीठी-मीठी बातें की और कहीं पर भी अपना भेद नहीं खुलने दिया ।

रानी घर के बाहर निकलकर जीवन के साथ बस पर बैठी और जब वह पहाड़गंज में उतर गया तो अगले स्टॉप पर वह भी उतर पड़ी । अब उसके पैर कालेज की ओर न बढ़कर घर की ओर उठ रहे थे । उसका चित्त बहुत अशान्त था । उसके सपने मिट्टी में मिल गये थे, क्योंकि रंजना उससे उसका जीवन छीनने जा रही थी ।

घर आकर रानी ने माँ से यह बहाना कर दिया कि आज कालेज में मैजिक हो था इसलिये मैं चली आई । पढ़ाई की बात और थी, व्यर्थ समय क्यों खराब करती ?

माँ को यह बता, रानी अपने कमरे में गई और सुस्त-सुस्त सी कुर्सी पर बैठ गई । मेज़ पर पड़ी एक पुस्तक के पन्ने उलटने लगी । फिर उसने मेज़ की ड्राय्वर का ताला खोलकर अपना अलबम निकाला । उसमें लगे जीवन के चित्र को सामने रख, एकटक देखती रही । उसके मस्तिष्क में तूफान उठ रहा था कि मैं सोचती थी कि और देर जीवन अन्त तक मेरा रहेगा और मेरी कोई भी इच्छा का हनन माँ नहीं होगी और मैं उनसे साफ-साफ न कहकर घुमा-फिरा के उनके दिमाग में यह बात बसा दूँगी कि जीवन से मुझे अनुराग है । घर अच्छा है, वर अच्छा है; बताता है मेरे मन की करके रहती, लेकिन अब क्या करूँ ! हाथों के तोते उड़ गये करते हैं, क्या वे पकड़ में आ सकते हैं ? कोई गुड़िया-गुड़वा का खेल तो नहीं है, यह लीट जगादी-ब्याह का मामला है । इसमें मत रोज-रोज निर्धारित नहीं किये जाते । भी मिलकर रामानन्द गयाप्रसाद को वचन दे चुके हैं तो वे फिर पीछे क्यों हटेंगे ? और मान लो यदि माँ ने पिता जी को राजी करके रामानन्द के पास भेजा भी कि शायद वे पिता जी से यही कह देंगे कि चन्द्रभान बाबू, आपने देर कर दी । मैं बात का ब्याह चूका हूँ । तब क्या उस स्थिति में पिता जी उनसे यह कहेंगे कि रंजना से ब्याह न करके रानी से ब्याह दो । मैं जानती हूँ अब कुछ नहीं हो

: २७ :

रंजना और जीवन का व्याह तय हो गया था । किन्तु रानी को तनिक भी खबर नहीं थी । और न ठीक-ठीक पता था रंजना को । वह शारदा के ही घर में थी कि गयाप्रसाद ने बात पक्की करके बरीक्षा व्यवस्था सम्पन्न कर दिया ।

रानी एक दिन अवसर पा जब जीवन के घर गई तो उसने बाहर दहलीज पर ही रामानन्द का यह स्वर सुना—“जीवन, रंजना अच्छी लड़की है, मैं वचन में गोद में खिला चुका हूँ । पहले तो मैं गयाप्रसाद को इसलिये ताना रहा कि तुम्हारा रुख कैसा है । अब भी यदि तुम कुछ हिचकते हो तो हिचक मुझे बता दो । क्योंकि पहले जब भी कभी मैं तुम्हें व्याह करने के लिए प्रेरित करता था, तब तुम्हारा मन उदास हो जाता था । मैंने सोच-समझ ही गयाप्रसाद को स्वीकृति दी है ।”

इसके बाद रामानन्द चुप हो गये थे और जीवन ने शायद उनको जवाब नहीं दिया । वह शरमाता हुआ अपने कमरे की ओर जा रहा था रानी उसके सामने जाकर खड़ी हो गई । उसकी हँसी विलीन हो चुकी और चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं । जीवन ने उसकी ओर देखा और देखा ही चौंककर पूछ दिया—“बहुत खोई-खोई हो रानी, क्या बात है ?”

यद्यपि रानी ने रामानन्द के मुँह से जो सुना था वह कह देना चाहती लेकिन यह जानने के लिए कि देखूँ जीवन मुझे इस सम्बन्ध में कुछ बताता या नहीं, वह उस बात को पी गई । वह हँसने की विफल चेष्टा करते ही बोली—“कुछ नहीं, जल्दी-जल्दी जीना चढ़ी और जल्दी ही वापस लौट जाना ही है; सोचा था कि कई दिनों बाद आज कालेज आ पाई हूँ तो आपसे भी मिल चला ।”

किन्तु जीवन को इससे सन्तोष नहीं हुआ । वह समझ गया कि रानी ने अभी आते समय पिता जी की बातें सुनली हैं । मुझसे रंजना का हो रहा है, इस समाचार ने उसके बदन में बिजली का करेन्ट-सा मार दिया

माँप लिया कि अलबम पर माँ की निगाह पहुँच चुकी है । वह मन ही मन
हुई थी बहुत खिसियाई कि अगर रंजना छीना-झपटी न करती तो अलबम कभी नहीं
ने जीवित रहता और न माँ कभी चौंकती । उसने जल्दी से अलबम उठाया और बन्द
नुमने मुँह कर ड्राअर में रख दिया । फिर रंजना के साथ कमरे से बाहर निकल आई ।

: २८ :

होली के कुछ ही दिन रह गये थे । शारदा भी अब स्वस्थ हो आई थी ।
अतः रंजना दो-एक दिन में वहाँ से जाने ही वाली थी । सुभद्रा का स्वभाव था
हने के कि वह मुँह से दिन भर कुछ-न-कुछ बडबड़ाती ही रहती थी । लेकिन यह बात
नहीं कि जिस पर वह रुष्ट हो या जिसे डाँटे-फटकारे उससे बात न करे । यद्यपि
कर अतः वह रंजना पर बहुत चिढ़ी हुई थी; फिर भी दुनियादारी करना नहीं भूलती ।
का अतः फागुन की दोपहर थी । रानी शारदा के कमरे में बैठी उससे बातें कर रही
रिभाषा थी, और अखिल की शायद कुछ भपकी लग गई थी । अतः रंजना वहाँ से आ,
लखिला सुभद्रा के निकट बैठ गई । उसकी आदत थी, यदि उससे बड़ा कोई भी व्यक्ति
द्रा वहाँ कुछ काम कर रहा होता और वह अवकाश में होती, तो तत्क्षण ही उस काम
रही थी जो अपने हाथ में ले लेती । यद्यपि वह सुभद्रा से बहुत ही असन्तुष्ट थी, लेकिन
थी । जब देखा कि वह अचार डालने के लिए नींबू सामने रखे उनको सूजे से कोंच
रही है तो पास बैठ गई और सूजा उसके हाथ से ले, नींबू कोंचने लगी ।
सुभद्रा ने पहले उससे दो-चार इधर-उधर की बातें कीं, फिर अपने मन की
जिज्ञासा उस पर प्रकट करते हुए मीठे लहजे में बोली—“अरे रंजना, तुम और
रानी दोनों उस फोटो वाली कापी में क्या देख रही थीं ? किसकी तस्वीर थी ?”
रंजना ने कुछ जवाब नहीं दिया और केवल मुस्करा कर रह गई । तब
सुभद्रा बात की मीठी छुटकी लेते हुए पुनः बोली—“बताओ न, शरमाती
क्यों हो ?”

सकता । तीर छोड़ देने के बाद फिर वापस नहीं आ जाता ।

अलवम रानी के हाथों में काँप रहा था । उसकी भौंहें तनी हुई थीं बहुत खिसि माँप लिया
आँखों में क्रोधावेश के कारण कुछ जलन-सी हो रही थी । उसने जीवित खिसि
चित्र पर आँखें गड़ा दीं और मन ही मन कहने लगी—‘जीवन, तुमने मुझ पर ड्राअर
धोखा दिया है । यदि तुम चाहते तो रामानन्द रंजना के साथ तुम्हारा क
कभी नहीं तय करते । क्या जिस प्रकार अब तक व्याह नहीं किया था
प्रकार और प्रतीक्षा नहीं कर सकते थे ? अब मैं जान गई हूँ कि तुमने मुझ
भुलावे में रखा ! धोखा देने वाला जिन्दगी में सुख-भोग नहीं कर पाता । जीवन
तुमने मेरी हँसी छीन ली है । तुम भी सुखी नहीं रहोगे !’

रानी हाथों में अलवम थामे, इसी प्रकार पता नहीं क्या-क्या सोच
थी । इतने में वहाँ रंजना आगई और अलवम के सामने खुले पृष्ठ पर जो होली
का चित्र देखकर हँसती हुई कहने लगी—“अच्छा, तो यह होम-स्टडी हो अतः रंजन
है ! लाओ तनिक मैं भी देखूँ किस भाग्यवान का फोटो है यह ?” कहने के कि वह मुँ
कुर्सी के पीछे खड़ी रंजन, के हाथ अलवम की ओर बढ़ आये । नहीं कि जि

और रानी पीछे देखकर एकदम चौंक गई । उसने हड़बड़ा कर अलवम वहाँ रंजना
वन्द कर दिया । लेकिन रंजना ने देख लिया था कि जिस चित्र का अलवम फागुन
रानी कर रही थी, वह जीवन का था । वह बोली—“तो प्यार की परिभाषा थी, और
तुम भी समझने लगे हो ! चलो अच्छा है ।” कहकर रंजना खिलखिला सुभद्रा के
हँस पड़ी और उसकी हँसी कमरे में घुँजते ही बगल के कमरे से सुभद्रा वहाँ कुछ काम
पहुँची । तब रानी कुर्सी से उठती हुई रुठे स्वर में रंजना से कह रही थी—“को अपने
“चलो हटो, मुझे हँसी अच्छी नहीं लगती ।” और रंजना हँस रही थी । जब देखा
देख सुभद्रा झुँझला उठी और कमर पर दोनों हाथ रख चौखट पर खड़ी रही है तो
तेज गले से दोनों की भर्त्सना करती हुई बोली—“अरे ! तुम दोनों की सुभद्रा
यहाँ वैठी खिलखिला रही है और घर का काम पड़ा है । बहू की दवा का जिलासा उ
हो रहा है, और……।” रानी दोनों

अचानक सुभद्रा की जवान रुक गई और उसकी दृष्टि कुर्सी के नीचे पड़े अलवम पर पड़ गई । वह खुला हुआ था और खुले हुये पृष्ठ पर जीवन का चित्र था । सुभद्रा दूर खड़ी थी इसलिये वह पहचान नहीं पाई और रानी क्यों हो ?

यही मञ्जु का प्रयास सफल रहा। रानी को अवसर मिल गया। उसके साथ ही चिठ्ठर वह शारदा के कमरे में चली गई। तब गम्भीर रंजना भी अपनी हास्य-ना लिये इन दोनों के बीच आ आसीन हो गई।

ज गई। सुभद्रा अकेली रह गई थी। उसके मस्तिष्क पर हथौड़े की चोटें पड़ रही थीं। यह क्या? रानी और यह अचरज! मैं जानती थी कि वह मुझ से भूठ रानी को भी नहीं बोलती है। लेकिन दोपहर को उसका फोटो देखना और कालेज न ल काइ कर किसी और जगह जाना। वहाँ से फौरन ही वापस आ जाना और घर में को बिठा बहाना खेलना।—यह सब क्या है? रंजना ठीक कहती थी कि अब रानी कालेज को लगाम आप अपने हाथ में लीजिए। रानी आजादी पाकर बहुत आगे बढ़ गई वे हमसे। कल से देखती हूँ कि वह कहाँ जाती है और मुझे कैसे समझाती है। अभी रान डूक मैंने लाड़ किया है, ताड़ना तो दी ही नहीं। रानी को अब उसी की कम अवरुत है।

ए।" इस प्रकार सुभद्रा उल्लभन में भरी अपनी अकुलाहट शांत करने के लिए हाथी वहाँ से चली गई। हड़प्पे पर जा, सड़क पर चल रहे वाहनों और व्यक्तियों वैंठी तथा उसके जन कोलाहल से मन बहलाने का प्रयत्न किया। वह विफल रहा। कालेज वह फिर जल्दी-जल्दी अपने कमरे की ओर आई और चुपचाप चारपाई की मिलावट ले आंखें मूँद सोचने लगी।

मञ्जु चली गई थी, और घर में आज कुछ सूनापन-सा समा गया था। जो तो सन्नाटा था और न आलम। दिनभर बड़बड़ाने वाली सुभद्रा शान्त थी, थी थी और थी गम्भीर। लगता था जैसे उसका कुछ खो गया है।

और दूसरी पात्री थी रानी ! जो एक ओर जीवन के प्रति आक्रोश से जल
 थी और दूसरा पक्ष अपने मजबूत पंजों से उसकी गर्दन दबोच रहा था कि
 या होने वाला है। आज मैं किसका मुँह देखकर उठी थी जो दुर्घटनाओं पर दुर्घ-
 णें घटती जा रही हैं, मैं चौंकती जा रही हूँ। ऐसा अनुभव होता है कि जिंदगी
 नाटक का यह एक अत्यन्त बीभत्स दृश्य है जिसके बाद ट्रेजेडी की सम्भावना
 । आज मैं खूब ठगी गई । जीवन को खो दिया; माँ के व्यक्तिगत अधिकारों
 वञ्चित हो गई और समुदाय में हँसी होगी सो अलग और घर में तो

उत्तर में रंजना धीरे-धीरे कहने लगी—“क्या बताऊँ माँ, वस यही तो लो कि रानी अब सयानी हो रही है और आपको लगाम हाथ में रखनी चाहिए। कालेज का वातावरण अधिकांश लड़कियों को आजाद बना देता है।”

सुभद्रा ने इसके आगे और कुछ नहीं पूछा । वह बात को टाल गई दूसरे विषय की बातें करने लगी ।

तीसरे पहर रानी की पड़ोसिन सहेली मञ्जु आई । उस समय रानी पास बैठी तकिये का गिलाफ फ्रेम पर चढ़ाये, उस पर रेशम का फूल काढ़ा था। रानी और रंजना उसके पास ही आसीन थी । वह सुई-तागा और फूल को काट रही थी । तभी आते ही मञ्जु धोल उठी—“क्यों रानी ! आज कालेज नहीं आई ? आज मिस सक्सेना की पीरियड बहुत अच्छा रहा । वे हम लोगों को हँसाती ही रहीं । वे पूछ रही थीं कि रानी का एप्लीकेशन पूरा हो चुका, फिर भी वह नहीं आई और यों भी वह कालेज बहुत कम करती है, कहीं हाजिरी कम न हो जाय, जो परीक्षा में भी न बैठ पाए।”

रानी के चेहरे का रंग उड़ गया । वह वहाँ से भाग जाना चाहती थी लेकिन अपनी परिस्थिति तो सुधारनी ही थी, इसलिए हिम्मत किये बैठी और बात बनाकर मञ्जु से कहने लगी—“मुझे क्या पता था कि कालेज क्या होगा ! मैं जब वहाँ जाने के लिये घर से निकली तो रास्ते में मिल जमुना, वह बोली, कहाँ जाओगी रानी ! आज तो कालेज में मैजिक शो है फिर उसी के घर में थोड़ी देर बैठी और वापस लौट आई । मैं नहीं जानती थी कि……।”

“अरे, जमुना को छोड़ो, वह बड़े बाप की बेटा है, उसके लिये ऐसे बहाना बनाना तो एक मामूली सी बात है । लेकिन कहीं घुरा मत मान जाना क्योंकि वह तुम्हारी सहेली है । मैं तो उसे दूर से ही नमस्कार करती हूँ । माँ-बाप से नहीं डरती, बल्कि माँ-बाप उससे डरते हैं । तुम उसकी बातों में आगई । अच्छा छोड़ो, और यह बताओ कि अब भाभी की तबियत कैसी है ?” कहती हुई मञ्जु उसकी कमजोरी को दबा ले गई । वह समझ गई कि रानी ने कालेज न जाने का बहाना घर में मैजिक शो का बतला दिया मैंने बड़ी भूल की जो आते ही कालेज न जाने की चर्चा छेड़ दी ।

पर का उठा, यह सोचकर कि शायद आज रानी मुझ से रूठी है । वह वहाँ से उठ
। अखिल के पास आगया और सुभद्रा रंजना से कहने लगी—“जा बेटी, जीवन
भी बाबू के लिए चाय तैयार करदे । रानी बड़ी मगरूर है, पुकारती रही और
म गई । उसने नहीं सुना ।”

रंजना वहीं कमरे में रखा स्टोव जलाने लगी और सुभद्रा वहाँ से उठकर,
दुनियादारी करने के लिए, अखिल और जीवन के पास आकर बैठ गई ।

रानी तीसरी मंजिल पर स्थित अकेले कमरे में बैठी क्रोध से उबल रही
थी । उसने जीवन का स्वर भी सुना, वह हँस-हँसकर सबसे बातें कर रहा था
और रानी सोच रही थी कि जीवन कितना प्रसन्न है ! मुझे भुलावे में रख स्वयं
हँस रहा है । उसने मुझे साँप-छद्मदर वाली गति को पहुँचा दिया है ।

इसीलिए जब सुभद्रा ने पुकारा तो वह चुप बैठी रही, जवाब नहीं दिया ।
चाय बन गई थी । उसको केतली में ढाल ट्रे में नमकीन चूड़े और सेम के
बीज रख वह अखिल के कमरे में पहुँची और ट्रे मेज पर रखती हुई अतीव
शिष्ट शब्दावली में बोली—“लीजिए जीवन बाबू, चाय पीजिए ।”

रंजना की इस मीठी बाणी पर मुग्ध हो, जीवन के नेत्र बरबस ही उसकी
और उठ गये । रंजना की दृष्टि नीचे आगई और जीवन मुस्कराता हुआ केतली
उठा कप में चाय ढालने लगा ।

रंजना का अब वहाँ पर कोई काम नहीं था । अतः वह निष्प्रयोजन खड़ी
न रह सकी, शारदा के पास चली आई । वहाँ गोपेश विनोद के साथ अभी तक
खेल रहा था । उसे देखकर मीठी डाँट बताती हुई वह बोली—“क्यों गोपेश !
अभी तक तुम घर नहीं गये । चलो ! रात हो गई है ।”

तब गोपेश मचलकर कहने लगा—“नहीं, तुम भेज आओ ।”

विवश रंजना गोपेश को भेजने चल पड़ी तो सहसा उसे स्मरण हो आया ।
जल्दी से सुभद्रा के कमरे में जा पानदान खोल जल्दी-जल्दी पान के कुछ बीड़े,
सुपारी और इलायची के साथ तश्तरी में रख जीवन के पास आ पहुँची । तश्तरी
उसने मेज पर रखदी और सुभद्रा की ओर उन्मुख हो कहने लगी—“गोपेश को
भेज आऊँ, वह ज़िद कर रहा है । फिर मैं अभी आई ।”

सुभद्रा न सम्मति सूचक सिर हिला दिया और रंजना गोपेश की उँगली

हुई ही ।

रानी, सुभद्रा और रंजना विचार-मग्न थीं । साथ ही साथ घर का उठा, यह क्रम भी आगे बढ़ रहा था । दिन ढल रहा था । रात आ रही थी । अखिल के गोधूलि बेला में ही रंजना ने शारदा के कमरे की बत्ती जला दी । तभी आवाज के लि पीछे एक परिचित स्वर सुनाई पड़ा और उसकी दृष्टि उस ओर धूम गई । उसने नहीं जीवन था जो चौखट पर पैर रखते ही शारदा की ओर उन्मुख हो पृष्ठ रंजना था—“कैसी हो अब भाभी !”

जब जीवन निकट आ गया तो बैठते-बैठते तनिक हँसी मिला, दुनिया रानी का पुराना वाक्य दुहरा दिया—“अरे तुम तो बहुत दुवली हो गई, भाभी । उसने

शारदा उस समय बैठी मौसमी छील रही थी । उसके पास विनोद और रानी गोपेश इस ताक में खड़े ललचा रहे थे कि इसमें से एक-एक फाँक, हम लोग हँस रहा है ज़रूर मिलेगी । वह जीवन की ओर देख अपने रुग्ण पीले मुख पर प्रयत्न इसी रानी हँसी ला मृदु स्वर में कहने लगी—“हाँ, जीवन भइया, तुम सब लोगों की चाय से अब अच्छी ही हूँ । हाँ, तुम्हारे भइया, अभी ज्यों के त्यों हैं, न जाने किस रोज़ खर उनकी पेचिश दूर होगी और वे इस विकराल रोग से मुक्त हो सकेंगे । तुम रंजना दुवला बताते हो, तनिक उनको तो देखो जाकर । त्वचा और हड्डियाँ ही और उठ ग गई हैं । जीवन भइया, इस साल इतनी आपत्तियाँ आईं, जितनी कभी न उठा कप मे बीमारी तो घर का पीछा ही नहीं छोड़ती है ।”

जीवन ने उत्तर में पूछ दिया—“क्या अभी चैद्य का ही इलाज चल रहा रंजना अखिल भाई का ?”

और शारदा जीवन को वर्तमान परिस्थिति का बोध कराने लगी ।

इतने में जीवन का बोल सुनकर वहाँ सुभद्रा आ गई और आते ही ज़मीठी-मीठी बातें करने लगी । एकाएक जीवन ने प्रश्न कर दिया—“रानी है माँ ?”

इस पर सुभद्रा वहीं से बैठे-बैठे तेज आवाज़ में पुकारने लगी—“रानी, रानी ! देख जीवन बाबू आये हैं ।”

सुभद्रा की आवाज़ कमरे में गूँज उठी । किन्तु उसका प्रत्युत्तर नहीं मिला उसने एक बार फिर पुकारा । तत्पश्चात् वह चुप हो गई और जीवन मुस्त सुभद्रा

: २६ :

जीवन चला गया। उसके काफी देर बाद रानी नीचे आई और बिना कुछ खाये-पिये बिस्तर पर जा सोने का उपक्रम करने लगी। सुभद्रा उसके कमरे में उसको यह डाँट बताने आई थी कि तुम कितनी मगरूर हो, अगर रंजना न होती तो जीवन के लिए चाय मुझे बनानी पड़ती। यों तो कुछ नहीं करती है पर मौके पर तो मुँह न लुकाया करो।

लेकिन वहाँ का दृश्य ही कुछ और था। रानी माथे में रूमाल बाँधे लेटी थी। माँ को देखते ही दोनों हाथों से सिर दवाने लगी। सुभद्रा अपनी बात भूल गई और घबराकर उससे पूछने लगी—“क्या सिर दुःख रहा है रानी ! दवा लगा ली होती। वाम की शीशी मेरे कमरे में रखी है। ले आती।” यह कहते-कहते वह उसके निकट पहुँच गई और दाहिना हाथ उसके सिर पर फेरने लगी।

रानी ने धीरे-धीरे कहा—“सोचा था, ठीक हो जायेगा। लेकिन अब सारे सिर में बड़ी पीड़ा है। जल्दी से वाम दे जाओ माँ ! आज मेरा पेट भी कुछ खराब है, खट्टी डकारें आ रही हैं, कुछ खाऊँगी भी नहीं।”

“अच्छा अभी लाती हूँ।” कहकर सुभद्रा वाम लेने चली गई और रानी सोचने लगी, गनीमत है, सस्ती छूटी नहीं तो घण्टों यह होता, खाना क्यों नहीं खायेगी, क्या बात हो गई है या पोल खुल गई है, इसलिये आडम्बर लिए बैठी है।

सुभद्रा वाम लेकर रानी के पास जा रही थी। बीच में मिल गई रंजना। उसने शीशी उसे थमा दी और बोली—“जाओ बेटा रंजना ! रानी के यह बाम लगा दो, उसका सिर दर्द कर रहा है।”

रंजना वाम लेकर मन्द-मन्द मुस्कराती हुई रानी के सामने पहुँची और उसके पास चारपाई पर बैठ माथे पर बँधा रूमाल खोलती हुई कहने लगी—“क्या बहुत दर्द है, अभी ठीक होता है। मर्ज शुरू होते ही दवा लेनी पड़ती है। लेकिन शायद तुम्हारे हकीम ने दवा के बदले दर्द दे दिया है।”

रानी मन-ही-मन जल-भुनकर रह गई कि रंजना उसको और जीवन को

पकड़ घर से बाहर आ गई।

जब रंजना गोपेश को घर भेजकर वापस लौट रही थी तो जीवन चबूतरे से नीचे उतर रहा था। रंजना तनिक नहीं झिझकी। लेकिन ठिठककर खड़ा हो गया और धीरे से हँसकर उससे पूछ दिया—“क्या आ रही हो रंजना?”

“हाँ, आप बहुत जल्दी चल दिये।” जवाब में सवाल कर रंजना तक आ गई और जीवन यह कहकर आगे बढ़ गया, “जल्दी कहाँ, काँ हो गई है, तुम्हें ऐसा लग रहा है।”

जीवन मार्ग में कुछ दूर तक पैदल आया, फिर बस पर बैठ घर की ओर दिया। रास्ते भर वह सोचता रहा कि नारी के दो रूप इस समय मेरे हैं। रंजना सदाचार पर मरती है और रानी नुमायश पर जान देती है। बिल्कुल भाभी शारदा जैसी सुन्दर, सुशील और मृदु-भाषिणी है। उसके रानी पासंग भी तो नहीं। लेकिन रानी को तो मैंने कभी पत्नी के रूप में का प्रयत्न भी नहीं किया। उसको अपनी वहन स्वीकार कर चुका हूँ। वह नाराज है तो कल जहाँ एक अच्छा-सा मीठा लेक्चर पिलाया, वह हो जायेगी। रंजना का सहयोग मेरे लिए आवश्यक जैसा प्रतीत हो क्योंकि रिश्ता पक्का हो चुका है और मन कह रहा है कि रंजना को प रूप में पाना मेरे लिये आवश्यक है। रानी की खुशी-नाखुशी को मैं कोई नहीं देता, क्योंकि अवस्था में वह मुझ से लगभग दस साल छोटी है। लिये तो मैं यही समझता हूँ कि उसमें वचपना है, और वह समय पाकर जायेगा।

इस तरह घर आने पर भी जीवन कुछ-न-कुछ सोचता ही रहा। कभी की ओर उसका ध्यान खिंच जाता तो दूसरे क्षण रंजना की ओर जाता था।

व पल
में उसने सोच रही थी कि जो कुछ आज हुआ है इसका सारा श्रेय जीवन पर है । न
भी ही उसके घर जाती और न मेरा मन खराब होता । तभी तो कालेज नहीं जा पाई ।
में स्वयं कल उससे मिलूँगी चाहे कोई भी मौका निकालना पड़े । लेकिन कैसे जा
सकती हूँ, जो मेरा कालेज का टाइम है वही उसका ! इसके अतिरिक्त दूसरे
समय पर जाना माँ को चौंकाना होगा । खैर कल नहीं, दो-एक दिन बाद में
जीवन से मिलूँगी । उससे कुछ पूछूँगी और कुछ कहूँगी, जिससे मेरा उसका
स्वन्ध बन भी सकता है और बिगड़ भी सकता है । दो-दूक बातें करूँगी
थी— ! शायद मैं नहीं जानती थी कि जीवन उन लोगों में से है जो एक को आश्वासन
र जीवित रखते हैं और दूसरे को बिना कहे ही ग्राह्य कर लेते हैं । यही किया
जीवन ने मेरे साथ । मैं उससे इसका कारण पूछूँगी ! देखूँ क्या जवाब देता
तुम्हारा ? यदि उसने मेरा अपमान किया तो मैं उसके साथ रियायत नहीं करूँगी, खूब
स कर फटकारूँगी ।

इस प्रकार जब तक रानी की आँख नहीं लगी तब तक वह सोच-सोचकर
निवेश में भरती रही ।

प्रातः रानी जब कालेज के लिए निकली तो जल्दी-जल्दी वह जीवन के
जा पहुँची और उसमें बोली—“मैं दूसरे पीरियड से छुट्टी ले आऊँगी, आपसे
छ जल्दी बातें करनी हैं । कृपया, आप भी मुझे उस समय घर पर ही मिलें ।
यहीं आऊँगी ।”

उत्तर में जीवन असमंजस व्यक्त करता हुआ कहने लगा—“आज के लिये
हुत मुश्किल रहेगा । कोई खास बात है क्या ? अभी क्यों नहीं बता देती ! कालेज
परीक्षा के लिए सीटिंग अरेंजमेंट कराने में मेरी भी ड्यूटी है, कोशिश करूँगा
गर आ सका तो !”

“कोशिश नहीं आपको आना होगा ।” कहती हुई रानी वहाँ से चल दी ।
आज क्लास नहीं लगी । हाजिरी लेकर छुट्टी हो गई थी । रानी ने अपना
समय एक सहेली के यहाँ बिताया और ठीक समय पर जीवन के यहाँ जा पहुँची,
हाँ जीवन नहीं था । वह तिलमिला कर रह गई । गुस्से से उसकी मुट्ठियाँ भिच
ई और होठों को दाँत काटने लगे । थोड़ी देर तक उसने प्रतीक्षा की और
ही थी। फिर घर की ओर चल दी ।

लेकर व्यंग्य कर रही है और वह इस स्थिति में है कि ईंट का जवाब पल देने की क्षमता रखने पर भी इस समय असहाय जैसी है । प्रकट में उसने से होंठ बिचका दिये और मुँह बनाकर बोली—“तुम्हें तो हमेशा हँसी ही रहती है रंजना ! लाओ शीशी मुझे दो, सिर फटा जा रहा है, मैं स्वयं लूँगी ।” यह कहने के साथ रानी का हाथ वाम पर पहुँच गया । तब शीघ्रता के साथ उसको हस्तगत कर चंचल दृष्टि से देख कहने लगी—“वाकई बहुत दर्द है या बेचारे वाम को अपनी ही तरह परेशान करोगी । मलती हूँ, मिनटों में ठीक हो जायेगा ।”

रंजना वाम मलने लगी थी और रानी झुँझलाकर कह रही थी—“हैरान न करो रंजना, कहती हूँ कि जाओ मैं वाम लगा लूँगी ।”

“लेकिन मैं तो जाने से रही क्योंकि माँ का हुक्म है और मुझे तुम्हारा ठीक करना है ।”

अब रानी विवश होकर मीन हो गई और रंजना धीरे-धीरे उसके माथे पर वाम मलती रही ।

रानी ने अपनी आँखें बन्द कर रखी थीं, यह व्यक्त करने के लिए कि मलने से आराम पहुँचा और मेरी आँखें झपक रही हैं । लेकिन देर तक अब ही आँखों को बन्द किये-किये वह ऊब गई । रंजना ने उसके माथे पर से उँगल हटा लीं और धीरे से उठकर खड़ी हो गई । वह समझी, चलो अच्छा रंजना चली गई । यह बला खूब टली । उसने धीरे से एक आँख खोलकर देखा तो रंजना से नेत्रोन्मीलन हो गया और तभी रंजना ने एक चुटकी ली । वह व्यंग्यपूर्ण मुस्कान में बोली—“नींद न आती हो तो सारीडान लूँ । जाऊँ, कहूँ माँ से कि रानी को सिर-दर्द के कारण नींद नहीं आ रही कहकर रंजना बाहर जाने लगी तो रानी जल्दी से उठ बैठी और उसके पीछे हाथ पकड़कर पीछे खींचती हुई बोली—“क्या तमाशा करती हो रंजना, न करो । मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ, मुझे अब सोने दो ।”

रंजना कई क्षण तक वहाँ पर खड़ी मुस्कराती रही । और फिर कहती हुई बाहर निकल आई ।

रात को रानी देर तक जागती रही । उसे नींद ही नहीं आ रही थी ।

शारदा अब अच्छी हो गई थी और रात को जब रंजना गोपेश को भेजने गई तो फूलमती ने उससे कहा था कि अब शारदा को पथ्य मिल गया है। समधिन (सुभद्रा) से पूछ लेना अगर कुछ काम न हो तो तुम्हें भेज दें, होली के तीन ही दिन तो रह गये हैं। त्यौहार की तो तैयारी करनी है।

रंजना के मुँह से यह सुनकर सुभद्रा ने दूसरे दिन उसको वहाँ से जाने के लिए कह दिया। “हाँ काम तो अब कुछ नहीं है, जब मन हो तब चली जाना, होली तो नजदीक है ही। मैं सब सम्भाल लूँगी। तुम कल चली जाना।”

इसलिए रंजना को आज जाना था और जाते-जाते दोपहर ढल गई और वह अभी तक घर के बाहर नहीं निकल पाई थी।

हाथ में झोला लटकाए काँखती हुई रानी ने घर में प्रवेश किया तो रंजना उसके हाथ से झोला ले हँसती हुई बोली उठी—“बेकार तकलीफ की, मुझे बुलाया था, लिया होता।”

रानी जल-भुनकर खाक हो गई। रंजना उसकी आँखों में शूल-सी खटक पर उतर गई।

दोनों शारदा के कमरे में पहुँचीं। रानी किताबें रखने अपने कमरे में गई तो उसने वहाँ से सुना कि माँ बड़बड़ा रही हैं—“अरे, रानी तू तो फल वाले के दूकान ही उठा लाई। क्या होगा इतने सेब और मौसमियों का? फल तो खोला ताजे लेने चाहिए, रोज जितनी जरूरत हो। ये एक दिन में तो खा नहीं लिए ल कहाँ जाएंगे, आखिर खराब ही तो होंगे।”

अब रानी माँ के सामने आ गई थी और कह रही थी—“मैं नहीं जानती मैंने माँ, कालेज से लौटते समय रास्ते में मुझे निखिल भइया मिल गये और उन्होंने ने यह झोला दिया था।”

तब सुभद्रा दूसरी ओर मुड़ गई। वह कहने लगी—“जो कमाता है, पैसे की कलक वही जानता है। निखिल को क्या, पाये तो घर लुटा दे। राम-राम, उलझता इतनी मौसमियों का क्या होगा?”

बात यहीं पर समाप्त नहीं हो गई। उसका प्रवाह तनिक देर तक बहा। तब तक चन्द्रभान बाबू आगये थे और कमरे के बाहर आ खाँसकर अन्दर प्रविष्ट हो, सुभद्रा से पूछने लगे—“आज बहू को फूलके दिये थे?”

रानी अभी दस-पाँच ही कदम चली थी कि अचानक उसके सामने निखिल ! वह उसे देखते ही चौंककर पूछने लगा—“इस समय तुम यहाँ रानी ! कालेज आज भी नहीं गई ?”

रानी का चेहरा सफेद हो गया और काटो तो वदन में लहू नहीं । अपने को बहुत सम्भाला और बात बनाकर कहने लगी—“कालेज आज ही छुट्टी हो गई । जीवन बाबू से कुछ नोट्स लिखवाने थे । मौका देकर चली आई । वे तो हैं नहीं और तुम क्या उन्हीं से मिलने आये थे ?”

निखिल समझ गया कि रानी अपने किये पर पर्दा डाल रही है; किन्तु और कुछ न कह सहज स्वर में कहने लगा—“यहाँ नई दिल्ली आया था, यदि जीवन बाबू घर में हों तो मिलता चलो ।”

दोनों भाई-बहन साथ-साथ बस पर बैठे । रानी अजमेरी गेट पर उतर गई । निखिल ने अपने हाथ का झोला उसे थमा दिया और बोला—“इसे लेती रानी !”

रानी जब बस से नीचे उतरी तो उसके पैर इतने भारी हो गये थे कि दूकान उठाये भी न उठते थे । झोले में सेब और मौसमी भरी थीं । पूरा झोला लेने तक ठसा था । इधर हाथ का बोझ उधर मन का बोझ कि यह निखिल कहाँ जाएंगे, आटपका वहाँ पर । अब मैं बहुत हैरान हूँ ! वह आज रात को माँ से जरूर और माँ एक तो यों ही चिढ़ी हुई हैं, फिर तो खूब कसकर खबर लेंगी मैं, कालेज ‘गई थी हरि भजन को ओटन लगी कपास’—कल जीवन के घर गई तो यह झोला नतीजा ऐसा मिला कि जो कभी रोये न चुकेगा और आज का आना भी पड़ा । लेकिन कुछ भी हो, मैं उससे मिलूँगी जरूर ! वह मिलना ही हो सकता है और चलता भी रह सकता है । इस तरह मन-ही-मन उलझी रानी पथ पर चली जा रही थी और तीसरे पहर की धूप फीकी-फीकी पड़ रही थी ।

×

×

×

“लेकिन एक बार डाक्टर बसु को दिखला देने में तो कोई हानि नहीं; कम-से-कम मुझे तो तसल्ली हो जायेगी ।” जीवन ने अधिकार और अपनत्व दोनों को ही अपनी वाणी में व्यक्त कर दिया था, जिससे सुभद्रा और चन्द्रभान इन्कार नहीं कर सके ।

चन्द्रभान ने धीरे से कह दिया—“हाँ, हाँ, दिखला दो, इसमें क्या नुकसान है ।” पति के मुँह से यह सुनकर सुभद्रा भी दुनियादारी करने लगी—“हाँ, जब तुम्हारा मन है तो दिखा दो ।”

अब जीवन की दृष्टि अखिल की ओर गई । उसने पूछ दिया—“क्यों अखिल, तुम्हारा क्या मन है ?”

इस पर संकोच भरा जवाब अखिल के मुँह से निकल गया—“मैं क्या बताऊँ जीवन, जैसा मन हो और जैसी सब की राय हो वही करो ।”

जीवन हँस पड़ा । रंजना चाय ले आई थी और तत्काल ही वापस चली गई; क्योंकि वहाँ अपने बड़े-बूढ़े बैठे थे । उनके बीच उसे लाज आती थी ।

थोड़ी देर तक बैठ जीवन चला गया । उसके बाद रात को जब निखिल घर आया तो आते ही सुभद्रा ने उससे सेव और मौसमियों वाला प्रसंग छेड़ दिया । यहाँ पर सुभद्रा भूल रही थी, जिसे वह निखिल का औदार्य समझती थी, वह थी उसकी बेगार ! अब उसके मन में भाई अखिल और भाभी शारदा के लिए कोई सन्धि नहीं रह गई थी । वह उनका जो भी काम करता वह दुनियादारी के कारण और बोझा समझ कर । इसीलिये यह सोचकर कि रोज-रोज़ ताजे फल खरीदने कौन जायेगा, एक बार में ही गठरी भर उठा लाया था । माँ के पूछने पर उसने यही जवाब दिया—“माधौ को सौदा खरीदने की तमीज़ नहीं है और मेरे पास इतना समय नहीं है कि रोज झोला लटकाकर मण्डी पहुँचूँ; इसलिए इकट्ठे ही मौसमी और सेव खरीद लिये ।” इस पर सुभद्रा कुछ कहने ही जा रही थी कि निखिल दूसरी बात कहने लगा—“माँ, मुझ पर तो तुम बात-बात पर बिगड़ती हो और रानी से कभी कुछ नहीं कहती, पूछो आज कहाँ मिली थी मुझको ।”

“कहाँ ?” सुभद्रा चींक उठी ।

और निखिल कहने लगा—“जीवन बाबू के घर गई थी । रोज इसके

शारदा घूँघट डाल एक ओर खड़ी हो गई थी और सुभद्रा उसकी निहार पति से कह रही थी—“हाँ, दिये थे । तब से लेटने नहीं दिया है, नंगी रही है और आज रंजना भी जा रही है अपने घर । कल उसकी माँ ने सने भेजा था ।”

चन्द्रभान बाबू इसके बाद चले गये । रानी अपने अध्ययन-कक्ष में पुस्तक के पन्ने पलटने लगी । अब रंजना शारदा के पास बैठी अपने जाने आयोजन कर रही थी कि कल की ही भाँति यथासमय आज भी जीवन वहाँ गया । आज का दृश्य कुछ और ही था । अखिल के पास चन्द्रभान बैठे थे, सु खड़ी थी और बाप की कुर्सी के पीछे दोनों हाथ रखे रानी खड़ी मुस्करा रही थी । जीवन को देखते ही वह वहाँ से खिसक गई । जीवन ने यह देखा हँस दिया । तभी कार्यवश वहाँ रंजना आई, उसको सामने देख सुभद्रा ने कहा दिया—“बेटी रंजना, फुर्ती से चाय तो बना लाओ ।”

और जब रंजना जाने लगी तो सुभद्रा चन्द्रभान से कहने लगी—“बड़ा करती है रंजना, दिन भर दौड़ती रहती है ।”

चन्द्रभान के मुँह से भी निकल गया—“हाँ, लड़की तो बड़ी-सुशील है ।”

जीवन ने दम्पति की बातों में रस लिया और मन-ही-मन प्रसन्न हो निकल बदल दिया । वह बोला—“चाचा जी, अभी तक वैद्य का ही इलाज चल रहा है ? अखिल भइया सुखकर काँटा हो गये हैं ! आखिर यह कब तक मद्धुर रहेंगे ? डाक्टर वसु अच्छे फीजिशियन हैं, वह मेरे फैमिली डाक्टर हैं, एम.बी.बी. हैं । मैं कल सबेरे उनको लाकर दिखाऊँगा ।”

इस पर चन्द्रभान बोल उठे—“तुम क्यों हैरान होगे जीवन, यह बीम देर में ही अच्छी होती है । डाक्टरी दवा केवल रोक-थाम कर सकती है, बीम को जड़ से तो वैद्य ही दूर करती है । बहुत कुछ हालत सुधर गई है । बीम का मामला है, देर तो लगेगी ही ।”

पास बैठी सुभद्रा पति के समर्थन में तत्क्षण ही कहने लगी—“हाँ, क्या ? डाक्टर पाण्डे का बहुत दिन तक इलाज किया; मगर जब फायदा हुआ तो वैद्य का पल्ला पकड़ना पड़ा । बार-बार इलाज बदलना भी तो उ नही है ।

बनाना रानी ! मैं उड़ती चिड़िया पहचानती हूँ । कल रात को जब जीवन
 यहाँ आया था तब तुम कहाँ मर गई थीं ! तब तो बुलाने पर भी नहीं आई
 और फिर वैसे ही आज मेरे सामने जीवन आया था तब वहाँ से क्यों खिसक
 गई थीं ? अब समझी कि तू कालेज में पढ़ती नहीं; बल्कि हम सब लोगों को
 पढ़ा रही है ।”

रानी निरुत्तर थी । उसकी आँखों से टप-टप आँसू चू रहे थे और सुभद्रा ने
 अब उसके कन्धे छोड़ दिये थे । वह दूर खड़ी हो बड़बड़ा रही थी—“रानी, अब
 कान खोलकर सुन लो, तनिक भी रियायत नहीं की जायगी तुम्हारे साथ, जो
 बिना मतलब घर के बाहर पैर निकाला । और कल से यह भंशट रखूँगी ही
 क्यों ? कल से माधौ तुम्हें कालेज छोड़ने जायेगा और छुट्टी होने के पहले पहुँच
 लिवा लायेगा । अब देखूँ चिड़िया कैसे उड़ती है ?”

रानी रोती रही, सुभद्रा बड़बड़ाती रही और रंजना वहाँ से उल्टे पाँव
 शारदा के पास आ, सारी घटना बताने लगी ।

: ३१ :

उस रात रंजना फिर अपने घर नहीं जा सकी; क्योंकि शारदा ने उसे रोक
 लिया था यह कहकर कि आज घर का वातावरण तनिक गरम है, अब कल
 सबेरे चली जाना । इस प्रकार दूसरे दिन रंजना अपने घर चली गई ।

अब घर की परिस्थिति यह थी कि रात को चन्द्रभान बाबू ने भी निखिल,
 रानी और सुभद्रा की बातें सुनी थीं । वे बीच में नहीं आये । लेकिन सोचते रहे
 कि रानी का पैर बाहर निकल चुका है, उस पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है ।
 इस सम्बन्ध में सुभद्रा ने जो कदम उठाया है, वह उचित है और यह जीवन
 क्यों रोज-रोज आता है यहाँ । कल भी आया और आज भी आया, मुझे उस

कालेज में छुट्टी ही रहती है। पूछो गई थी कि नहीं ?”

“अभी पूछती हूँ !” कहने के साथ सुभद्रा क्रोध से तमतमा उठी और जोर से पुकारने लगी—“रानी, ओ रानी ! चलो यहाँ आओ ।”

रानी अपने कमरे में बैठी जीवन के विषय में ही कुछ उधेड़-धुन कर रही थी। निखिल की बातें और माँ की क्रोध-भरी आवाज सुनकर वह सिन्न हो गई। उसकी हिम्मत नहीं पड़ी कि माँ के सामने जाय। लेकिन साथ ही डर भी था कि माँ गुस्से में हैं, अगर मैं न गई तो वे यहाँ आ जाएँगी। सोच वह डरने-डरते माँ के कमरे की ओर चल दी।

रंजना अब जा ही रही थी। वह सुभद्रा के पास यह कहने जा रही थी कि मैं अब जा रही हूँ; लेकिन तब तक माँ-बेटे का वाक्-युद्ध छिड़ गया और पकड़ लिया गया जो राक्षस के रूप में उसके सामने जा रहा था। वह कवाड़ों की ओट में ही खड़ी रही। अपने को किसी पर प्रकट नहीं होने देती।

रानी को सामने देखते ही सुभद्रा दाँत पीसकर बोली—“क्यों बेटे का कहीं सवारी गई थी दोपहर को ? अभी तुम मुझे जानती नहीं हो, टाँगें कर रख दूँगी ! एक ही दिन में सारा घुमकड़पन निकल जायेगा। रोज तो देती थी कि निखिल झूठ कहता है और आज कौन झूठा है ! बोलो, जवाब दो।”

रानी सिर झुकाये भीगी बिल्ली बनी खड़ी थी। उसके पास यदि कोई होता तो वह माँ की एक नहीं लगने देती और उल्टे चोर की भाँति कोतल निखिल को डाँटने लगती कि यह झूठा है। परन्तु कल मञ्जु के सामने पर्दा डालना पड़ा और आज वह गुञ्जाइश भी नहीं थी। अतः चुपचाप सिये खड़ी रही।

सुभद्रा रानी की चुप्पी पर और भी अधिक उबल उठी। दोनों हाथ कर बोली—“जीवन के घर तुम क्यों गई ? अब तो वह तुम्हें पढ़ाते आता ! तुम...!”

“कुछ नोट्स लिखने थे माँ ! कालेज में छुट्टी हो गई तो वहाँ चली गई लेकिन वे मिले ही नहीं !” रानी माँ की बात काट साहस करके इतना कह

सुभद्रा का पारा खूब गर्म हो रहा था। वह उठकर खड़ी हो गई और माँ में आ रानी के दोनों कन्धे पकड़कर हिलाती हुई बोली—“उल्लू किसी की

न लाठी टूटेगी ।' मैं नहीं चाहता हूँ कि जीवन बार-बार मेरे घर में आये ।"
अखिल बाप की इस बात पर एकदम चौंक उठा और बोला—“क्यों पिता जी ! जीवन ने क्या बुराई की है ?”

जीवन का प्रसंग चलते ही रानी वहाँ से खिसक गई थी; किन्तु निखिल बाप के पास ही कुर्सी के सहारे खड़ा था । चन्द्रभान अखिल को कुछ जवाब दें कि इसके पूर्व ही सुभद्रा कहने लगी—“घर में सयानी लड़की है, मैं किसी गैर मर्द का ज्यादा आना-जाना पसन्द नहीं करती । तुमने वह पचड़ा लगा दिया है कि जीवन रोज आये, यह मैं नापसन्द करती हूँ ।”

पत्नी की बात समाप्त होते ही चन्द्रभान दूसरे पक्ष में बोलने लगे—“अगर डाक्टरों इलाज कराना ही है तो जैसे निखिल अभी वैद्य के यहाँ ले जाता है वैसे ही डाक्टर घर पर ले आयेगा और उसके यहाँ ले भी जायगा । मैं दूसरे का एहसान नहीं चाहता ! मुझे इस बात से बड़ी विड हो गई है कि जीवन ने रानी के विचारों में ऐसा आजादी का पुट भर दिया है जो हम सबको असह्य है ।”

निखिल बाप के सम्मुख कभी अपना मुख नहीं खोलता था । वह कुछ कहना चाह कर भी चुप रहा और अखिल सारी परिस्थिति समझ कर विनयी स्वर में कहने लगा—“ठीक है, मैं कल जीवन और डाक्टर दोनों को समझा दूँगा ।”

इसके बाद चन्द्रभान उसी विषय पर थोड़ी देर तक दुनियादारी का उपदेश देते रहे, फिर जाकर नित्य-कर्म में लग गये ।

×

×

×

होली की छुट्टी में कॉलेज बन्द हो गये थे । जीवन को अवकाश था । वह साँभ होते ही अखिल के पास जा पहुँचा । दोनों में बातें होने लगी । लेकिन अखिल ने अभी उससे डाक्टर वमु के इलाज के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा । वहाँ सुभद्रा तथा चन्द्रभान थोड़ी देर के लिए आये और रानी तो शारदा के साथ वहाँ पर बैठी ही थी ।

आज रानी ने शिष्टतावश विवश होकर जीवन को अपने हाथों जलपान कराया और शारदा भी हँस-हँसकर जीवन से बातलाती रही ।

वस फिर क्या था ! जीवन के जाते ही सुभद्रा कमरे में आ क्रोध से बरस पड़ी, आते ही वह बोली—“क्यों अखिल, सबेरे तोते की तरह तुमको बाप ने

पर सन्देह होता है कि कहीं वह रानी को पथ-भ्रष्ट तो नहीं कर रहा है। को का कहना है कि लड़की पराई अमानत होती है, उसे सम्भाल कर रखना पड़ है।

सबेरा हुआ और चन्द्रभान ने एकान्त में सुभद्रा को बुलाकर रात की के विषय में पूछा तो उसने आइना खोलकर उनके सामने रख दिया, जिसे और भी चौंक उठे। अभी दम्पति की बातें चल ही रही थीं कि जीवन वसु को लेकर आ पहुँचा।

तब दुनियादारी के लिहाज से चन्द्रभान और सुभद्रा उसके पास जाकर गये और तनिक देर बाद ही पहुँच गया वहाँ निखिल और दुबकी-दुबकी सी रानी

जीवन रानी की ओर देख रहा था और रानी उसकी ओर पीठ किये खी। वह डाक्टर के कार्यक्रम को निहार रही थी।

डाक्टर ने अखिल की परीक्षा की और बताया—“आँतों के घाव अभी के त्यों हैं। वैद्य की पुड़ियों और मट्टे से कुछ भला नहीं होगा। मुझे जीवन ने बताया था कि महीनों हो गये और यह अभी मट्टा ही पी रहे हैं। मैं इन्जेक्शन लगाता हूँ। मेरा दावा है कि दो हफ्ते के अन्दर मैं बिल्कुल ठीक कर दूँगा।”

डाक्टर की बात पर दम्पति कुछ नहीं बोले और जीवन कहने लगा—“वस डाक्टर साहब, आप श्रीगणेश कर दीजिए। रोग जितनी जल्दी दूर हो उतना ही अच्छा, लगाइये इन्जेक्शन।”

जीवन के इस आदेश पर जब डाक्टर इन्जेक्शन तैयार करने लगा चन्द्रभान सुभद्रा की ओर देखने लगे और सुभद्रा उनकी ओर।

डाक्टर और जीवन के जाने के बाद चन्द्रभान तनिक मुँह बिगाड़कर अखिल से बोले—“जीवन डाक्टर को दिखाने के लिये लाया था कि इन्जेक्शन लगाने लिए! तुमने कुछ कहा नहीं उससे। कल जब डाक्टर आए तो उसका बि चुका देना। रुपये लाकर मैं अभी तुम्हें दे दूँगा और कह देना कि डाक्टर साहब थोड़े दिन का मामला है, वैद्य जी हमारे घर के आदमी हैं, उनको नाराज करना है। उन्होंने जितना समय बताया है अगर तब तक तबियत नहीं सुधरती है तो फिर आपका सहारा लूँगा। इस तरह बात बन जायगी। ‘न साँप मरे

अखिल ने अपना प्रस्ताव बतलाया और समझाने की तथा रुपये देने की बहुत कोशिश की। लेकिन सब व्यर्थ रहा। जीवन नहीं माना और उस समय भी डाक्टर ने इंजेक्शन लगाया।

फिर घर में अशान्ति और कलह की लहरें उठीं और उठकर शांत न हुईं। धीरे-धीरे बढ़ती ही रहीं।

: ३२ :

अखिल की बात जीवन ने नहीं मानी थी इसलिये चन्द्रभा और सुभद्रा दोनों विवश थे। लेकिन फिर भी वे अखिल को कोंचते रहते थे कि जो काम आदमी करना चाहे वह हो क्यों नहीं सकता। दो-चार दिन इलाज चलने दो फिर कह देना मुझे कोई फायदा नहीं है। वैद्य की दवा राहत पहुँचाती है। इस लिये अब मैं वही इलाज करूँगा।

अखिल बहुत ही असमंजस में था। वह न तो जीवन को नाराज करना चाहता था और न माँ-बाप को। उसने भी यही सोच लिया कि चार-छः दिन बाद मैं यही करूँगा जो पिता जी ने बताया है। फिर उसके मन में रानी का प्रसंग चलने लगा कि जीवन का क्या दोष, रानी उसके घर स्वयं जाती है, वह तो धुलाता नहीं और फिर वह ऐसा आदमी नहीं है जैसा माँ समझती हैं। जब अपना दाम खोटा होता है तो लोग परखने वाले को दोष देने लगते हैं। रानी लड़की जात है, पहले उस पर नियंत्रण नहीं रखा गया और जब दाँत मुँह के बाहर निकल आये तो उनको भीतर ठेलने की कोशिश की जा रही है। पहले जीवन अच्छा था अब घुरा हो गया।

इस प्रकार अखिल अक्सर सोचता रहता; लेकिन किसी से कुछ नहीं कहता।

पढ़ाया और मैंने समझाया, वह सब तुम भूल गये । जीवन से उसकी चर्चा नहीं चलाई ।”

अखिल शान्त बैठा था । वह अपराधी की भाँति दीन स्वर में बोला—“मेरा आज उससे कुछ कहना शोभा नहीं देता था । हर्ज ही क्या है, जो का आज नहीं हुआ है, वह कल हो जायेगा । आते ही किसी से जाने के लिये न कह देना चाहिये । आदमी को बुरा लग सकता है ।”

चन्द्रभान पत्नी को गरजते सुनकर उसके पास आकर खड़े हो गये थे । सुभद्रा उनकी ओर देख दोनों भी हैं चढ़ाकर बोली—“लो सुनो, सपूत क्या कर रहे हैं ? यह जीवन से बुराई नहीं लेंगे जब कि वह मेरे घर में नकब लगा रहा है !

चन्द्रभान खीझकर बोले—“मैं स्वयं कह दूँगा जीवन से अगर कल अखिल का मुँह बन्द रहा ।” यह कहकर वे चले गये और सुभद्रा अखिल की ओर से घूमकर रानी की ओर देखने लगी और आँखों में बल डालकर बोली—“मालूम होता है सुलह हो गई जीवन से ! तुम्हारे ये नखरे मेरी बूढ़ी आँखों को धोखा नहीं दे सकते ! खबरदार, अब जो तू जीवन के सामने आई तो तेरा गला ही घोट दूँगी !”

रानी पहले कुछ कहना चाहती थी, लेकिन माँ का उग्र-रूप देखकर सह गई । उसकी दृष्टि नीचे झुक गई और आँखों से दो बड़े-बड़े आँसू फर्क टपक पड़े ।

सुभद्रा ने शारदा को भी नहीं छोड़ा । वह उसको आड़े हाथों लेती हुई बोली—“क्यों सती-सावित्री जी, आप भी पसन्द करती हैं कि जीवन आप डाक्टर लाकर अखिल का इलाज कराये । हम लोगों ने आज तक किसी के सामने हाथ नहीं पसारा है । हमारी पोजीशन में बट्टा लगता है । और तुम लोगों को शर्म नहीं आती ! बहुत लगाव है जीवन से तभी उसके सामने खीसें कर रही थीं । यही तो कहती हूँ कि तुम लोग मान और अपमान कुछ भी समझते !”

शारदा चुपचाप सुनती रही और सुभद्रा बड़बड़ाती हुई कमरे से बाहर चली गई ।

सबेरा हुआ और जीवन डाक्टर को लिये-दिये फिर आ पहुँचा । तब उन

जीवन ने खाना आरम्भ कर दिया तो फूलमती ने जल्दी से दूसरी तश्तरी में पकवान सजाकर थाली ला, गयाप्रसाद के हाथों पर रख दी । वे रामानन्द के पास चले गये ।

अब फूलमती और शारदा जीवन से बातें करने लगीं और उधर आँच इतनी तेज हो गई थी कि घी में गुड़ियाँ जलने लगीं और कोई-कोई फूट गई थी; क्योंकि रानी के लिये गृहस्थी के काम एकदम नये थे । उसको ठीक तरह गूँठना नहीं आता था । घी में जब गीला खोया मिलने लगा तो जोर की पड़-पड़ाहट हुई । फूलमती वहाँ गई और रंजना से बोली—“लकड़ियाँ आगे खींच दो और कढ़ाई उतारकर नीचे रख दो ।”

अब कढ़ाई उतार दी गई थी । रंजना माँ के सम्मुख संकोचवश अपने कमरे में जाकर बैठ गई और रानी शारदा के पास आ आसीन हो गई ।

फूलमती शारदा से कुछ मन्त्रणा करना चाहती थी इसलिए वह उसको अलग कमरे में लिवा गई और जाते-जाते रंजना को यह आदेश देती गई—“रंजना, जल्दी से ऊपर जाकर कुछ पान लगा लाओ ।”

पानदान छत पर बड़े वाले कमरे में रहता था । रंजना वहाँ चली गई । और फूलमती शारदा के साथ अपनी घरोहर के कमरे में पहुँच उसकी राय लेने लगी कि इस अवसर पर जीवन को क्या भेंट देनी चाहिये ?

रानी और जीवन दोनों सामने थे । रानी के नथुने क्रोध से फरफरा रहे थे । कोई सुन न ले इसलिये वह वाणी पर नियन्त्रण रख, धीरे-धीरे कहने लगी—“यह है आपका चरित्र ! एक को साई और दूसरे को बधाई ! मैंने उस दिन आपके घर में आपके पिता जी के मुँह से रंजना का ब्याह तय हो जाने की बात सुनी थी । लेकिन आपने मुझे नहीं बताया, धोखे में रखा ! यह कौन सी शराफत है ? उस पर भी जब मैंने बात करने के लिए समय माँगा तो आप टाल गये । उस दिन दोपहर को आपके घर गई तो वहाँ निखिल भइया मिल गये । तबसे माँ बहुत नाराज हैं ! कहिये, अब क्या कहते हैं, आप ?”

जीवन मुस्करा दिया । और धीरे से सधी हुई आवाज में बोला—“मैं जानता था कि तुम बहुत नाराज होगी । काम था इसलिए अटक गया । तुमसे नहीं मिल पाया । रंजना के साथ ब्याह की बात है, उसके लिये ऐसा है कि पिता

होली जल गई । घुरेडी के दिन रँग और अवीर से शहर की सड़कें
गईं । जनता रंग पड़े कपड़े पहने और गुलाल से सनी दृष्टिगोचर हो रही थी
उसके बाद मिला-भेंटी का समय आया । लोग अपने इष्ट-मित्रों, सम्बन्धियों और
सम्पर्कियों से गले मिलने लगे । आज के दिन चन्द्रभान प्रोफेसर रामानन्द
घर गये थे और रामानन्द व्यवहार चुकाने उनके घर आये थे ।

दोनों पिता-पुत्र जब गयाप्रसाद के घर के सामने पहुँचे तो रामानन्द ने
सोचकर झिझके कि अब गयाप्रसाद के घर से सम्बन्ध होने वाला है, जाने
संकोच लगता है । लेकिन तब तक चबूतरे पर खड़े गयाप्रसाद ने अपने भाई
समधी और दामाद को देख लिया । वे जल्दी से लपक उनसे भेंटने लगे और
फिर सम्मान-पूर्वक बैठक में लिवा लाये ।

आज द्वीज थी । इसलिये फूलमती ने शारदा को बुलाया था । उसके साथ
रानी भी आई थी । शारदा आँगन में बैठी भइया द्वीज की चौक डाल रही थी ।
रानी और रंजना फूलमती के साथ बैठी मैदे और खोये की गुझियाँ गूँठ रही
थीं । फूलमती कढ़ाई पर बैठी थी । तभी बाहर से गोपेश खबर लाया कि
बाहर जीवन बाबू और उनके पिता बैठक में बैठे हैं ।

इतने में गयाप्रसाद अपने साथ जीवन को लिवाये हुए आँगन में आगये ।

आज आते ही शारदा को मालूम हो गया था कि रंजना का ब्याह जीवन
से तय हो गया है । इसको उसने तनिक भी घुरा नहीं माना; क्योंकि अपने घर
की किचकिच से वह स्वयं ऊब गई थी । अब वह भी नहीं चाहती थी कि रंजना
निखिल के गले बैठे और हाय-हाय में पड़े । उसने जीवन के बैठने के बिना
कुर्सी डाल दी और फिर माँ के पास जा कुछ फुसफुसाई । इस पर फूलमती उसकी
कढ़ाई सौंप, भण्डार घर में गई और कई पकवान निकाल लाई जो होली के
लिये बनाये गये थे ।

शारदा चाँदी की तश्तरी में पकवान रख जीवन के पास ले आई । तब तक
फूलमती ने एक स्टूल और तश्तरी लाकर रख दी । दोनों माँ-बेटी वहीं बैठी
गईं और जीवन से खाने का आग्रह करने लगीं ।

माँ और शारदा को व्यस्त देख रंजना कढ़ाई पर बैठ गई थी और रानी
गुठनी से गुझिया गूँठती रही ।

: ३३ :

रानी रंजना के घर से अपने घर तक पहुँचने के चन्द क्षणों में ही दुनिया भर की बातें सोच गई । उसका क्रम यह था कि जीवन अब बहुत कुछ बदल गया है । या तो मैं उसको गलत समझती रही या वह मुझे । अब क्या, अब तो रंजना के साथ उसका सम्बन्ध बिल्कुल पक्का हो गया । उसने मगन मन अँगूठी पहन ली, तो यह उसकी स्वीकृति नहीं तो और क्या है ? मैंने बड़ी भूल की जो उस पर अपना अन्तर खोलकर रख दिया । अगर कहीं घड़ी वाली बात उसने घर में किसी से कह दी या व्याह होने पर रंजना को ही बता दी तो मेरी क्या गति होगी ! मैं उस पर विश्वास करती रही । यह मेरी सबसे बड़ी भूल थी । वह अब पराया है और उसको अधिक छेड़ना मेरे लिये अच्छा नहीं । अगर कहीं गड़े मुर्दे उखड़ गये तो मैं किस घाट उतरूँगी ! बस, अब मेरा हृदय निश्चय है, जिन्दगी में जीवन से कभी नहीं मिलूँगी । उसकी ओर से मेरा मुँह मोड़ लेना सर्वथा हितकारी है ।

रानी ऐसा सोचती हुई घर में आई तो आते ही सुभद्रा से कहने लगी—
“माँ, तुमने कुछ सुना, रंजना का व्याह जीवन बाबू के साथ तय हो गया है । आज उसकी माँ ने उनको पुखराज जड़ी अँगूठी पहनाई है ।”

सुभद्रा के पैरों के नीचे से जमीन निकल गई । वह हक्का-बक्का हो रानी का मुँह देखने लगी । ऐसी स्थिति में उसके मुँह से निकल गया— ‘अरे ! मुझे मालूम भी नहीं हुआ । हाँ, समझ गई कि लड़की और दामाद की राय ली गई होगी तभी निश्चय बदलकर यह रिश्ता किया गया है । चलो जो कुछ हुआ अच्छा हुआ । मैं भी बला से बच गई । रंजना घर में आती तो अखिल और अपनी बहन के विषय को लेकर हरदम नाक-मुँह ही फुलाती रहती ।”

कहने को तो सुभद्रा यह कह गई । लेकिन उसका अन्तर्जगत् कुछ और ही कह रहा था । वह बात समाप्त कर एकदम मौन हो गई, तब यह विचार उसके मस्तिष्क को टंकोर उठा कि रंजना से जब तक मैं नफरत करती रही तब तक कोई नई बात नहीं हुई और जिस दिन से मैंने उसे कदर की निगाहों से देखा

१४२

जी ने अपनी सम्मति दी है, मैंने तो कुछ नहीं कहा ।”

रानी ने इस पर कुछ प्रश्न और किये और जीवन ने सुलभे हुये जवाब देकर उससे मुक्ति पाई ।

अब रंजना नीचे आगई थी और फूलमती शारदा के साथ बाहर पुखराज जड़ी अंगूठी जीवन की अंगुली में पहनाने लगी ।

जीवन चौंका तो फूलमती हँसकर उस की बलाएं लेती हुई बोली — “व्याज के पहले घर आए हो भइया तो सास की यह निशानी तो तुम्हें लेनी ही होगी नहीं तो मुझे दुःख होगा ।”

जीवन कुछ नहीं बोला । वह नीची दृष्टि किये बैठा रहा ।

जब जीवन पान मुँह में दाव बाहर जाने लगा तो रानी भी वहां से चली गई । फूलमती को जीवन की अंगुली में अंगूठी पहनाते देख उसकी छाती प साँप लोट गया था । तभी मन-ही-मन खिसियाती हुई वह वहाँ से चल दी ।

और जीवन जब वाप के साथ घर की ओर चला तो रास्ते में सोचता चल जा रहा था कि रानी को आखिर किस तरह समझाऊँ कि वह जिस पथ पर अनुसरण कर रही है वह उसकी राह नहीं है । काश ! वह समझ पाती कि मैं उससे केवल स्नेह करता हूँ जो हर बड़ा भाई अपनी बहन से रखता है । लेकिन वह भ्रम में है कि मैं उसका हूँ ऐसे जैसे एक प्रेमिका का प्रेमी । बहुत उथले विचार हैं रानी के, पता नहीं उनमें गहराई कब आयेगी ?

पथ तय हो रहा था । और मंजिल पूरी होने पर आगई थी । लेकिन जीवन के विचारों का क्रम अभी नहीं टूटा था ।

सुभद्रा अपने स्थान से कुछ विचक गई और गरमाती हुई बोली—“गया-साद और रंजना की माँ को भड़काने वाला दूसरा कौन हो सकता है ! मुझसे तलब पूछते हो और वह से क्यों नहीं पूछते कि उसने ही अपनी माँ को यह लाह दी होगी कि मुझे बड़े कष्ट हैं, माँ, जान-बूझकर रंजना को कुएँ में मत किलो ।”

अखिल और शारदा दोनों ने तर्क करना उचित नहीं समझा । वे मौन रहे और सुभद्रा कहती रही—“मुझे क्या, अगर रंजना मेरे घर में आ जाती तो नी व्याधि बढ़ जाती ! रोज महाभारत होता रहता । बहुत अच्छा जो बिना प्यारी के ही जूना टूट गया । मैं……।”

सुभद्रा की बात जहाँ की तहाँ पर ही रह गई । सहसा उसके सामने जीवन आकर खड़ा हो गया ।

जिस प्रकार अखिल मिलनसार जीव था उसी भाँति जीवन भी स्वतंत्र चारों का आदमी था । वह अखिल से अत्यन्त प्रेम रखता था । इसीलिए तब आता और आज भी आकर उसके पास बैठ पूछने लगा—“अब कैसे वियत है अखिल ?”

सुभद्रा का पहले तो यह मन हुआ कि वहाँ से चली जाय, लेकिन फिर कुछ विचकर वह एक कुर्सी पर बैठ गई । अखिल ने उसको सामने बैठा देखा किन्तु ठूलने की उसकी आदत नहीं थी, इसलिए धीरे-धीरे कहने लगा—“मुझे काफी आराम मालूम होता है, आज दिन में केवल दो बार टट्टी जाना पड़ा है ।”

“वस फिर क्या, मार लिया मैदान ! डाक्टर बसु का हाथ लगा है, चुटकी जाते अच्छे होते हो !” कहकर जीवन हँस पड़ा जिससे अखिल भी मुस्कराठा और निकट बैठी शारदा के होठों पर मुस्कान दौड़ गई ।

सुभद्रा जल-भुन गई । वह किसी से बिना कुछ कहे-सुने ही वहाँ से चली गई ।

×

×

×

सुभद्रा ने चन्द्रभानु बाबू को बताया कि अखिल जीवन से कह रहा था कि अब मेरी तबियत बहुत अच्छी है । डाक्टर बसु की दवा से फायदा है ।

तभी से वह अलग होती गई और आज सुन रही हूँ कि वह मेरे घर की बहू बन हो कर रामानन्द की बहू बनने जा रही है ।

इधर सुभद्रा अपने अन्तर्द्वन्द्व को लेकर अलग जा बैठी थी और दूसरी ओर निखिल ने भी सुना अपने कमरे से जो समाचार रानी लाई थी । वह भी चौंका । किन्तु उसने इस घटना को तनिक भी महत्व नहीं दिया । वह रंजना को अब फूटी आँखों नहीं देखना चाहता था । और उसके साथ ही जीवन में उसकी कटुता का पात्र बन गया था ।

सुभद्रा ने चन्द्रभान बाबू से जब रंजना के व्याह की बात बताई तो वे चुप रह सके । अनायास ही उनके मुँह से निकल गया—“यह क्या किया गया प्रसाद ने ? दोनों बहने साथ-साथ रहतीं, किना अच्छा था । शायद उन्होंने कभी के साथ किये गये व्यवहार को बुरा माना । इससे उनको गलत-फहमी हो गई, तभी बात दूसरी जगह पक्की कर दी ।”

दम्पति देर तक उसी प्रसंग पर बातें करते रहे । और जब साँझ का सूरज अस्ताचल की गोद में जाकर छिप गया तब अपनी पलकों को झुकाता हुआ अन्धकार धीरे-धीरे धरती पर उतरने लगा । शारदा ने कमरे की बत्ती जलाई और दीप-देवता को नमस्कार कर पति से पूछने लगी—“आज लगता है कि सब दिन की अपेक्षा तुम्हारी तबियत कुछ अच्छी रही ।”

“हाँ शारदा, सब ईश्वर की दया है और किसी के हाथ का यश । देखो डाक्टर पाण्डे की दवा खाते-खाते ऊब गया पर जहाँ का तहाँ ही रहा । रोना बड़ा, इलाज बदला गया और इस वैद्य ने तो मेरी कमर ही तोड़ डाली । लेकिन डाक्टर बसु एक कुशल फीजिशियन बाद में हैं, सबसे पहले हैं सहानुभूति के साक्षात् प्रतीक ! उनकी दवा कारगर हो रही है और मैं……।”

अभी अखिल इतना ही कह पाया था कि सुभद्रा उन दोनों के बीच आकर खड़ी होगई और मुँह बिचका, आँखें टेढ़ी कर, हाथ नचाती हुई बोली—“युद्ध है, जीवन के साथ रंजना का व्याह हो रहा है ! यह सब तुम लोगों की मेहनत वानी नहीं तो और क्या है ?”

“क्या मतलब माँ, मैं समझा नहीं !” अखिल ने तथ्य को समझते हुये सुभद्रा का मान रखने के लिए यह प्रश्न कर दिया ।

तो यह एक नयी व्याधि पैदा हो गई।”

सुभद्रा भी खरी-खोटी सुनाती रही और अखिल उसी समय कपड़े पहन घर से बाहर निकल गया।

अखिल ने जीवन के घर जाकर बहुत प्रयत्न किया। जीवन को समझाया, रामानन्द से कहा; लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला। डाक्टर बसु को रामानन्द ने बहुत पहले ही चेक काट दिया था। अतः उनके पास जाना सर्वथा व्यर्थ था। रामानन्द ने अखिल की मधुर भर्त्सना की और कहा—“अभी दो दिन भी नहीं हुये इलाज बन्द हुए और तुम घर के बाहर घूमने लगे। बीमारी की देह है, ऋतु बदल रही है, अगर कहीं हवा लग गई या और कुछ कष्ट हो गया तो फिर पड़े रहोगे। जाओ, इन व्यर्थ के झंझटों में न पड़ो। घर जाकर आराम करो। अगर चन्द्रभान बाबू विल के विषय में कुछ कहेंगे तो मैं उन्हें समझा दूंगा। क्या तुम कोई गैर हो मेरे लिए, जैसा जीवन वैसे ही तुम।”

अखिल चला आया। तब तो घर में उसके आते ही हँगामा मच गया। सुभद्रा खूब जी भरकर बड़बड़ाई और चन्द्रभान बाबू भी बहुत लाल-पोले हुए। किन्तु अखिल सब कुछ सह गया। उसके चित्त में उलझन समा गई।

शारदा बहुत ही ज्यादा विकट परिस्थिति में थी। वह किसी को कुछ भी जवाब नहीं दे सकती थी। दम्पति अत्यन्त हैरान थे।

रात को सुभद्रा और चन्द्रभान अखिल पर क्रोध से उबले थे और सबेरे निखिल ने अपने कमरे से अखिल की चारपाई उठाकर शारदा के कमरे में डाल दी और उससे कहने लगा—“भाभी! अब तो भइया अच्छे हो गये। इसलिये उनका बिस्तर यहाँ से हटा दिया है।”

शारदा कुछ नहीं बोली। अखिल उस समय आज बहुत दिनों के बाद अपनी दुकान गया था। वहाँ पहुँचते ही उसने एक नया परिवर्तन देखा। उसने देखा की लकड़ी का पार्टीशन लगाकर दुकान में जो जगह निखिल ने उस को दे रखी थी, वहाँ पर अलमारियाँ लगी हैं और पार्टीशन का कहीं पता नहीं है! वहाँ केवल माधो बैठा था—एक चौदह-पन्द्रह साल का लड़का नीली नेकर और सफेद हाफ कमीज पहने जो सारे घर का विश्वासपात्र था। उससे अखिल ने पूछा—“मेरा सामान कहाँ रखा गया है माधो! निकालो, कुछ काम

इस तरह खूब नमक-मिर्च मिलाकर सुभद्रा ने पति के कान भर दिये चन्द्रभान फिर कई दिन तक क्रोध के कारण अखिल के कमरे में नहीं आये।

अब जब जीवन आता था तो उसकी भेंट शारदा और अखिल के रिक्त घर में और किसी से नहीं होती थी। रानी रूठी हुई थी। सुभद्रा भी थी और बहुत ही गुस्से में थे चन्द्रभान बाबू।

धीरे-धीरे वह दिन आ गया जब अखिल बिल्कुल चंगा हो गया। अब के दस दिन बीत गये थे। मौसम बदलने जा रहा था। दिन में थोड़ी-उमस का आभास होने लगा था। ऐसे में ही एक दिन डाक्टर वसु ने कहा कि अब इंजेक्शन लगाने की कोई जरूरत नहीं। दो पेटेंट दवाइयाँ लिखे दे-हैं, एक खाना खाने के बाद दोपहर को और दूसरी रात को; कुछ दिन तक चलेगी, वस अब पेचिश खत्म समझो।

अखिल यह सुन जीवन को एकान्त में ले गया और उससे बोला—“आप साहब का बिल नहीं आया अभी? जाते ही भेज देना।”

इस पर जीवन हँस पड़ा और कहने लगा—“एक ही बात है। मेरे पास गया या तुम्हारे घर से। बिल तो पिताजी के नाम बना है, फिर यहाँ कैसे सकता है?”

अखिल बिल भेजने के लिए जीवन को बहुत समझाता रहा। लेकिन एक न मानी, तो वह विवश हो गया।

डाक्टर की लिखी हुई दोनों दवाइयाँ भी खरीद कर जीवन उसी अखिल के पास रख आया और जब दो दिन हो गये और घर में डाक्टर आया और न आया फिर जीवन ही तो सुभद्रा कुछ चौंकी। उसने पति से और दम्पति अखिल के पास पहुँच परिस्थिति का ज्ञान करने लगे।

चन्द्रभान जब अखिल के मुँह से सारी बातें सुन चुके तो गर्म होकर बोले “तुम्हें शर्म नहीं आई अखिल! बिल तो दूर रहा और ये दवाइयाँ भी मंगा तुमने जीवन से। क्या निखिल और मैं दोनों मर गये थे? इलाज तुम्हारा और एहसान मुझ पर। मैंने हमेशा दूसरों को दिया है लिया नहीं। जाओ तो चल-फिर सकते हो, बिल कितना है मालूम करो और रुपया दे आसमान से गिरे तो खजूर में अटके। जीवन के आने-जाने का सिलसिला

तो यह ए
सुभ
से बाहर
अखिल
रामानन्द
ने बहुत
था। राम
नहीं हुये
है, ऋतु
फिर पड़े
करो।
हूँगा। व
अखिल
सुभद्रा खू
किन्तु अ
शार
जवाब न
रात
निखिल
दी और
उनका दि
शार
अपनी द
उसने देख
को दे रख
है! व
नेकर औ
अखिल

माधो और सामान की ओर ।

अखिल ने काले और सफेद रंग की शीशियां उठा लीं । फिर चीनी की एक प्लेट और ब्रुश लेकर कागज पर एक 'रफ' डिजाइन बनाने लगा । वह दूकान के एक कोने में बैठा था । ग्राहक आ रहे थे, निखिल जल्दी मचा रहा था और माधो एक पैर से नाच रहा था । बार-बार सामान रखने-उठाने में अखिल से टकरा जाता जिससे अखिल का हाथ हिलता और रफ बिगड़ जाता । वह थोड़ी देर तक तो यह सब बर्दाश्त करता रहा, फिर चुपचाप सामान अलमारी में रख वहाँ से घर की ओर चल दिया । निखिल ने उसे नहीं टोका ।

अखिल रास्ते में सोचता जा रहा था कि अब मेरा यहाँ पर बैठना सम्भव नहीं । क्योंकि यहाँ पर बैठकर मुझे स्वतन्त्रता नहीं मिलेगी और न मिलेगी शान्ति । मैं अपना कुछ भी काम न कर सकूँगा । चलो इस समय मन अच्छा नहीं है, घर जाकर थोड़ी देर आराम करूँगा । फिर जगह की तलाश में निकलूँगा । क्योंकि काम करना आवश्यक है । माँ अब तनिक भी रियायत न करेंगी और सम्भव है, ऊपर रहने भी न दें । इसलिये पहले ही चेत जाना अच्छा है ।

घर आकर अखिल निखिल के कमरे की ओर गया । उसमें ताला लटक रहा था । वह चौंका और तत्क्षण ही सोच डाला कि यह काम निखिल का ही है । चलो, शारदा से पूछूँ कि क्या बात है ? क्या मेरा विस्तर फिर आज नीचे पहुँचा दिया गया ?

अखिल यह सोचता हुआ शारदा के कमरे की ओर गया । वहाँ शारदा बैठी छोटे बच्चे प्रमोद के तेल लगा रही थी । पति को आया देख चौंकर पूछने लगी—“क्यों, बहुत जल्दी चले आये ? मैं तो कहती थी कि दो-एक दिन अभी और आराम करो । इतने दिन का टूटा हुआ शरीर है, बैठा नहीं जायेगा ।”

सामने अखिल का विस्तर बिछा था । वह सब कुछ समझ गया । शारदा से कुछ नहीं पूछा । फिर चारपाई पर बैठ कहने लगा—“कहाँ बैठा शारदा, निखिल ने पूरी दूकान में फर्नीचर लगवा दिया है । मेरे बैठने के लिए अब वहाँ कोई जगह नहीं है । सामान एक अलमारी में बंद कर दिया गया है । निकालकर काम करने बैठा तो अनेक बाधाएँ सामने आईं । खिसियाकर चला आया । अब कोई दूसरी जगह ढूँढनी पड़ेगी ।”

करूँ !”

“मुझे कुछ नहीं मालूम भइया ! छोटे भइया के आने पर ही पता होगा ।
माधौ के मुँह से यह सुनकर अखिल वहाँ बैठ गया और निखिल के आने
की प्रतीक्षा करने लगा ।

नियत समय पर निखिल दूकान आया और आते ही अखिल को वहाँ के
देख यह सोचने लगा कि भइया पूछेंगे कि अब मैं कहाँ बैठूँगा । यह पार्टीशन
क्यों अलग कर दिया !

लेकिन ऐसा नहीं हुआ । अखिल अपनी परिस्थिति को समझता था । इस
लिये दूकान पर पहुँचते ही उसने भाँप लिया था कि जो उसके बैठने की जगह
थी, उसमें निखिल की दूकान का फर्नीचर आ जाना यह उसको वहाँ से हटा
देने की योजना थी—चाहे निखिल ने अपने आप ऐसा किया हो या माँ के कहने
से । इस सम्बन्ध में कुछ भी न पूछना अच्छा है । कोई और जगह ढूँढ लूँगा ।

शिल्पी समाई का घूँट पिये बैठा था । निखिल आकर बैठ गया और जब
वह स्थिर हो चुका तो अखिल ने धीरे से पूछ दिया—“रग और ब्रुश वगैरे
कहाँ रख दिये हैं निखिल ! लाओ, कुछ कास करूँ !”

उत्तर में निखिल बहुत विस्तार में चला गया । वह बोला—“तुम्हारा
तबियत खराब थी । और यह जगह बेकार पड़ी थी । दूकान में जगह की कमी
मकस थी, इसलिये मैंने वह लकड़ी का पार्टीशन तोड़ दिया और फर्नीचर फि
करा दिया है । सामान एक अलमारी में बन्द है, अभी निकलवाता हूँ ।”

यह कहकर निखिल ने माधौ को चाभी दी और वह अखिल का कब
खाना जिसमें सूखे-गीले कई रंग, कूँची, ब्रुश, कागज, कापियाँ और प्लास्टर
आफ पेरिस आदि था, सब निकाल-निकालकर बाहर रखने लगा । यह देख
अखिल बोला—“रहने दो माधौ, मैं आता हूँ, ज़रूरत की चीजें निकाल लूँगा
वाकी रखा रहेगा ।” यह कहते ही वह माधौ के पास पहुँच गया ।

निखिल को बहुत बुरा लगा कि जिस कारण सिर मुड़ाया वह बात होकर
ही रही । भइया को यहाँ से टालने के लिये मैंने यह सब किया था; लेकिन
पैर अड़ा रहे हैं ।

मन-ही-मन निखिल कुढ़कर रह गया । उसने अखिल की ओर देखा, कि

का उपक्रम कर रही थी। सहसा शारदा के कमरे में खटपट हुई। सुभद्रा बाहर आकर देखने लगी कि शायद अखिल आया है।

थका-हारा अखिल अभी आकर बंठा ही था कि सुभद्रा उसके सामने आ गई और कहने लगी—“आज तुम दूकान पर नहीं बंठे, चले क्यों आये?”

अखिल मन की बात कह देना चाहता था; किन्तु उसने बड़प्पन को अधिक महत्व दिया और लिहाज-भरे स्वर में बोला—“बैठूँगा माँ, आज महीनों बाद गया था, मन नहीं लगा, इसलिए उठकर चला आया। निखिल कुछ कहता था क्या?”

उत्तर में सुभद्रा कहने लगी—“वह तो कहता था कि भइया शायद नाराज हो गये हैं जो मैंने पार्टीशन खत्म करके पूरी दूकान में फर्नीचर लगा दिया है। वे काम करने बैठे तो माथी का तनिक धक्का लग गया, उनका हाथ हिल गया; इस पर तिनक कर चले आये। तो मैं अब यह कहती हूँ भइया कि अगर इस तरह चौकोगे तो कैसे काम चलेगा? तुम्हें तो खुश होना चाहिए कि अब दूकान में हवाव आगया है और वह ऊँचे पैमाने की जँचती है। तुम्हारे पिताजी बहुत नाराज हैं। तुम्हें सोच-समझ कर काम करना चाहिए। मेरा क्या, मुँह से बक लेती हूँ। लेकिन अपनी कलक को नहीं दाब पाती इसलिये कहती हूँ।”

अब अखिल को फिर बोलना पड़ा। वह तनिक हँसकर नम्रतापूर्वक शिष्ट शब्दों में कहने लगा—“अरे माँ, यह सब कुछ नहीं है। मन नहीं लगा, तभी चला आया था। कल से जाऊँगा, बैठूँगा और काम करूँगा। पिता जी क्यों नाराज हैं, मैंने कोई भूल की है क्या?”

इस पर सुभद्रा की तयोरियाँ चढ़ गईं और वह तेज गले से बोली—“जान-बूझकर बनते हो, रामानन्द से डाक्टर का बिल चुकवाकर क्या तुमने इस घर की कम तोहीन की है? वे कहते हैं कि मेरा सिर नीचा हो गया और अब भी तुम पूछते हो कि मुझ से कुछ भूल हो गई है क्या?”

अखिल अब चुप नहीं रह सका। उसने जवाब दिया जो अप्रिय नहीं, प्रिय शब्दावलिओं में था। वह बोला—“समझ में नहीं आता है माँ, कि इसके लिए तुम सब लोग मुझको दोषी क्यों ठहराते हो? जिस तरह बोलने वाले का मुँह नहीं बंद किया जा सकता, उसी तरह उठा हुआ हाथ रोका नहीं जा सकता।

शारदा का चेहरा फक हो गया। वह जैसे सोते से जाग पड़ी हो, चौंका बोल उठी—“तुमने कुछ पूछा नहीं निखिल से, शायद कई महीनों से कि नहीं पहुँचा, इसीलिए उसने ऐसा किया हो ! आज सबेरे तुम्हारा विस्तर भी हटा दिया है अपने कमरे से।”

अखिल उठी मुद्रा में बैठा रहा और सहज-स्वभाव बोल उठा—“एक तो उससे कुछ भी पूछना नहीं चाहता था, दूसरे उसने आते ही ऐसी भूमिका निभाई जिसमें कहीं मैं उससे कुछ पूछ न दूँ। समाई सबसे बड़ा सहारा है। आज लेकर कल तक मैं कोई-न-कोई जगह ढूँढ़ निकलूँगा।” यह कहकर वह गया। बदन थक गया था, शरीर आलस्य का अनुभव कर रहा था। देर वह पत्नी से बातें करता रहा। फिर भोजन कर बाहर निकल गया।

रात को ऐसा हुआ कि सुभद्रा ने चन्द्रभान से कहा—“निखिल कहता कि सबेरे अखिल दूकान गया और तनिक देर तक बैठा कागज रंगता रहा फिर उठकर चला आया। घर में पड़ा रहा और खाना खाकर घूमने निकल गया। अभी तक नहीं लौटा है। समझ में नहीं आता कि लड़का क्या कर रहा है ? वह समझा होगा कि निखिल ने मुझे दूकान से हटा दिया है। इसीलिए ऐंठा घूम रहा है। बेचारे निखिल ने तो भलाई की। कवाड़ियों जैसे कुत्ते लगाए बैठ रहता था, उससे अच्छा अब हो गया है कि आराम से गद्दी पर और मन लगाकर काम करे; लेकिन...”

“लेकिन निखिल की माँ, अब अखिल सुधर नहीं सकता। वह अपने स्वभाव से मजबूर है। देखो न, डाक्टर वसु का बिल उसी के कारण रामानन्द ने चुकाया है। शायद वे समझते होंगे कि अखिल के साथ घर में अच्छा व्यवहार किया जाता। मेरा तो सिर लच गया। अब मेरा मन और अधिक खराब करो। जाओ अपना काम करो।” चन्द्रभान यह कह कुर्सी पर बैठ गये दोनों हाथ अपनी कनपटियों पर रख, किसी गहरे विचार में खो गये।

सुभद्रा अब वहाँ खड़ी न रहकर उनके निकट ही फर्श पर बिछी दीवार बैठ गई। वह मौन थी और समझ गई थी कि इस समय पति के चित्त में क्या लाहट है, उलझन है, शायद वे बहुत गुस्से में हैं। इसलिये दुबकी बेंठी रहने लगी।

निखिल खाना खाकर अपने कमरे में लेट रहा था और रानी भी

चन्द्रभान वहीं दूसरी चारपाई पर टिक गये और कहने लगे—“यह सब मामला चलने वाला नहीं दिखाई देता है। मेरी नाक तो उस दिन ही कट गई थी जब दो कौड़ी का आदमी सिंधी मेरे पास तगादा लेकर आया था। अब कुछ न कहो इन लोगों से, जो करते हैं, करने दो। आम कहोगे, इमली समझेंगे और हर हालत में घर की बदनामी करायेंगे। चलो, अन्धों के आगे रोना अपनी आँखें खोना है।” यह कहकर वे उठ पड़े और बाहर की ओर जाने लगे।

लेकिन सुभद्रा का गुवार अभी बाकी था। वह छूटते ही बोल उठी—“देख लिया, इतना तुम बके और मैं बड़बड़ाई, लेकिन क्या मजाल कि जो इन चिकने घड़ों पर एक बूँद पानी भी ठहरा हो। बहुत हिम्मत बढ़ गई है अखिल तुम्हारी। बाप की इज्जत मिट्टी में मिलाने पर तुले हो, यह अच्छा नहीं। मैं...”

चन्द्रभान बाबू चौखट तक चल आये थे और सुभद्रा अखिल को चलते-चलते डाँट बता रही थी कि बीच में ही बोल उठा अखिल। वह उठकर खड़ा हो गया और सुभद्रा के पास आकर बोला—“माँ, मेरे ही पीछे सारा भंडा है, दिन-रात घर में हाय-हाय मची रहती है तो खत्म करो इस भंडा को। जैसे तुमने मुझे रहने के लिए नीचे कमरा दिया था वैसे ही अब चुपचाप यहाँ से चला जाने दो। क्योंकि मेरे कारण घर की बदनामी होती है, पिता जी को बाहर शर्मिदा होना पड़ता है। मैं यह नहीं चाहता। मैं...”

“सुना, क्या कह रहे हैं सपूत ! अब हिम्मत यहाँ तक बढ़ गई है !” सुभद्रा ने अपनी यह बात कहकर चन्द्रभान को जाने से रोक लिया, और वे रुक तो पहले ही चुके थे, जब अखिल ने घर से चले जाने की बात कही थी। वे पास आ गये और अखिल को डाँटकर बोले—“तो कहता क्या है, चला क्यों नहीं जाता ? ले जाओ अपने अण्डे-बच्चों को भी साथ, देहरी नाँचे परदेश होता है ! कल ही से आटे-दाल का भाव मालूम पड़ जायेगा। अकेला तो तू सब जगह जा सकता है। तनिक कन्धे पर जुआ रख कर भी तो देख ! जो बकते हैं वे कुछ करते नहीं। अभी तक छाया में पले हो बच्चू ! बाहर निकलोगे तब आँखें खुलेंगी !”

अखिल ने अपने पर बहुत नियन्त्रण किया; लेकिन वह अपने अन्दर के व्यक्ति को नहीं हलाल कर सका। आवेश आगया और वह बोल उठा—“मैं अकेले नहीं सपरिवार जाऊँगा और कोशिश यह करूँगा कि भविष्य में आपको

में क्या करूँ ? मैं कहने तो गया नहीं था रामानन्द से । चेक उन्होंने मर्जी से दिया है । मैंने उनसे बहुत कहा; लेकिन वे नहीं माने । अब क्या है जो बताओ, करूँ ?”

“यह मुझसे पूछते हो ! दाढ़ी-मूँछ के हो गये हो, खुद नहीं सोच सकते हैं मैं सब जानती हूँ ।” कहकर सुभद्रा खड़ी हो गई और उसके हाथ आगे बढ़ने लगे । वह कह रही थी—“बहुत बड़ा एहसान का बोझ लाद दिया है नन्द ने, यह उनकी एक चाल है । बराबर का रिश्ता है, गयाप्रसाद के दामाद हो और जीवन छोटा । पलड़ा हमारा भारी रहना चाहिए था । ऊपर उठ गया, सिर्फ तुम्हारी वजह से । अगर तुम चाहते तो डाक्टर का इलाज चलता ही क्यों ? मैं...।”

“क्या है निखिल की माँ ! क्यों खामस्वाह के लिये अपना माथा खरार रही हो ? भला ऊसर भी कभी खेत बन सकते हैं !” यह स्वर चन्द्रभानु का था । सुभद्रा को देर से यहाँ बड़बड़ाते सुन वे यह जानने चले आये थे क्या कोई नयी बात हो गई है जिसको लेकर वह अखिल पर विगड़ रही है ।

सुभद्रा पति का मुँह पा उनकी ओर उन्मुख हो उसी मुद्रा में कहने लगी—“मैंने दूकान से एकाएक चले आने की बात कही तो तुम्हारे सपूत बहुत खली । मुझको जवाब देते हैं, कहते हैं कि तुम सब लोग मिलकर दोषी क्यों ठहराते हो ! रामानन्द ने डाक्टर का बिल चुका दिया तो उसके मैं क्या करूँ ! भला तुम्हीं बताओ कि अपनी शान में बट्टा लगा या नहीं ? पहले से ही जानती थी कि दोनों मियाँ-बीवी मिलकर रंजना की माँ के घर भरते रहे और जीवन के साथ व्याह इन्हीं लोगों की मर्जी से तय हुआ । पर तुरा यह कि सब कुछ जानते हुए भी, घर में कुछ नहीं बताया गया और उल्टा चोर कोतवाल को डाँट रहा है । मैं हार गई इन लोगों से । अखिल जैसा है बुनिया जानती है; लेकिन बहू को क्या कहूँ ? क्या यह नहीं जानते कि पहले अपने घर का मान रखा जाता है ? जब इतने दिनों से मेरे घर में रंजना के घर में अक्सर चर्चा चला करती थी कि रंजना का व्याह निखिल होगा । ऐसी बात नहीं थी कि यह माँ को जोर देती और माँ इसकी बात मानती !”

जल्दी करो नहीं तो दिन निकलते ही पिताजी का गुस्सा और भड़केगा। मुझको देखते ही वे आपे से बाहर हो जायेंगे। हम लोगों का हर हालत में यहाँ से चल देना ही ठीक है ! कोई जग न पाये और हम चुपके से घर के बाहर हो जायें; यह बहुत अच्छा रहेगा।”

शारदा सिसकियाँ भरती हुई बोली—“पिताजी की बातों का बुरा न मानो, गुस्सा थोड़ी देर के लिए आता है, वह क्या दाँत-वाल थोड़े ही जमायेगा। कच्ची गृहस्थी है, कहाँ भटकोगे चलकर ! मैं बहुत हैरान हूँ कि यह सब क्या होने जा रहा है। ईश्वर के लिए मेरी बात मान लो। मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।” यह कह शारदा पति के पैरों से लिपट गई और फूट-फूटकर रोने लगी।

लेकिन शिल्पी अपने निर्णय से तनिक भी नहीं डिगा। वह मोह, स्नेह और प्यार के बंधन तोड़ता हुआ शान्त स्वर में बोल उठा—“जिद न करो शारदा, जो मैं कह रहा हूँ, अगर वह तुम्हें मन्जूर नहीं है तो तुम रहो सबके साथ ! मैं जाता हूँ !”

अखिल चल दिया और शारदा ने उसकी धोती पकड़ ली। वह बोली—“हम दोनों प्राणी भूख-प्यास सह लेंगे, पर इन बच्चों का क्या होगा ! ये बेचारे नाहक विलविलायेंगे जब हम लोग समस्याओं से गुजर रहे होंगे। तनिक इनका तो ख्याल करो !”

इस पर अखिल कहने लगा—“ये सब व्यर्थ की बातें हैं। सृष्टि विधाता की है, वही पालन करता है; मनुष्य तो निमित्त मात्र है। बच्चे पहले हैं, हम लोग बाद में। देर न करो, उठो शारदा ! समय जा रहा है।”

इस प्रकार थोड़ी देर तक दम्पति में बातचीत चलती रही। फिर पति के आदेश पर शारदा बाहर निकली। इसके पूर्व ही सुभद्रा वहाँ से हट गई थी। वह मन-ही-मन बहुत प्रसन्न थी कि आज मेरी इच्छा पूरी होने जा रही है। अच्छा हो, अगर अखिल और बहू दोनों उनके (चन्द्रभान) जागने के पूर्व ही घर छोड़ दें।

यही हुआ। शारदा ने कुछ ज़रूरी बर्तन और कपड़े आदि साथ में ले लिये। कुल सामान मिलाकर कपड़ों से भरा एक टूंक था और बिछौने तथा बर्तनों की एक गठरी। हाथ पैसे से खाली था। केवल शारदा के पास ग्यारह

शिकायत का मौका न मिले। क्षमा कीजिए, यदि मैंने कोई अपशब्द कहा हो। वस, अब मैं नहीं रहूँगा इस घर में ! सबेरे आप मुझको यहाँ पायेंगे !”

चन्द्रभान बावू दाँत किटकिटा कर रह गये। वे इतनी जोर से बोले कि सारा घर हिल उठा। रानी और निखिल हड़बड़ाये हुए दौड़कर वहाँ आये। शिशु विनोद चौंककर जग पड़ा और सहमा-सहमा माँ की गोद में जाकर लिपटा लिया। चन्द्रभान ने कहा—“जाना चाहते हो तो जैसा सबेरा वैसा अब जाओ, सामने से हटो। मैं ऐसे बदतमीज़ लड़के का मुँह भी नहीं देखना चाहता हूँ।”

अखिल इस बार कुछ नहीं बोला। वह अपनी जगह पर निश्चल खड़ा रहा और चन्द्रभान फिर गरजे—“अभी गये नहीं तुम सामने से। मैं कहता हूँ जाओ अभी ! इसी समय !”

किन्तु अखिल शांत रहा। तब बाप का हाथ अपनी भरपूर ताकत के साथ बेटे के गाल पर जा पड़ा। सुभद्रा बीच में आ गई। रानी और निखिल अखिल का हाथ पकड़कर बाहर खींच ले गये और सुभद्रा पति को समझाती हुई, उनके कमरे में धीरे-धीरे लिवा गई।

रात जा रही थी। प्राणीवर्ग सो रहा था। लेकिन घर में सभी जाग रहे थे। लगता था कि घर में जो बहुत बड़ी दुर्घटना हो गई है, यह उम्मीदमातम है।

×

×

×

रात भर अखिल और शारदा की बातें हुईं। निष्कर्ष वही रहा जो अखिल ने सोच लिया था। शारदा के सारे तर्क उसके सामने वितर्क बन गये।

सबेरा हुआ। अखिल अपने निश्चय पर दृढ़ रहा। सुभद्रा मुँह अँधेरे में दबे पाँव यह देखने आई कि कहीं अखिल चला तो नहीं गया है। कमरे के दरवाजे बंद थे, अन्दर बत्ती जल रही थी। दराज़ों से उसने देखा, शारदा रो रही थी और अखिल कह रहा था—“हम लोगों के पास है ही क्या ? थोड़े-थोड़े आवश्यक बर्तन और कपड़ों से काम चल जायेगा। मुझे यहाँ रहना नहीं है। शारदा, तुम से कितना कहा कि न रोओ, लेकिन तुम मानती ही नहीं।”

वहूँ रहेगा। तभी उसने तेलीवाड़े में आकर रिक्शा रुकवा दिया। धर्मशाला के नीचे फिर बाँधने के हिस्से में तीन दिन के लिये एक कमरा मिल गया।

आज के लिये खाने-पीने की व्यवस्था कर अखिल बाजार चला गया और शारदा सोचने लगी कि मेरा नसीब मुझको यह दिन दिखा रहा है। इसका क्या हिस्सा लूँ ? गृहस्थी का बाँधना बहुत कठिन होता है और बाँधकर न जाय उसको चलाना यह उससे भी दुस्तर। खाली सूप मेरे हाथ में है, उसको पछोरने वह किससे क्या लाभ ? कैसे चलेगी गृहस्थी और कैसे जियेंगे ये नन्हें-नन्हें बच्चे ! पराये हाथ के पैसे का क्या भरोसा, मिल या न मिला। पैसा गाँठ का काम देता है। के कमरे जाना कि उनका पैसा बाजार में बाकी है; लेकिन बाकी का पैसा बट्टे खाते देट गई है ही समझना चाहिये। मिल गया तो अपना, नहीं तो मन समझाते रहो। या। मुदली जैसे शहर में धर्मशाला में रहकर कितने दिन गुजर होगी। पता नहीं कुछ पूछेया सोचा है उन्होंने ! मुझे तो चारों तरफ अन्धेरा ही अन्धेरा दिखाई देता है। माँ ! काश ! वे अपने कार्य में पूर्णतया सफल हों और हमारी बिगड़ी बन जाय। ही रहते शारदा इस तरह विचारों के भँवर में बह रही थी। विनोद थोड़ा-सा तक जा चुक पीकर धर्मशाला के चौक में जाकर अन्य बच्चों के साथ खेलने लगा और जा रही बच्चियों के आवागमन, चख-चख आदि कोलाहल से सबेरे का समय मुखरित हो हा था।

रा पति
या। इ

: ३५ :

सबेरे जब चन्द्रभान बाबू की आँख खुली तो उन्होंने सुभद्रा की आवाज सुनी। उसके आते ही उसके उतरे हुए मुख को देखकर उन्होंने प्रश्न कर दिया—“अखिल अभी उठा या नहीं ? तनिक जाकर देखो तो, वह क्या कर रित रहा है ?”

रूपये थे । वे उसने जब पति को दिये तो वह बोल उठा — “मेरा बहुत होगा । तभी वाकी है बाजार में । चलो, पहले कहीं रहने का ठिकाना करें । फिर कोई हिस्से में त दिन तक कुछ और न करके, तगादा ही करता रहूँगा । ढाई-तीन सौ रुपये आज के जायेंगे तो महीने दो महीने के लिए हम लोग निश्चिन्त हो जायेंगे ।” शारदा सोचने को उसने अपने कन्धे से सम्हालकर, लगा लिया कि कहीं वह जग न जाय उसको चलाना प्रमोद शारदा की गोद में सो रहा था । आँसू पोंछती हुई वह पति से बया लाभ पीछे-पीछे चल दी । शय के पैसे व

अखिल जीने से नीचे उतर गया । लेकिन शारदा के पाँव सास के कमरे जाना कि उन ओर बढ़ गये । किवाड़ खुले थे । सुभद्रा उसको आते देख जल्दी से नेट गई ही समझन शारदा कमरे में प्रविष्ट हुई और सास के चरणों पर माथा टेक दिया । कुदली जैसे उठ बैठी । उसके पैर शारदा के आँसुओं से गीले हो गये थे । वह कुछ पूछने-सोचा है जा रही थी कि शारदा बहुत धीरे-धीरे कहने लगी — “जा रही हूँ माँ !” काग ! वे अपने के साथ वह घूमकर चल दी और सुभद्रा चौककर उसकी ओर देखती ही रहती शारदा नन्हा-सा शिशु प्रमोद उसकी गोद में था और वह जीने की चौखट तक जा चुक पीकर घ थी । सुभद्रा खोई-खोई सी उससे पूछते-पूछते रह गई कि वह कहाँ जा रही थी वियों के अ मगर तब तक वह उसकी दृष्टि से ओझल हो चुकी थी । हा था ।

शारदा के बाहर आते ही अखिल ने एक रिक्शा किया । पूरा पति उसमें बैठ गया और फिर सीताराम बाजार से रिक्शा फतेहपुरी आया । बाद वह कुतुब रोड की ओर बढ़ने लगा ।

: ३४ :

रास्ते में ही अखिल ने सोच लिया था कि अब उसे सीधे किसी धर्मशास्त्र जाकर शरण लेनी है । उसके बाद कोई दूसरा कार्यक्रम निर्धारित है ?”

कल कर बैठा । बाप को जवाब दिया, खूब जवान लड़ाई और रात को जब हम सब लोग सो गये तो चुपके से बाल-बच्चों को लेकर कहीं चला गया ।

रंजना एकदम सोते से चौंक पड़ी । उसकी आँखें खुली कि खुली रह गई और मुँह भौंचक्केपन में आ फैल कर रह गया । सुभद्रा अब रोने का अभिनय कर रही थी कि सहसा रंजना की आँखों से बरसात होने लगी । वह रोते-रोते हँवे गले से बोली—“पता नहीं किस कुघड़ी दीदी ने जन्म लिया था जो दुर्भाग्य उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गया है । जीजा जी बड़े स्वाभिमानी हैं, वे विवश करके दीदी को अपने साथ ले गये होंगे, वरना वे कभी न जातीं ।”

अब वहाँ रानी आ गई थी, रोनी-सी सूरत बनाये और गीली पलकें लिए । वह भी माँ और रजना के मध्य बैठ ओढ़नी से आँखें पूछने लगी । फिर रंजना के आँसू पोंछती हुई आत्मीयता भरी वाणी में बोली—“यह समय रोने और दुःख करने का नहीं है रंजना ! मेरा मन कहता है कि भइया शहर में ही है । वे कहीं बाहर नहीं जायेंगे । तलाश करनी चाहिए । वे जरूर मिल जायेंगे ।”

यद्यपि सुभद्रा का अन्तर्मन रानी की योजना के विपक्ष में था । फिर भी लोकाचार ने उसके मुँह से यह कहला दिया—“हाँ, यह तो करना ही होगा । इसमें देर करना सबसे बड़ी भूल है ।”

लेकिन रंजना को ये सब बातें हल्की और फीकी लग रही थीं । उसका कयास था कि मन समझाने के लिए चाहे जो कुछ कह लिया जाय, मगर घर से ऊबकर भागा हुआ व्यक्ति गाँव के धूरे से भी चार कोस दूर जाकर ही साँस लेता है । जीजाजी कवि हैं, वे भावुक हैं और भावुकता का बन्धन की डोरियों से घना बैर है । वे नगर में नहीं होंगे । फिर भी एक बार प्रयत्न कर लेने में हानि ही क्या ? चलो पहले माँ को बताऊँ, क्योंकि जब घर वाले सब दौड़-भाग में लगे हैं, तो पिता जी का भी सहयोग आवश्यक है ।

सवेरे की धूप आँगन की दीवारों पर उतर रही थी और चैंती बयार के छोटे-छोटे हल्के झोंके अन्दर आ फिर वापस लौट जाते थे । फूलमती आँगन में बैठी छाछ मथ रही थी । उसकी दृष्टि बार-बार दरवाजे की ओर उठ जाती कि रंजना के साथ शारदा आ रही होगी । रंजना के ब्याह की तैयारियाँ चल रहीं थीं, उसी के लिये सलाह-मशविरा करने के लिये उसने शारदा को घुला भेजा

यह सब कहने का मतलब चन्द्रभान बाबू का यह था कि कहीं नाराज भरा हुआ अखिल घर से चला तो नहीं गया है । उन्होंने बात घुमाकर पूछी और सुभद्रा स्थिति को स्पष्ट करती हुई कहने लगी—“मेरी जब आँखें तो वहाँ जाकर देखा कमरा खाली पड़ा था । अखिल अपने साथ वृद्ध वच्चों को भी ले गया है । न जाने कहाँ गया होगा ?” कहते-कहते उसका भर आया और वह रोने-रोने को हो गई ।

“अँय, वह चला गया, कहाँ, किस समय ? वह चला गया और किसी ने जाना भी नहीं !” यह कहते-कहते चन्द्रभान उठकर खड़े हो गये निखिल को पुकारने लगे ।

निखिल पास आगया तो चन्द्रभान घबड़ाहट के स्वर में कहने लगे “देखो निखिल, अखिल अपनी ससुराल तो नहीं गया है । मैं जानता था कि चला जायेगा ।”

और जब निखिल नीचे जाने लगा तो चन्द्रभान सुभद्रा से कहने लगे “तुम भी नहीं जान पाईं बड़ा गजब हुआ ! मुझे विश्वास नहीं होता है कि वहाँ जायेगा !”

अभी वे इतना ही कह पाये थे कि सामने रंजना आती दीख पड़ी । बोले—“ठहरो निखिल !” सुभद्रा पहले तो रंजना से पूछना चाहती थी अखिल सपरिवार क्या तुम्हारे घर गया है; लेकिन कुछ सोचकर टाल गई चुप रही । ऐसे ही चन्द्रभान बाबू भी उस अवसर की प्रतीक्षा करने लगे रंजना स्वयं ही रहस्योद्घाटन करेगी ।

रंजना पहले सुभद्रा के पास आई । फिर धीरे-धीरे शारदा के कमरे ओर जाने लगी ।

तब सुभद्रा ने उसे टोक दिया—“यहाँ आओ रंजना, वहाँ वहाँ नहीं “कहाँ गई ?”

रंजना के इस प्रश्न पर सुभद्रा उसको अपने साथ लिवा गई और चन्द्र बाबू भी इस तथ्य पर पहुँच गये कि अखिल वहाँ नहीं गया है ।

कमरे में पहुँच सुभद्रा ने रंजना को बताया कि कल घर में मामूली सी सुर्ती हो गई । दोप अखिल का ही था, जो काम उसने कभी नहीं किया था

धा इसलिये वह माँ से पूछ रंजना के साथ चल दी ।

×

×

×

घर में फूलमती के मन में चींटियाँ रेंग रही थीं कि पता नहीं क्या बदा है मेरी शारदा की तकदीर में । जब से व्याह हुआ एक दिन भी सुख की साँस नहीं ले पाई । भगवान् उस पर रुठा है, नहीं तो भला अखिल इस तरह का बयों निकलता ! वह बड़ा स्वाभिमानी है । अरे घर में नहीं पटती थी और जब यह नौबत आगई थी कि छोटे-छोटे बच्चों को लेकर बाहर निकलना पड़ा तो वह मेरे ही घर चला आता । लेकिन अखिल मान खोना कभी नहीं पसन्द करता, तभी नहीं आया । पता नहीं कहाँ होगा ? देखो, सब लोग पता करने गये हैं क्या होता है ?

दोपहर हो आई थी, लेकिन अभी तक न रंजना लौटी थी और न गया-प्रसाद । फूलमती ने रसोई की ओर रुख भी नहीं किया । वह चिन्ता-मग्न सोचती रही और समय चलता गया ।

: ३६ :

अखिल को अचानक ईश्वरीय देन मिल गई । उसका परिश्रम सफल हो गया और दोपहर होने के पहले ही वह लगभग चालीस रुपये प्राप्त कर शारदा के पास लौट आया । कई प्रकाशकों से मिल कर उसने यह रकम जुटा पाई थी । इसके अतिरिक्त डिजाइनों के नये आर्डर भी मिले थे और साथ ही भविष्य में अधिक से अधिक रुपया मिलने का आश्वासन !

धर्मशाला की छत पर रसोईघर में शारदा ने खाना बनाया था । अखिल ने भोजन किया और फिर यह कहकर बाहर चला गया कि मैं सोचता हूँ कि दुकान के लिये छोटी-मोटी जगह ढूँढने की अपेक्षा किसी घर में एक कमरा

था । आज साड़ियाँ, ब्लाउज और लहर पटोर आदि कपड़ा खरीदना था । गयाप्रसाद ने उसकी सूची फूलमती से माँगी थी तभी अपनी राय में शारदा को शामिल करने के लिए उसका घुलावा हुआ था । किन्तु डबडवाई आँखें किं-
रंजना माँ के पास आकर बैठ गई और गीले स्वर में धीरे-धीरे कहने लगी—
“माँ, अनर्थ हो गया ! जीजाजी रात को दीदी और बच्चों सहित कहीं चले गये ।”

“अँय, यह क्या कह रही हो तुम ? अखिल चला गया, क्यों ? किस-
लिये ? क्या घर में किसी से भगड़ा हुआ था ?” इतने प्रश्न एक साँस में पूछ-
मती कर गई और मथानी छोड़ मटकी पर दोनों हाथ टेक रंजना का मुँह
ताकने लगी ।

आँगन के लाल फर्श पर भूरी, काली और गोरी सम्मिलित रंगों की गोरों-
फुदक रही थीं । गोपेश जीन का गेंद दीवाल पर पटक-पटक कर खेल रहा था ।
रंजना ने जो कुछ सुभद्रा के मुँह से सुना था वह सब माँ को बता बैठी और
बहा रही थी । इतने में गयाप्रसाद यह जानने अन्दर चले आये कि रंजना अपने
साथ शारदा को क्यों नहीं लिवा लाई । आज कपड़ा खरीदना जरूरी है । लेकिन
दृश्य अपने आप ही उनको स्तम्भित कर उठा । वे रंजना और पत्नी की आँखों
में आँसू देख, अचरज में आ पहुँचने लगे—“तुम लोग रो क्यों रही हो ! क्या
बात हो गई ?” यह कहते-कहते वे दोनों के निकट आगये । तब फूलमती जोर-
जोर से सिसकने लगी और धीरे-धीरे सारी घटना सुना दी । गयाप्रसाद देर ल-
पत्नी और पुत्री से उस सम्बन्ध में बातें करते रहे । फिर चन्द्रभान बाबू के पास
जाकर कुछ पूछना व्यर्थ समझ वे अखिल की तलाश में घर से बाहर निकल पड़े ।

रंजना ने भी अपना कर्तव्य पथ निश्चित किया । वह रानी के पास
उससे कहने लगी—“चलो रानी, हम दोनों भी चलें । एक रिक्शा पकड़ लें
शहर की जितनी धर्मशालायें हैं उन सब में तलाश करना है और इसके अतिरिक्त
जीजाजी के निकट के मित्रों के यहाँ चलकर भी अपनी शंका का समाधान पाने
है । मैं सोचती हूँ कि हम दोनों मिल कर यह काम सहज ही कर लेंगी ।”

यद्यपि रानी केवल दुनियादारी से मतलब रखना चाहती थी, ये व्यर्थ
पचड़े उसे तनिक भी नहीं भाते थे । लेकिन यह समय कुछ भी बोलने का न

इधर गयाप्रसाद भी यथाशक्ति प्रयत्न कर विफल हो लौट आये थे और फूलमती से कह रहे थे—“अखिल सनकी आदमी है, वह शायद कहीं बाहर चला गया। जहाँ-जहाँ उसके मिलने की सम्भावना थी वहाँ मैं हो आया हूँ। इस पर भी यदि वह शहर में है तो दिल्ली जैसे बड़े शहर में पता करना बहुत कठिन है।”

फूलमती कुछ कहने जा रही थी कि वहाँ रंजना आ गई। उसका चेहरा उतरा हुआ था और वह माँ-बाप से कह रही थी—“इतना तो पता लगा माँ कि जीजाजी सबेरे तेलीवाड़े की एक धर्मशाला में जाकर ठहरे थे; लेकिन जिस समय मैं और रानी वहाँ पहुँची उसके ठीक एक घण्टे पहले वे कहीं जा चुके थे। अब उनका मिलना बहुत कठिन हो गया है, क्योंकि धर्मशाला छोड़ने का मतलब उला हुआ है कि वे दिल्ली के बाहर चले गये।”

फूलमती और गयाप्रसाद बुत बने खड़े थे और रंजना कुछ न कुछ बोले रही थी।

यहाँ-यहाँ जब रानी रंजना के साथ अपने घर पहुँची थी तो वहाँ पर भी रानी बोलने से पहले ही रंजना ने सब हाल चन्द्रभान बाबू को बताया था। दोनों रों में मातम सा छा गया था। साँभ आ रही थी और लगता था कि इस खेरे की गोद में ही कहीं अखिल छिप गया है जो प्रयत्न करने पर भी नहीं ढूँढ सकता।

: ३७ :

जीवन को जब मालूम हुआ कि अखिल नाराज होकर संपरिवार घर से चला गया है तो वह भी उसकी टोह में नगर की सड़कों पर भटकने लगा। वह सम्बन्ध में दिन में एक बार चन्द्रभान बाबू के घर में जाकर जरूर पूछ लेता

किराये पर ले लूँ । क्योंकि मैं अब उस घर में जाना नहीं चाहता । इष्ट-मित्र और घर वाले मेरा पता लगायेंगे । धर्मशाला से वे लोग मुझे जबरन लिवा जा सकते हैं ।

अखिल ने शारदा की राय लेने की आवश्यकता नहीं समझी । वह धर्मशाला से बाहर आ पहाड़ी धीरज की गलियों में खो गया । कई जगह पूछा और पूछते आगे बढ़ता गया । संयोग की बात, हाथीखाने की एक तंग गली में बुढ़िया के घर में नीचे के हिस्से में एक कमरा खाली था । किराया थोड़े रुपये मासिक ।

अखिल ने रुपये लाकर थोड़ी देर बाद ही बुढ़िया के हाथ पर रख दिए । फिर अन्दर जा कमरे में अपना ताला लगा दिया ।

तीसरा पहर होते-होते शारदा अपने नाउर-पाउर के साथ उस नये घर जाकर आबाद हो गई ।

×

×

×

निखिल लगभग अपने सभी परिचितों के यहाँ हो आया था, जहाँ-जहाँ उसके अनुपान से अखिल जाकर आश्रय ले सकता था । किन्तु सब जगह निखिल ही हाथ लगी । वह हार मानकर घर लौट आया ।

तीसरा पहर हो गया था । रानी और रंजना अभी नहीं लौटी थीं । चन्द्रभान बाबू परेशान से अपने कमरे में टहल रहे थे । आज वे दफ्तर गये, केवल थोड़ी देर के लिये बाहर गये थे । फिर यह सोचकर लौट आये कि मुँह से जाकर अपने मित्रों से पूछूँ कि यहाँ अखिल तो नहीं आया था सुना है गयाप्रसाद भी उसकी तलाश में गये हैं । निखिल, रानी और रंजना पता करने निकले हैं । इन सबको आ लेने दो । फिर सोचूँगा कि मुझे करना है ।

अब निखिल आगया था और बाप के सामने असमर्थता प्रकट कर रहा था—“मैंने सब जगह देख लिया है पिता जी, भइया अपने किसी दोस्त और व्यवहारी के यहाँ नहीं गये हैं । शायद वे कहीं शहर से बाहर चले गये हों ।

चन्द्रभान चौंकर रह गये । वे निखिल के मुँह की ओर देखने लगे । ऐसे में ही उनके मुँह से एक लम्बी गर्म साँस निकल पड़ी ।

निखिल जीवन के सामने खड़ा मुस्करा रहा था ।
 रंजना चली गई । वह निखिल के मन को दूने सन्देह से भर गई कि
 रंजना का झुकाव शायद पहले से ही जीवन की ओर था । समझ में नहीं आता
 कि वह कितनी विचित्र है !

जीवन की बात का संक्षिप्त उत्तर दे, थोड़ी-सी दुनियादारी कर, दूकान
 पहुँचने के लिए जल्दी का प्रदर्शन करता हुआ, निखिल आगे बढ़ने लगा ।

निखिल की दूकान दरियागंज में थी । और चावड़ी बाजार वहाँ से
 पर्याप्त व्यवधान पर था । नित्य वह रिक्शा आदि का सहारा ले लेता था ।
 दूसरे में लेकिन आज यह सब सोचने के लिए मौका ही नहीं मिला । वह चलता गया
 और सोचता गया । लोग सब कहते हैं कि नील-काँटे का प्यारा लुभावना फल
 जितना देखने में सुन्दर मालूम होता है उतना ही उसमें विष भरा रहता है ।
 वही विष-वृक्ष यह रंजना है । मीठा-मीठा बोलती है; उसके मन में हलाहल
 भरा हुआ है । अच्छा हुआ, उससे मेरा ब्याह नहीं हुआ । नहीं तो जिन्दगी
 भर का रोना हो जाता ।

इस तरह मन-ही-मन खीझता हुआ निखिल बढ़ा चला जा रहा था ।
 उसके सामने रंजना का चित्र नाच रहा था, जिसे वह फूटी आँखों नहीं
 देखना चाहता था ।

: ३८ :

जीवन रंजना को पाने की खुशी में ऐसा बेसुध था कि उसे लग रहा था रंजना
 उसकी पूर्व-जन्म की संगिनी है । इसीलिए पुनः मेरी छाया बनने जा रही है ।
 मातृचित में कितनी शिष्ट, कार्यों में कुशल और दक्षता में इतनी निपुण है कि
 जो एक गृहलक्ष्मी के लिए अत्यन्त आवश्यक है । सचमुच रंजना गुणों की खान

कि कुछ पता लगा अखिल का ? इसके बाद अपनी भी कह देता कि मेरी
का कोना-कोना छान डाला, लेकिन कोई नतीजा निकलता नहीं दिखाई दे

नवरात्र चल रहे थे । फूलमती नित्य देवी-पूजन को भीड़-भाड़ के बीच
नहीं जा पाती थी । अतः इस अवधि के लिये उसने रंजना को देवी पर
चढ़ाने का काम सौंप रखा था ।

प्रातः आठ बजे घर से निकलकर एक दिन रंजना देवी पूजन को जा
थी कि सहसा मार्ग में मिल गया जीवन । दोनों की आँखें चार हुईं और
उसके निकट पहुँच पहुँचने लगा—“रंजना ! अखिल का कुछ समाचार नि

रंजना के एक हाथ में पूजन-सामग्री से भरी थाल थी और दूसरे में
की छोटी गंगाजली । उसमें यमुना का जल भरा था जो उसके हाथ हिला
थोड़ा-सा छलककर फुटपाथ पर गिर पड़ा । वह उस ओर निहारती हुई
धीरे कहने लगी—“जाने वाले का पता देर में लगता है जीवन वाद और
जीजाजी तो स्वतन्त्र विचारों के आदमी हैं । जहाँ मौज आगई होगी
होंगे । एक सप्ताह से ऊपर हो गया और कुछ सूराख न लगा तो फिर
समझ लेना चाहिए कि अब वे ढूँढने से तो मिलने से रहे, जब भी आयेंगे
मर्जी से !”

सड़क पर रेल-पेल थी । फुटपाथ पर पैदल चलने वालों की जगह
वालों और छोटे-मोटे फेरी में माल बेचने वाले लोगों ने घेर रखी थी ।
एक गली के मोड़ पर पीछे की ओर दबी खड़ी थी । मस्त लहरियों में
रहा पवन धीरे-धीरे उसके धानी आँचल को हिला रहा था । जीवन ने
कि रंजना की रुराशि निखरी पड़ रही थी । सुन्दरता की साक्षात् प्रतीति
वह । वह कई क्षण तक मौन खड़ा रहा और जब रंजना जाने का आग्रह
कर आगे बढ़ी तो बोल उठा—“कोशिश करना हम लोगों का काम है
मेरा विश्वास है कि अखिल भाई जरूर मिलेंगे ।”

“हाँ देखो, अभी तो कुछ भी नहीं कहा जा सकता ।” कहने के
रंजना का पैर आगे बढ़ा, तभी उसने अपने पीछे जीवन का यह स्वर
“आओ निखिल, क्या दूकान जा रहे हो ?”

रंजना ने पीछे मुड़कर देखा, खाकी फुल पैंट और नीली बुनाई

हूँ, समझ में नहीं आता। मैं तो यह जानती हूँ कि नारी केवल एक बार प्यार करती है और वही प्यार अन्त तक उसके सुहाग की लाज बना रहता है। सो मैंने निखिल को अपना प्यार अर्पण कर दिया है। अब जीवन के सामने क्या खाली हाथों जाकर खड़ी होऊँगी! मुझे सन्देह है कि यदि जीवन के साथ मैं वैध गई तो शायद हम दोनों ही जिन्दगी में सुखी न रह सकेंगे।

रंजना के चेहरे की प्रसन्नता पता नहीं कहाँ विलीन हो गई थी! वह अक्सर खोई-खोई सी माँ को दृष्टिगोचर हो जाती तो वह पूछ बैठती—“आजकल तुम बहुत उदास रहती हो रंजना, क्या बात है?”

तब रंजना इस बहाने का आश्रय ले लेती कि क्या करूँ माँ, जब से दीदी गई है मुझे कुछ अच्छा ही नहीं लगता।

इसके बाद प्रसंग बदल जाता। अखिल और शारदा की बात चलने लगती। ऐसी स्थिति थी रंजना की! वह मन ही मन उधेड़बुन में लगी रहती और निष्कर्ष कुछ भी नहीं निकल पाता था।

: ३६ :

वैशाख आरम्भ हो गया था। परीक्षाएँ समाप्त हो चुकी थीं। कालेज बंद होने में अभी कुछ दिन थे। लेकिन रानी अकारण वहाँ जाकर क्या करती, इस-लिये दिन भर घर में ही रहती थी। जीवन का साथ छूट चुका था। वह उस पर खार खाये बैठी थी। यदि उसे कहीं पर भी जीवन की कोई त्रुटि मिल जाती तो वह उसी क्षण सारे नगर में ढिंढोरा पीट देती। कभी-कभी आवेश में आ वह सोचने लगती कि जीवन को मैं एक चुटकी में ही मसल डालूँ यदि मेरा वश चले। किन्तु तत्क्षण ही वह चौंक जाती, नहीं मेरी चोटी उसके पाँव तले दबी है। वर्षगांठ में, उपहार में दी जाने वाली घड़ी की बात, वह किसी

है। मैंने अतीत में कभी यह सपना भी नहीं देखा था कि वह मेरे साथ के पुनीत बंधन में बँधेगी। यह सब ईश्वर की मर्जी है और मेरा सोना

जीवन कभी-कभी यह भी सोचने लगता कि जब मैं बी० ए० का था तब पिताजी मेरा ब्याह करने के लिए बहुत उत्सुक थे। लेकिन मैं जिद पर अड़ा हुआ था कि अभी ब्याह मुझे बाधा सदृश प्रतीत हो रहा है। जब मन स्वीकार करेगा तो इन्कार नहीं कर पाऊँगा। वह समय आ गया मेरा मन रंजना की ओर अनायास ही आकर्षित होता जा रहा है—यह मन स्वीकृति है और शायद मेरे इतने दिनों की तपस्या का फल ! रंजना महीने मेरी पत्नी बनकर घर में आजायेगी। मैं...

सहसा जीवन की विचारधारा रुक गई और वह सोचने लगा कि दो हफ्ते हो गये और अखिल का कहीं पता नहीं लगा। कहीं ऐसा न हो कि इन सब भ्रमों के कारण ब्याह की तिथि आगे बढ़ा दी जाय।

यह बात मन में आते समय जीवन के मुँह से एक दीर्घ उच्छ्वास निपड़ी और उसका अन्तर्मान बोल उठा—‘जैसी ईश्वर की मर्जी होगी होगी।’

रंजना की उलझन, अग्नान्ति और चिंता दिन पर दिन वृद्धि में हो रही थी कि चैत बीतने पर है। वैशाख में अक्षय तृतीया की लगन है, दीदी और जीजाजी के एकाएक चले जाने से ब्याह की तैयारी में शिथिल गई है। लेकिन ब्याह तो होगा ही और वह भी जीवन के साथ ! न जाने मन जीवन की ओर से पीछे क्यों भागता है ? ऐसा लगता है कि अन्त में बैठा कोई कह रहा है कि रंजना तुम जीवन की अमानत नहीं बल्कि नि की भावी पत्नी हो। किन्तु यह सम्भव कैसे हो सकता है ! निखिल तन है। उसे मुझ पर सन्देह है फिर गाड़ी मञ्जिल पर पहुँच जायेगी यह कि नहीं होता। मानलो एक बार कोशिश करके मैं निखिल के मन का मेल तो भी दीवाल सामने है। माँ और पिताजी वचन-बद्ध हो चुके हैं। उनके का मोल महंगा है या निखिल से प्रीति ! मैंने निखिल को मन से कभी भुलाया। उसको अपना ही समझती आई और अब भी भूल नहीं पाई हूँ। करूँ, एक तरफ प्यार सामने है और दूसरी ओर कर्तव्य ! मैं किसका ग

पाठिन कुमारी खड़ी मुस्करा रही थी। और उसके साथ था उसी की मुखाकृति बाला एक गोरा लम्बा, छरहरा युवक जिसको देखकर रानी पहचान नहीं पाई। वह कुमारी को बैठने का संकेत कर उससे पूछने लगी—“आप...?”

अभी रानी के मुँह से पहला ही शब्द निकला था कि कुमारी उसका आशय समझ तत्क्षण ही कहने लगी—“ये मेरे भाई साहब हैं। नाम है, अभय कुमार।”

फिर कुमारी भाई की ओर उन्मुख हुई और कहने लगी—“यह हैं मेरी क्लास-फेलो रानी देवी! आप जानते तो होंगे कवि अखिल को, ये उन्हीं की छोटी बहन हैं।”

कुमारी के इस परिचय-सम्पादन पर अभय और रानी दोनों मुस्करा उठे और शिष्टाचारवश दोनों के हाथ बँधकर ऊपर उठे और फिर यथास्थान आगये।

अब रानी को जाने की जल्दी हो रही थी। माँ का डर था और वह भय भी सामने था कि पिताजी भी घर आगये होंगे। रात हो गई है, मुझे अब घर चलना चाहिये। लेकिन न जाने कौन-सी ऐसी शक्ति थी जो बरबस ही उसको अपनी ओर खींच रही थी। वह उठना चाहकर भी नहीं उठ पाती थी। बातों का बाहुल्य कुमारी के पास था और मुस्कान-कोप अभय में संग्रहीत था। और रानी थी ऐसी कि हाँ की जगह हाँ और न की जगह न कहती जा रही थी। किन्तु उसकी दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु था अभय का आकर्षक व्यक्तित्व, जो उसके भरे हुये ओजदार मुख पर निखर रहा था।

रानी जीवन को भूल गई, अपनी समस्यायें बिसरा दीं और वर्तमान में लय हो गई।

अभय और कुमारी को कोठी से निकले बहुत समय हो चुका था। माँ प्रतीक्षा कर रही होंगी, व्यालू तैयार होगा; अब हमें चलना चाहिये। इस तरह सोचता-विचारता अभय उठ खड़ा हुआ और कुमारी से कुछ कहे इसके पूर्व ही कुमारी उठ खड़ी हुई और रानी से कहने लगी—“अच्छा अब चलती हूँ, फिर कब दर्शन होंगे?”

उठते-उठते रानी बोल उठी—“कहीं लन्दन में रहती हूँ क्या, जो दर्शन का प्रश्न करती हो; कहो तो मैं रोज आऊँ! लेकिन तुम भी तो कभी-कभी हमारे

समय भी, मेरे अभिभावकों पर खोल सकता है । वस, यहीं पर मैं रुक हूँ । वरना अब तक उसको बहुत बड़ा पाठ पढ़ा चुकी होती ।

इस प्रकार वितृष्णा, उपेक्षा और आक्रोश से लबालब थी रानी । अशांत और उलझे हुये मन को बहलाने का साधन ढूँढ रही थी । विनोद वीथिकाएँ उसके सम्मुख अपने-अपने मार्ग स्पष्ट कर रही थीं, और वह अज्ञान जस में पड़ी चौराहे पर खड़ी थी । कहाँ आदि है और कहाँ अन्त ! कौन उद्देश्य है और क्या मुझे करना है ? वह चकरा रही थी । पिंजड़े के पत्थरों भाँति वह प्रायः घर में बन्द रहती थी इसलिये मन उचट गया और वास्तविक स्थिति से भिन्न कोई नई दुनिया में खो जाने की सोचने लगा ।

आखिर एक दिन रानी ने अपनी पुरानी युक्ति से काम लिया । माँ मञ्जु के घर का बहाना कर वह दिन ढले कनाँट प्लेस जा पहुँची । फिर कनाँट सर्किल के अन्दर जा, हरी-हरी दूब पर बैठ गई ।

साँझ आ रही थी । वातावरण मुखरित था । उसका सलोनापन मन्द कुक्षित वायु का समावेश ले धीरे-धीरे साँझ में समाता जा रहा था । नयी चमक रही थी रंग-विरंगे विद्युत् कुमकुमों से । कनाँट सर्किल के बाहर गोकार कारों की पंक्ति जुटी थी, कोई आ रही थी और कोई जा रही थी ।

रानी जब ऐसे शांत, सुखद वातावरण में पहुँची तो उसका चित्त स्थिर हुआ । वह सोचने लगी कि संसार में दुखियों को दुःख दिखाई देता है या सुखी-सम्पन्न जीवन दुःख की परिभाषा भी नहीं जानता । यहाँ कितनी चहल पहल है, आकाश हँस रहा है, धरती महक रही है और पवन बह रहा है वाह री शान्ति ! तू ही मनुष्य की शक्ति है, तू ही उसकी प्रेरणा और तू ही उसका सम्बल ! तुझको खोकर मनुष्य सुखी नहीं रह सकता । काश ! ईश्वरीय वरदान बनकर तू मुझमें समा जाती और मैं अतीत के चलचित्रों को बिल्कुल भूल जाती ।

रानी फौवारे के अत्यन्त निकट बैठी थी । उसके गोरे मुख पर श्वेत की दूधिया रोशनी पड़ रही थी, जिससे उसकी मुख-कान्ति दूनी बढ़ गई । विचारों में मग्न थी । सहसा किसी ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया । चौंकी और देखने लगी तो सामने श्वेत वायल की साड़ी में लिपटी उसकी

किन्तु मन नहीं लगा। उसने पढ़ना छोड़ दिया। कई फर्मों में बाप के शेयर थे, अधिकांश समय हिसाब-किताब देखने में लग जाता। वह अवकाश के समय होम्योपैथिक चिकित्सा की पुस्तकें पढ़ता रहता और इस प्रकार उसने कोठी के एक कमरे में आखिर एक दिन होम्योपैथिक धर्मार्थ चिकित्सालय खोल ही दिया। बहुत ही उदार तबियत पाई थी उसने। नित्य नई पुस्तकें पढ़ता और दवाइयों का भण्डार-सा भर रखा था।

माँ अपने पुत्र के दूध की भाँति सफेद चरित्र पर फूली न समाती थी और छोटी बहन कुमारी उस पर बलि-बलि जाती थी।

कुमारी सत्रह वर्ष की युवती थी, रानी की सहपाठिन और संगीत में अत्यधिक रुचि रखने वाली। वह नृत्य और संगीत में खो जाना चाहती थी। कालेज के अतिरिक्त घर पर नृत्य और संगीत के लिये कई मास्टर रखे गये; मगर उसकी हॉबी को कोई भी उचित मान-दण्डों में परख नहीं पाया। अतः खीझकर उसने अकेले ही अभ्यास करने की सोच ली। रानी जब उसको कनाट प्लेस में अचानक ही मिल गई तो सहसा उसका ध्यान अखिल की ओर खिंच गया। उसने कोठी में आकर माँ के सामने भाई से कहा—“भइया, कवि अखिल संगीत में बहुत निपुण हैं और रानी द्वारा उनकी यहाँ पर नियुक्ति भी सहज ही हो जायेगी। मेरे कालेज के नाट्य और संगीत के प्रोग्रामों में अक्सर उनका निर्देशन होता है। मैं उनसे संगीत सीखूँगी। आप उन्हें बुला लीजिए।”

उत्तर में अभय कुछ सोचता हुआ बोला—“हाँ, है तो ठीक, कल तुम रानी से मिल लेना। यदि अखिल वहाँ मिल जाय तो मौका देखकर बात कर लेना या यहाँ लिवा लाना।”

इस पर कुमारी तनिक रूठे स्वर में मुँह बनाकर कहने लगी—“न, भइया यह काम आपका है, मेरा नहीं। आपका ही जाना अच्छा रहेगा।”

पास बैठी हुई माँ रेगुका कुमारी की बात पर हँस पड़ी और अभय हँसता हुआ कहने लगा—“अच्छा, मैं ही मिल लूँगा अखिल से। लेकिन मुझे तो उसका घर भी नहीं मालूम है।”

“वह मैं बता दूँगी। हम दोनों साथ चलेंगे। क्यों माँ, है न ठीक?” कहकर कुमारी माँ के गले से लिपट गई और अभय वहाँ से जाता हुआ बोल

घर चक्कर लगा लिया करो ।”

तीनों बाहर सड़क पर आये । कार चल पड़ी और रानी भी एक पल पर आसीन हो गई । वह जब घर की चौखट पर पैर रख रही थी तो उसका हृदय धक्-धक् कर रहा था । अन्दर सुभद्रा बड़बड़ा रही थी—“यह बहुत ही निडर हो गई है । देखो तो, काफी दिन रहे मञ्जु के घर गईं अब तक नहीं आई । आने दो आज, अच्छी खबर लूँगी । उसने मुझे समझा रखा है ?”

आकाश में तारे काँप रहे थे और गोल-मटोल गोरा चन्द्रमा लरज रहा डोल रहा था । रानी को कुछ ऐसा ही लग रहा था कि आकाश हिल रहा है और धरती काँप रही है । वह किंकर्तव्यविमूढ़ावस्था में चौखट पर खड़ी थी और बाहर दरवाजे से आती हुई हवा उसका गुलाबी आँचल बार-बार छू देती थी ।

: ४० :

कुमारी थी, स्वर्गीय बैरिस्टर रामप्रताप मिश्र की दुलारी और लाडली बेटा ! परिवार में माँ थी, भाई अभय और वह । कोठी पहाड़गंज के निकट थी और वह पूरी की पूरी निज के प्रयोग में आती थी । किराये पर उठाने का प्रश्न इसलिए नहीं उठता था; क्योंकि बैरिस्टर साहब अपने पीछे बहुत जायदाद छोड़ गये थे जो मकानों के रूप में थी और जिसका किराया बहुत पैमाने पर आरहा था ।

अभय के लिए यद्यपि घर में कोई कमी नहीं थी । लेकिन उसकी प्रगति आगे बढ़ने की ओर थी, पीछे लौटने की नहीं । वह बाइस वर्ष का सुन्दर आदमी था । बी० एस०-सी० करने के बाद एम० बी० बी० एस० करना चाहता था ।

बीच में आकर मैं स्वयं पता करती रहूँगी ।”

बाहर अभय कार में बैठा कुमारी के आने की प्रतीक्षा कर रहा था कि उसके साथ अखिल भी होगा । लेकिन वह अकेली चली आ रही थी । उसके कई कदम पीछे थी रानी जो तृपित नेत्रों से अभय की ओर निहार रही थी ।

अभय ने रानी के नमस्ते का उत्तर दिया । फिर स्टीयरिंग ह्वील पर दोनों हाथ टेक कुमारी से अखिल के विषय में पूछने लगा । कुमारी ने जो कुछ सुभद्रा के मुख से सुना था वह बता दिया ।

कार चल पड़ी । और रानी की दृष्टि तब तक उसे निहारती रही जब तक वह दृष्टि से ओझल नहीं हो गई ।

: ४१ :

आकर्षण की डोर ऐसी होती है कि मनुष्य अपने आप उसमें बँध उसकी ओर खिंचता चला जाता है । प्रौढ़ मन अपने पर नियन्त्रण रखने की क्षमता रखता है । लेकिन चंचल युवा मन किसी भी प्रतिबन्ध में बँधना नहीं चाहता । येन-केन-प्रकारेण वह अपनी मंजिल पर पहुँचकर ही रहता है । ऐसे ही रानी का स्वाभाविक आकर्षण अभय की ओर बढ़ रहा था । वह उससे दो बातें करना चाहती थी । लेकिन घर से नहीं निकल पाती थी । कुमारी के चले जाने के बाद वह सोचने लगी कि माँ ने कुमारी के सामने घर की लाज रखने के लिए सफेद झूठ बोला है, यह उचित नहीं । मैं इसी बहाने अभय से मिलूँगी और उसके सामने सारी स्थिति खोलकर रख दूँगी ।

रानी का मन छटपटा रहा था । वह अभय के घर जाना चाहती थी । लेकिन कोई बहाना चलता दिखाई नहीं देता था । बहुत कुछ सोचने के बाद

उठा—“बहुत ढीठ हो गई है कुमारी, माँ को बहुत तंग करती है।”

×

×

×

दूसरे दिन प्रातः ही दोनों भाई-बहन कार पर बैठ चन्द्रभान बाबू के साथ ग्राम पर पहुँच गये। कुमारी अन्दर गई और अभय वहीं मोटर में बैठा रहा।

रानी उदास-उदास बैठी थी। कुमारी को क्या पता कि कल रात सुभद्रा ने उस पर कितना क्रोध किया था। उसने आते ही रानी को गमने देख, मुस्कान बिखेर दी और पूछने लगी—“कैसी सुस्त बैठी हो रानी ! तुमने कौन-सी शिकायत की थी और मैं आज तुम्हारे घर आ गई।”

रानी कुमारी को अभी कुछ उत्तर नहीं दे पाई थी कि उसकी दृष्टि साफ खड़ी माँ पर पड़ गई। तब वह कुछ चौंक-सी गई और कुमारी से कहने लगी—“आज सबेरे ही सबेरे कहाँ निकल पड़ी ?”

बात के साथ रानी ने मुस्काने की पूरी-पूरी कोशिश की थी; लेकिन सुखी हँसी सुभद्रा भाँप गई और मन-ही-मन समझ गई कि कल रानी मुझ-मञ्जु के घर जाने का बहाना करके कुमारी के घर गई थी। वह कुमारी की भली-भाँति पहचानती थी। क्योंकि कभी-कभी वह रानी के साथ घर आ जाती थी।

सुभद्रा चुपचाप खड़ी थी और कुमारी रानी के सम्मुख इजी चेयर पर बैठ कह रही थी—“एक काम था तुमसे। तुम्हारे भाई साहब कहाँ हैं ?”

रानी कुछ चौंकी और पूछने लगी—“कौन, निखिल भइया !”

“नहीं, मैं अखिल भाई साहब को पूछ रही हूँ !”

कुमारी के इस प्रश्न पर रानी जवाब देते-देते रह गई। और सुभद्रा उसके निकट आ व्यस्त स्वर में पूछने लगी—“अखिल से क्या काम है बेटा !”

“मैं उनसे संगीत सीखना चाहती हूँ ! कहाँ हैं ?”

कुमारी का संतव्य जान सुभद्रा एकाएक उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाई। वह कुछ सोचती-सोचती उत्तर देने लगी—“आजकल अखिल यहाँ नहीं हैं। एक रिश्तेदारी में गया है, देखो, कब लौटे ?”

सुभद्रा की युक्ति काम कर गई और कुमारी रानी से यह कहकर वहाँ से चल दी—“कोई बात नहीं, जब आ जायँ तब मुझे खबर कर देना; यों तो बीच-

मन्त्रा ने केशवों से शीशे का रँग-विरंगा पेपर वेट उछालते हुये उसने धीरे से पूछ दिया—
 "कैसे आई रानी ! कुमारी अन्दर है, बुला दूँ !"

रानी कुछ सितपिटा सी गई । एकाएक उसके मुँह से कोई जवाब नहीं
 आया । इतने में अभय ने सामने रखी घंटी दाब दी । वह टन्-टन् करके
 मेरी निकल आया । इतने में अभय ने सामने रखी घंटी दाब दी । वह टन्-टन् करके
 तो जल्द ही और एक बूढ़ा आदमी गाँठों तक ऊँची धोती और सफेद कमीज पहने हुए
 हो ! केशव के पास आकर खड़ा हो गया । उसको देखते ही रानी अपने को सम्हाल
 ले गई और जल्दी-जल्दी कहने लगी—"मुझे आप से कुछ व्यक्तिगत कार्य है ।"
 तब अभय ने अपने वृद्ध नौकर गंगा से जाने को कह दिया और रानी की
 ओर उन्मुख हो पूछने लगा—"हाँ, रानी, अब बताओ कि मैं तुम्हारी क्या सेवा
 कर सकता हूँ ?"

रानी के हाँठ मुस्कान से खिल रहे थे । वह उसके मुख पर दृष्टि टिका,
 बहुत ही मुलायम स्वर में कहने लगी—"माँ ने अखिल भइया के विषय में
 भी कुमारी को बताया है वह केवल लोक-लाज के लिये उन्होंने ऐसा किया
 है । भइया नाराज होकर, सपरिवार घर से कहीं चले गये हैं । बहुत पता
 लगाया गया लेकिन सब व्यर्थ रहा । उनका पता नहीं चला । अतः मैं यह
 बताने चली आई हूँ कि आप भ्रम में न रहें और कुमारी के लिए कोई दूसरा
 संगीत मास्टर रख लें ।"

अभय की दृष्टि में रानी का महत्व बढ़ गया । वह आत्मीयता-पूर्वक पूछने
 लगा—"क्या बात हुई, अखिल क्यों चले गये घर से ?"

उस पर रानी ने थोड़े ही में बहुत कह दिया । वह बोली—"घर में माँ और
 पिताजी से कुछ कहा-सुनी हो गई इसलिये वे बिना किसी को बताये ही चले
 गये । मेरे खयाल से वे कहीं शहर से बाहर चले गये हैं ।"

अभय ने कवि के प्रति अपनी समवेदना प्रकट की । वह रानी से कहने
 लगा—"तो यह बात है । अब आज मालूम हुआ है । मैं भी पता लगाने का
 प्रयत्न करूँगा ।"

रानी प्रसंग बदलना चाहती थी । अतः वह दूसरी बात करने लगी—"एक
 बात मानेंगे आप ? मैं..."

"क्या ?" अभय रानी की ओर ध्यानपूर्वक देखने लगा ।

आखिर उसने एक युक्ति निकाल ली । अपना नया बटुआ जिसको सुभद्रा ने नहीं देखा था, ट्रंक से निकालकर गोल छोटी मेज पर रख दिया । उसमें कुछ नोट और रेजगारी डाल दी । फिर माँ के पास जा बटुआ दिखाई हुई बोली—“अरे माँ, कुमारी अपना बटुआ तो यहीं भूल गई । मेरी अभी पड़ी । देर हो गई, अगर रास्ते में उसे ध्यान आगया होता तो जरूर खोजी और पा जाती ! कहीं ऐसा तो नहीं कि वह उसकी तलाश में हैरान हो रही हो ! करूँ ? मैं जाकर दे आऊँ !”

सुभद्रा ने रानी के मुँह की ओर देखा । उस पर अकुलाहट थी । तब उसी सीधे स्वभाव अपना मत प्रकट करते हुये बोल उठी—“हाँ, हाँ, बेटी, जाओ जल्द से दे आओ । बेचारी हैरान हो रही होगी ।”

इस पर रानी जब वहाँ से जाने लगी तो सुभद्रा ने उसे फिर टोक दिया—“और हाँ, देखो जल्दी ही लौट आना, कल की तरह मत करना कि मुझे कष्ट दिया कि मैं जा रही हूँ मञ्जु के घर और पहुँच गई कुमारी के पास ।”

“नहीं माँ, ऐसा कैसे होगा ?” कहकर मुस्कराती हुई रानी वहाँ चले चली ।

अभय अपने चिकित्सालय में बैठा होम्योपैथिक की एक अमेरिकन पुस्तक पढ़ रहा था । इस समय वहाँ पर एब्रहम सन्नाटा था । न तो कोई मरीज था, और न कोई नौकर । वह पढ़ने में इस प्रकार दत्त-चित्त था कि रानी पाकर खड़ी होगई और उसे बोध भी नहीं हुआ ।

रानी कई क्षण तक उसकी अध्ययनावस्था को निरखती रही । फिर धीरे-धीरे वीणाविनिन्दित स्वर में बोली—“क्या पढ़ रहे हैं अभय बाबू आप...?”

रानी की बात वहीं पर रह गई और अभय चौंककर सामने देखता हुआ बोल उठा—“अरे रानी तुम ! आओ बैठो ।”

रानी निस्संकोच अभय के पास कोच पर बैठ गई । वह मूविंग चेयर पर बैठा था और किताब अब भी हाथ से नहीं छूटी थी । सीलिंग फैन अपनी-मन्द रफ्तार में नाच रहा था जिससे अभय के लम्बे पीछे लौटे हुये बाल धीरे-धीरे हिल रहे थे ।

अब अभय ने पुस्तक बन्द कर दी और मेज पर दोनों कुहनियाँ टेक दोनों

अभय के मन में निरन्तर अखिल के प्रति कुछ-न-कुछ विचार उठते ही रहते थे कि कहाँ धला गया है वह ! अगर वह होता तो कुमारी के लिए मैं उसे संगीत के लिये नियुक्त करके ही मानता ! पता नहीं कहाँ होगा ?

अखिल का यह हाल था कि वह दिन-रात जुटकर परिश्रम कर रहा था, जिससे उसकी गृहस्थी की गाड़ी धीरे-धीरे खिंचती चल रही थी ।

साँझ का समय था । अभय किसी कार्यवश काश्मीरी गेट गया था । लौटते समय उसकी कार नई सड़क से गुजर रही थी कि सहसा एक घुकाड़िपो में उसे अखिल बैठा दिखाई दिया । उसके हाथ में कुछ डिजाइनें थीं जो वह प्रकाशक को दिखला रहा था ।

कार रुक गई, अभय नीचे उतर पड़ा और अखिल के पास पहुँच नमस्कार था कि अखिल ने हाथ बढ़ाकर उसे धकका दिया और बोला — “अरे मिस्टर अखिल, आप यहाँ ?” इसके बाद वह चुप हो मेरे पास आया और मन-ही-मन कुछ सोचता हुआ फिर कहने लगा — “काम निपट” वह सब का लीजिये । मैं कार में आपकी प्रतीक्षा करूँगा । एक बहुत आवश्यक काम है ।

अखिल ठीक-ठीक अभय को पहचान नहीं सका । उसके साथ यह स्थिति थी कि उसको बहुत से लोग जानते थे — एक कवि और कलाकार के रूप में । लेकिन वह सम्पर्कियों के अतिरिक्त अन्य लोगों से परिचित नहीं था । उसने समझा कि ये भी कोई प्रकाशक होंगे या फिर कुछ और मतलब होगा मुझसे इनका !

अखिल ने कहा — “अच्छा, मैं अभी आता हूँ ।”

प्रकाशक को डिजाइनें दे, उससे रुपया प्राप्त कर अखिल अभय के पास आ गया और अभय उससे कहने लगा — “अरे, आप तो बाहर खड़े हैं, अन्दर आ नहीं कि कुछ जाइये न !”

इस पर मुस्कराता हुआ अखिल टूटी चप्पल और साधारण श्वेत कुरता-धोती पहने हुए अभय के पास जा बैठा ।

कार धल पड़ी और अभय के शरीर में पड़ा हुआ बिन्नी की सिल्क का

और रानी कहने लगी—“इसलिए टोक दिया कि कहीं आप अन्तर ही कुमारी को यह न बताने लगें कि अखिल भइया रुठकर घर से चले हैं । क्योंकि जब माँ के कानों तक यह बात पहुँचेगी तो किस हद तक देखेंगी मुझे !”

अभय हँस पड़ा और मृदु स्वर में कहने लगा—“अच्छा किया बता तुमने, वैसे भी यह भला किसी से कहने की बात थी ।”

देर तक दोनों में बातें होती रहीं । रानी को यह भय था कि कहीं यहाँ न आ पहुँचे, इसलिये वह बाहर ही बाहर उससे मिले बिना घर आई ।

×

×

×

अभय के मन में रानी एक पहेली बनकर घूमने लगी । वह सोचने कि क्या कारण है जो रानी अपनी सहेली कुमारी को यह भेद न बताकर बताने आई । कल रात में उससे प्रथम परिचय हुआ । कुछ थोड़ी-सी बात-चात भी हुई; लेकिन आज उसकी गतिविधि से ऐसा लगता था कि वह नाम वाले पदार्थ को उसने अपने से एकदम पृथक् कर दिया है । मेरे पास मुझसे ही बातें कीं और कुमारी से मिले बिना ही चली गई । यह सब मुझे निष्कर्ष कुछ और ही निकलता दिखाई दे रहा है । शायद रानी आकर्षण मेरी ओर बढ़ रहा है । इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता कि कितना बड़ा महत्व दिया है उसने मुझ को जो अपने घर का राज बताने में भी नहीं हिचकी !

इसके बाद अभय के मस्तिष्क में रानी के ही प्रति विचार घूमते रात को जब वह सो गया तो स्वप्न में उसने देखा कि रानी उसके डिस्पेंसरी में बैठी है । वह कह रही है ‘एक बात मानेंगे आप ?’

अभय स्वप्न में ही हँस पड़ा और कहने लगा—‘कैसी बातें करती रानी ! जब तुम मुझ पर विश्वास करती हो, तो मैं ऐसा हेय नहीं कि कोमल विश्वास को झुठला दूँ ।’

स्वप्न चलता रहा । रात बीतती रही और प्रातः जब अभय की खुली तो वह बहुत प्रसन्न था ।

और अलखलता गया और कुमारी की श्रद्धा शिल्पी के प्रति अटूट होती गई।

एक दिन अवसर पाकर अभय ने कुमारी के कान में यह बात डाल दी कि वह अभी रानी को यह न बताये कि अखिल उसे नृत्य और संगीत सिखाने आता है। इस पर कुमारी के मन में जब सन्देह के कुछ प्रश्न उठे तो उसने उनके समाधान में वह कह दिया कि अखिल से मेरी व्यक्तिगत बातें हुई हैं। घर में माँ-बाप से कहा-सुनी हो जाने के कारण उसने घर छोड़ दिया है और अपनी गृहस्थी के हो सककर अलग रहता है।

तब कुमारी भी समझ गई कि उस दिन रानी की माँ ने शायद अपनी उसे वास्तविकता रखने के लिए ही उससे ऐसा कह दिया था कि अखिल किसी रिश्तेदारी दूर भाग गया है।

बात बन गई और प्रगति के पहिये अपने पथ पर आगे बढ़ने लगे।

×

×

×

अखिल समझता था कि अभय उसके व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध में सर्वथा अनभिज्ञ है। लेकिन अभय अभी उससे कुछ भी नहीं पूछना चाहता था। उसे मय था कि कहीं ऐसा न हो जो अखिल कुमारी को संगीत सिखलाना बंद कर देने लगे। जिस तरह वह घर वालों के लिए गुम हो गया है, वही परिस्थिति मेरे मन में भी उत्पन्न हो सकती है। जल्दी क्या है, समय आने पर एक दिन मैं सपरिवार नहीं, मैं आपको अपनी कोठी में ले आऊँगा, तब शायद मेरी श्रद्धा के सम्मुख वह इन्कार नहीं कर सकेगा। यही कारण था कि वह रानी पर अभी इस भेद को प्रकट नहीं करने देना चाहता था।

दो दिन बाद उसके पास रानी आई। उसकी कुमारी से बातें हुईं। वह देर तक कोठी में रही फिर तीनों साथ-साथ घूमने गये। लेकिन रानी को तनिक भी अवसर नहीं मिला जो वह अभय के सामने अपने उद्गार निकालकर रख पाती। वह घर आकर सोचने लगी कि मन कहाँ जाकर अटक है, मंजिल सातवें आसमान पर है और पथ पर चलना तो दूर रहा पैर ही नहीं सीधे पड़ते हैं। अभय के साथ मैं इतनी देर तक रही; मगर कुमारी बाधक थी। उससे जी भर कर बातें नहीं कर पाई। काश ! मेरी कामना पूर्ण हो और एक दिन माँ-बाप की सन्मति उत्तमोत्तम भर के लिए मेरी बना दे।

कुरता हवा में फहराने लगा । होज काजी तक अखिल चुप रहा और मोन रहा । फिर सहसा अखिल पूछ बैठा—“कहाँ चल रहे हैं आप ? मेरी क्या सेवा है ? यह तो बताया ही नहीं ।”

उत्तर में अभय हँस पड़ा और बोला—“पहाड़गंज में मेरी कोठी है, वहाँ रहता हूँ । मेरी बहन है कुमारी, वह आपसे संगीत सीखना चाहती है । मुश्किल से ढूँढ़ पाया है आपको ।”

अखिल यह सुनकर कुछ नहीं बोला । वह सोचने लगा कि हो सके अलग अभय मेरी तलाश में पता लगाता हुआ मेरे घर पहुँचा हो और घर पर नहीं उसको क्या जवाब दिया गया होगा । ऐसा न हो कि वहाँ उसे वास्तविकता का बोध हो और वह उन लोगों को मेरा पता बता दे जिनसे मैं दूर भाग रहा हूँ । एक समय होता है कि जब आदमी कहता है कि घर घर है और बाहर बात व लेकिन मेरे लिए घर एक मुसीबत है और आत्मीय-वर्ग उलझन की करता है ।

जब अभय की बात पर अखिल ने कुछ भी जवाब नहीं दिया तो वह कहने लगा—“आप कुछ बोले नहीं, क्या……?”

अखिल की विचार-शृङ्खला टूट गई और वह संयत होकर कहने लगा—“बोलना क्या है, मैं तो जनता का सेवक हूँ । आप कुछ और समझेंगे क्या ?”

अभय की हँसी छूट गई । वह हँसते-हँसते बोला—“नहीं, नहीं, मैं कह रहा हूँ कि आपका मोन कहीं अस्वीकृति का सूचक तो नहीं है, तभी……”

अभय की बात पूरी होने के पहले ही अखिल बोल उठा—“नहीं, नहीं सोचना चाहिए आपको ।”

दोनों में रास्ते भर बातचीत का सिलसिला खूब जमा रहा और जब कोठी के पोर्टिको में आकर खड़ी हुई तो रात अपने पूर्ण निखार पर चुकी थी ।

×

×

×

कुमारी अपनी इच्छा पूरी होते देख बहुत प्रसन्न थी । वह अखिल से श्रद्धा करने लगी । वेतन तय हो गया पचास रुपया मासिक । अखिल को परम सन्तोष हुआ और वह उसी रात से कुमारी को संगीत सिखाने लगा ।

मेरे पैरों पर शनिश्चर नहीं है जो भागी-भागी फिर ! चली जाना कभी निखिल के साथ, मैं कह दूँगी ।” बात समाप्त करते-करते सुभद्रा को हँसी आ गई जिससे रानी की हिम्मत बढ़ गई और वह कुशलतापूर्वक अपनी हठ पकड़ कहने लग गई—“कल मैं जब जमुना के यहाँ गई थी तो वह कह रही थी कि आज उसके घर के सब लोग लक्ष्मीनारायण का मन्दिर देखने जायेंगे । मुझ से भी आग्रह किया था और मैं ‘हाँ’ कह आई थी, तभी तो तुमसे कह रही हूँ ।” सुभद्रा तब डाँट वताती हुई बोली—“तू अपने आप ही जब हाँ कर आई है तो फिर मुझसे क्या पूछती है ? यह आदत तुम्हारी अच्छी नहीं है रानी ! जाओ, आज चली जाओ । लेकिन आगे ध्यान रखना ।”

वस फिर क्या था, पर खुल गये पक्षी उड़ गया और अपने बसेरे पर पहुँच । बिना उसने सन्तोष की साँस ली ।

वैशाख की चटक धूप वातायन से कमरे में प्रविष्ट हो रही थी । अभय पुस्तक में खो रहा था और रानी उसके सामने खड़ी मुस्कराती हुई कह रही थी—“अभय बाबू ! कमाल करते हैं, कितना पढ़ते हैं आप !”

अभय का ध्यान सहसा रानी की ओर आकृष्ट हो गया । वह उसको कुछ भी जवाब न दे, केवल मुस्कराता हुआ उसकी ओर एकटक देखता रहा । रानी उसके निकट कुर्सी खींचकर बैठ गई और कहने लगी—“कहिए, कोई संगीत मास्टर अभी मिला या नहीं ? मेरी राय में तो आप मोहन बंसल को रख लीजिये, वे सब भाँति अच्छे रहेंगे ।” “हाँ, कुछ-न-कुछ तो करना ही पड़ेगा ।” कहकर अभय ने प्रसंग को वहीं पर समाप्त कर देने का प्रयत्न किया; क्योंकि उसकी जिज्ञासा, उत्सुकता में बदल रही थी कि रानी आज क्या नया शूफा लाई है । जब भी आती है तो यही कहती रहती है कि अमुक काम था इसलिए चली आई ।

अभय ने धीरे से पूछा—“बहुत ख्याल रखती हो रानी तुम कुमारी का । पहले मैं तुमको अपनी कोठी पर कभी नहीं देखता था । मालूम होता है तुम्हारी ओर उसकी नई-नई प्रीति हुई है !”

रानी शमझ गई कि यह उसकी परीक्षा का समय है । उसे भी ऐसा गोल जवाब देना चाहिए जिससे पल्ला हल्का न पड़े । वह कुछ गम्भीर हो गई और

रानी अब दिन-रात अभय के प्रति ही सोचा करती थी। जीवन का आते ही उसका मन ऐसे बिचक जाता था जैसे बिच्छू का डंक ! वह आर और अग्रसर हो रही थी और घर में इस भेद को कोई नहीं जानता था।

: ४३ :

रानी का स्वभाव बात-बात पर झूठ बोलने का हो गया था। विना के बनाये उसका कोई काम नहीं चलता था। बाहर वह झूठ का सहारा न ले; लेकिन घर में माँ से नित्य नये प्रपंच करती रहती थी। वह रात से अभय के पास से आई थी, उसका मन घर में नहीं लग रहा था। कोई बहाना करके वह उस तक पहुँचना चाहती थी और बहाना खोजने के उसे हैरान नहीं होना पड़ा। वह प्रातः बहुत जल्दी उठी और आगे-आगे कर घर का काम करने लगी। जल्दी से उसने रसोई तैयार कर दी। बाई को खिलाकर दूकान तथा दफ्तर भेज दिया। फिर माँ के साथ बैठ भोजन करने लगी।

सुभद्रा पुत्री पर आज बहुत प्रसन्न थी। वह आज सबेरे से ही काम में गड़ाये थी। रानी ने माँ की इस स्थिति को समझ लिया। भोजन करते-करते कहने लगी—“छुट्टियाँ क्या हुई, घर में बैठे-बैठे जी ऊब जाता है। किसी सहेली के यहाँ अगर चली जाऊँ तो तुम बिगड़ने लगती हो ! आज मेरा बिड़ला मन्दिर जाने को है, क्या चलोगी माँ ?”

माँ से यह प्रश्न रानी ने केवल इसलिये किया था, क्योंकि वह जानती कि माँ घूमना-फिरना बिल्कुल पसंद नहीं करती हैं। वे बिड़ला मन्दिर कभी नहीं जायेंगी।

सुभद्रा कृत्रिम क्रोध प्रदर्शित करती हुई बोल उठी—“तू तो पूरी पु

सबरे का सुहावना समय मुखरित हो रहा था । कमरा एअर-कंडीशन्ड था । अतः इस समय ऐसा लग रहा था कि गर्मी का कहीं नाम नहीं है । अखिल के काले झुंधराले बाल उड़ रहे थे और कुमारी की काली चुन्नी फहर-फहर कर रह जाती थी ।

थोड़ी देर बाद गीत समाप्त हुआ । कुमारी माँ के पास आकर बैठ गई और कवि कहने लगा—“बस हो गया अभ्यास ! चलो अभी दूसरी धुन तो बाकी ही है ।”

तब संकोचभरी हँसी हँसती हुई कुमारी धीरे पदक्षेप के साथ तानपूरे के निकट पहुँच गई । माँ हँस पड़ी और उसकी हँसी में सहयोग देता हुआ अभय बोल उठा—“अखिल बाबू, यह बहुत जल्दी थक जाती है । न जाने कैसा स्वभाव है कि काम पर बैठते ही उठने की पहले ही सोचने लगती है ।”

अखिल की हँसी मन्द थी । वह बिखरती रही और कुमारी तिनककर बोल उठी—“बस रहने दो भइया, आप तो मेरे हर काम में एक-न-एक नुक्स निकालते रहते हो !” बात समाप्त करते ही कुमारी ने तारों को छेड़ दिया; वे झनझना उठे ।

तब प्रसंग ने करवट बदली और माँ रेणुका जो अभय के मुँह से अखिल की कहानी सुन चुकी थी, अखिल की ओर उन्मुख हो शब्दों में स्नेह परोमती हुई बोली—“बेटा अखिल, एक बात कहूँ । वह तुम्हें माननी होगी । तुम....”

“क्या माँ ?”

अखिल जब चौंकता हुआ रेणुका देवी की ओर देख रहा था तो वे हँसती हुई कह रही थीं—“मुझे सब मालूम हो चुका है कि तुम किन परिस्थितियों से होकर गुजर रहे हो । मेरी बात मानो, कोठी में बहू और बच्चों को ले आओ । यह अधिक अच्छा रहेगा । मैं जानती हूँ कि तुम हिचकोगे । लेकिन मुझसे तुम्हें डराव नहीं रखना चाहिए । कुमारी और अभय दोनों का मन है और ये दोनों इस सम्बन्ध में तुमसे इसलिए नहीं कह सके कि शायद तुम उनकी बात नहीं मानते ! बोलो अखिल, क्या कहते हो ?”

रेणुका की बात समाप्त हो चुकी थी । अखिल गम्भीर हो गया था । कुमारी चिन्तित और अभय उद्विग्न-सा दृष्टिगोचर हो रहा था कि कवि क्या जवाब

कहने लगी—“यह मैं क्या बताऊँ अभय बाबू कि क्या नया है और क्या पुराना मैं अपने पर भरसक नियन्त्रण रखने का प्रयत्न करती हूँ, लेकिन पाँव ही इस ओर उठ आते हैं। आपको कुछ आपत्ति हो तो स्पष्ट कह दें, मुझे न होगा।” यह कहते-कहते रानी के चेहरे आर्द्र हो आए और स्वर कुछ थोड़ा काँप उठा।

अभय पर प्रभाव पड़ा। वह उसके मुख पर दृष्टि टिका नम्र स्वर में बोला—“कैसी बातें करती हो रानी ! तुम रोज आओ, आपत्ति की बातें न कहो। लेकिन मैं कैसे बताऊँ कि मुझे कितनी खुशी होती है !”

“सच !” रानी के मुख से एकाएक निकल पड़ा और उसके अधरों पर आँसू दौड़ गई।

तभी अभय भी मुस्करा उठा और मौके का जवाब देता हुआ बोला—“नहीं तो क्या झूठ ?”

दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े। तभी दरवाजे की चिक उठी और नौकर गंगा अन्दर आकर कहने लगा—“रसोई तैयार है वज्रुआ, मालकिन रुक रही हैं।”

अब रानी बाहर न जाकर उसके साथ ही अन्दर चली गई, क्योंकि मन्दिर विड़ला मन्दिर जाने के लिए कह आई थी। फिर इतनी जल्दी कैसे लौट आया समय तो काटना ही था।

: ४४ :

एक दिन जब अखिल कुमारी को तानपूरे का अभ्यास करा रहा था वहाँ अभय पहुँच गया, अपनी माँ के साथ। दोनों माँ-बेटे जाकर कालीन बैठ गये और कुमारी की उँगलियाँ तारों पर नाचती रहीं।

तो वह घर उसे स्वर्ग सा प्रतीत हुआ। वहाँ कुमारी उससे थोड़ी ही देर में ऐसी हिलमिल गई जैसे उसकी सगी छोटी बहन हो और रेणुका को वह माँ तुल्य समझने लगी थी, क्योंकि उसका स्नेह असीम था। लेकिन यह सब होने पर भी अखिल के अपने व्यक्तिगत कुछ ऐसे सिद्धान्त थे, जिनसे वह यहाँ पर भी पृथक् नहीं रह सका और शारदा को उसके संकेत पर चलना पड़ा।

कोठी में एक कमरा अखिल ने अपने लिये ले लिया। उसकी रसोई भी अलग ही बनने लगी। रेणुका ने इसमें दखल नहीं दिया। वह जानती थी कि उचित ढंग से हर काम लिया जा सकता है। इसके लिए जोर देना उचित नहीं, क्योंकि खान-पान में अपनी-अपनी मरजी अलग होती है।

अखिल जहाँ अपनी गृहस्थी की ओर से पूर्णतया निश्चिन्त था; वहाँ यह भय उसे दिन-रात लगा रहता था कि कहीं पिताजी और निखिल को पता चल गया तो वे लोग बहुत बुरा मानेंगे और जबर्दस्ती मुझे यहाँ से खींच ले जाएँगे। बाहरी प्रदर्शन उन लोगों को बहुत आता है। इसके साथ-ही-साथ वह यह भी सोचता था कि रंजना के व्याह का मुहूर्त अक्षय तृतीया है और उसके थोड़े ही दिन रह गये हैं। कहीं ऐसा न हो कि उन लोगों को भी पता चल जाय और विवश होकर मुझे जाना ही पड़े।

अखिल अर्हनिश ऐसे ही जटिल विचारों में उलझा रहता; लेकिन दिन रात में बदलते जा रहे थे और रातों के अन्धकार को नित्य सुहावना प्रभात आकर धो-धो देता था।

: ४५ :

जीवन अब पूर्णतया निश्चिन्त था रानी की ओर से। वह उसके घर अब बिल्कुल नहीं आती थी। और वह भी अब नहीं पहुँच पाता था चन्द्रभान बाबू के

देता है। वातावरण निस्तब्ध था, न कोई बोल रहा था और न किसी के चेहरे में कोई हरकत ही चल रही थी। रेणुका अखिल के चेहरे पर बदलते हुए भावों को देख रही थी और वह दुविधा और असमंजस में पड़ा यह तय नहीं कर रहा था कि वर्तमान परिस्थिति के अनुकूल कौन सा उत्तर हो सकता है।

अभय की क्षमता व्यग्र हो प्रश्न में बदल गई। उसके मुँह से निकल गया—“बोलो अखिल, तुमने तो चुप्पी साध ली।”

इस पर पुत्र का समर्थन करती हुई रेणुका फिर कहने लगी—“कौन बड़ा अहम मसला है, जिसके लिए तुम्हें सोचने की जरूरत पड़ गई अखिल बताओ, कहाँ पर घर लिया है? मैं अभय और कुमारी को भेजती हूँ। वे वहाँ को ले आयेंगे।”

अब अखिल के लिए किन्तु, परन्तु और लेकिन तीनों ही व्यर्थ सिद्ध हो चुके थे। स्नेह के सम्मुख वह श्रद्धा से झुक गया था और जल्दी में वह रेणुका को महत्व देता हुआ बोल उठा—“ऐसी क्या बात है माँ! जब आपका आदेश है तो उसे पालन करना मेरा कर्तव्य हो जाता है। यही सोचता था कि क्या दुरुस्त हूँ फिर कहीं उसी दलदल में जाकर न फँस जाऊँ, जहाँ न साँस ले मिले है और न पैर पसारते बनता है।”

“यह सब नासमझी है। तुम किसी गैर जगह नहीं बैठे हो और न तुम्हें समझ लेना चाहिए कि हम लोग तुम्हारे ऊपर एहसान कर रहे हैं। सुनो अखिल दुनियादारी केवल दिखावे की होती है और जहाँ पर मनुष्यता का सम्बन्ध वहाँ आदमी ही आदमी के काम आता है। अपने निज के तर्कों से न उलझो जो कहती हूँ करो।”

अब अखिल आत्मीयता के बन्धन में ऐसा जकड़ गया था कि न तो हाँस सकता था और न, न। विवश होकर उसने छोटा-सा उत्तर दिया—“मैं आपकी इच्छा।”

अखिल के इस जवाब को सुनकर कली विकसित हो उठी और हँसने लगा।

×

×

×

शारदा जब हाथीखाने के अन्धेरे घर से निकलकर विशाल कोठी में

: ४६ :

घर में ब्याह की तैयारियाँ चल रही थीं और अब दिन रह गये थे केवल नौ। परसों फलदान जाने का निश्चय था; लेकिन फूलमती को इस अवसर पर शारदा का अभाव ऐसा खलता था कि कभी-कभी सूने में उसकी आँखों में आँसू आ जाते।

फूलमती का मन किसी काम में नहीं लगता था। उसकी उचटी-उचटी तबियत देखकर एक दिन गयाप्रसाद ने पूछ दिया—“क्या बात है शारदा की माँ! आजकल तुम बहुत उदास रहती हो।”

फूलमती पति के इस प्रश्न पर आँखें भर लाई और धीरे-धीरे कहने लगी—“परसों रंजना का तिलक जायेगा और घर में मेरी बेटी शारदा नहीं है, मुझे कदम-कदम पर रोना आता है। आज को वह घर में होती तो दौड़-दौड़कर सब काम निपटाती, मुझे कुछ भी नहीं करना पड़ता। क्या ब्याह की तिथि आगे नहीं बढ़ सकती? शायद कहीं पता चल जाय। मेरी शारदा मौजूद न हो और घर में रंजना की बारात आये! मैं आपसे पूछती हूँ कि क्या आपको अच्छा लगेगा यह?”

गयाप्रसाद निरुत्तर हो गये। पुत्री शारदा का स्नेह उनके मन को कचोट उठा और वे सोचने लगे कि लड़की समझो या लड़का, मेरे तो यही दोनों आँखें हैं—रंजना और शारदा। गोपेश अभी बच्चा है। वह पौधा तो पनप रहा है और जो पौधा पेड़ बन चुका है उसकी कमी बहुत खलती है।

पति को गम्भीर मुद्रा और चिन्तन में खोया हुआ देखकर फूलमती पुनः कहने लगी—“क्या सोच रहे हो! मेरा मन तो यह है कि आज ही रामानन्द के पास चले जाओ और उनको धीरे से समझा दो कि अक्षय तीज का मुहूर्त आगे बढ़ा दे। अभी आधा वैशाख है और पूरे दो महीने जेठ और आषाढ़ के पड़े हैं। ब्याह इसी साल अगली सहालगों में हो जायगा। क्या हर्ज है महीने ढेर महीने रुक जाने में, तब तक शायद शारदा का पता चल जाय।”

गयाप्रसाद अब और भी गम्भीर हो गये थे। कुछ देर बाद वे कुछ सोचते हुए

घर जब से अखिल ने घर छोड़ा था। जीवन का मन तभी ने उस घर और से उचट-सा गया था जब एक दिन वह यह पता करने आया कि अखिल कुछ पता लगा या नहीं। तब उसने अपने कानों से सुना। सुभद्रा ने निखिल कहा था—“इन्से कह दो निखिल कि जो कुछ पूछना हुआ करे दूकान से कर लिया करें। रोज-रोज घर आने की क्या जरूरत है? किसी ने डिकिया बन्द कर रखा है अखिल को, जो शाम-सवेरे उसे पूछने चले आते हैं। उनकी हमदर्दी की जरूरत नहीं है; जो गया है, लाख दफे गरज होगी तो भी के बल चलकर आएगा।”

जीवन यह सुनकर वापस चला आया था और फिर इसके बाद वह कभी नहीं गया।

जीवन का मन रंजना में रमता जा रहा था। वह धीरे-धीरे अखिल के छोड़ देने वाले प्रसंग को भूलने लगा। व्याह की तिथि निकट आ गई थी। उसकी प्रसन्नता में वृद्धि हो आई थी कि अब रूप की रानी रंजना उसके मन में शीघ्र ही आ जायेगी। वह अब कभी चिन्तित नहीं होता; क्योंकि उसके मन में ईश्वरीय वरदान स्वरूप रंजना गृह-लक्ष्मी बनकर आ रही थी।

कभी-कभी जीवन ऐसा भी सोचने लगता कि रंजना के मन में वहन वहन के चले जाने का दुख अवश्य होगा। आदमी बाहर निकलता है, लो से हँस-बोलकर अपना दुःख भूल जाता है। लेकिन नारी जाति के मन में बहुत समय तक बनी रहती है। ऐसी बात नहीं कि अखिल न आये और पता न चले। एक दिन वह अवश्य आयेगा क्योंकि जन्म-भूमि मनुष्य को बार आने के लिये विवश कर देती है। ‘जननी-जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि यसी।’ मेरे निकट-सम्पर्क में आकर रंजना अपना दुःख भूल सकेगी। यह विश्वास है।

इस तरह जीवन अपने तई सन्तुष्ट हो जाता और प्रतीक्षा करने लगता दिन की जब शहनाई के स्वर उसके कानों में पड़ेंगे और रंजना दुलहिन बन पालकी में बैठेगी।

“देखो !” रामानन्द यह कहकर कुछ सोचने लगे और फिर देर तक उसी मुद्रा में बैठे रहे । जब गयाप्रसाद ने फिर टोका तो वे कहने लगे—“दिक्रत तो बहुत होगी, जहाँ-जहाँ निमन्त्रण-पत्र भेजे हैं वहाँ नये कार्ड लिखने होंगे । लेकिन आपका मन भी रखना है । वैशाख भर देख लो, जेठ में फिर कोई लगन निश्चित कर ली जायेगी ।”

इस प्रकार रामानन्द ने गयाप्रसाद का मन रख लिया । लेकिन स्वयं वे उलझन से भर गये कि सारी तैयारियों पर पानी फिर गया । अब एक की जगह डेढ़ खर्च होगा तब कहीं आतिशवाजी, कहार-पालकी और बाजे का प्रबन्ध हो पायेगा । इधर सबको दिये हुये बयाने समझ लो कि मारे गये ।

अपना यह अन्तर्द्वन्द्व रामानन्द ने गयाप्रसाद पर नहीं व्यक्त किया; क्योंकि यह ओछापन था । लाख मोहर के लड़के जीवन के लिये उन्हें चाहे जितना खर्च करना पड़ जाता, वे हँसते-हँसते कर जाते ।

गयाप्रसाद चले गये और रामानन्द विचारों की दुनिया में विचरने लगे ।

×

×

×

फूलमती ने जब सुना कि रंजना का ब्याह आगे बढ़ गया है तो उसकी खुशी का वारापार न रहा । और जब रंजना को यह बात मालूम हुई तो वह हर्ष से नाच उठी और मन-ही-मन ईश्वर से विनय करने लगी कि अखिल जहाँ भी कहीं हो वह सपरिवार वापस लौट आये ।

१ ४७ १

शारदा कुमारी के सम्पर्क में आ, अपने अतीत के पुष्टों को भूलने लगी थी । कुमारी उससे इतनी श्रद्धा रखती थी कि वह उसे अतीव आदर पूर्वक सम्बोधन करती भाभी; तब शारदा के मन में यह बात घूम जाती कि एक रानी है और

बोले—“यह हो सकता है; मेरा भी मन कुछ उखड़ा-उखड़ा सा लग रहा है। रंजना का ब्याह क्या फिर बार-बार होगा ! शारदा के बिना तो घर ही बूझ रहेगा। मैं आज ही रामानन्द से मिलूंगा और उनको समझाने की पूरी कोशिश करूंगा।”

पति के मुँह से यह सुनकर फूलमती निहाल हो उठी। देर तक वह पति से उसी विषय पर बातें करती रही।

और उसी शाम को गयाप्रसाद जा पहुँचे रामानन्द के घर।

तब जीवन घर में था। दोनों बाप-बेटे कमरे में बैठे खरबूजे खा रहे थे और बूढ़ा रसोइया एक ओर बैठे चाकू से खरबूजों के छिलके उतार रहा था। कमरे में बिजली का प्रकाश यद्यपि हो रहा था, लेकिन अभी साँझ का झुटपुटा होने के कारण वह पूर्ण रूप से निखर नहीं पाया था।

गयाप्रसाद रामानन्द के पास जाकर बैठ गये और अवसर उपयुक्त बातें उन्होंने अपनी बात आरम्भ कर दी।

रामानन्द एकदम चौंक उठे। वे बोले—“यह क्या कह रहे हैं गयाप्रसाद बाबू ! मैंने सभी जगह निमन्त्रण भेज दिये हैं और मेरी बड़ी बहन तो कभी सवेरे यहाँ आ जायेंगी। अखिल का जब अब तक कुछ पता नहीं चला तो आपने यह कैसे सोच लिया कि महीने-डेढ़-महीने में पता लग ही जायेगा। उसके आने का जब कुछ निश्चित नहीं है तो फिर आप मुझे ब्याह की तिथि आगे बढ़ाने के लिए कहकर क्यों एक शुभ मुहूर्त को टाल रहे हैं ? आपाढ़ में सहालगें नहीं हैं जेठ में जो ब्याह बनते हैं, उनमें दान लगता है, यही मुहूर्त सबसे अच्छा था।”

गयाप्रसाद ने अब अपनी विवशता प्रकट कर दी। वे दुःखी होकर बोले—“रामानन्द बाबू ! आप नहीं जानते कि बड़ा लड़का और बड़ी लड़की का सम्बन्ध मूल्य होता है माँ-बाप की नजरों में। मैं रंजना और शारदा को पुत्र के स्थान पर देखता हूँ। घर में रंजना की माँ अक्सर रोती है कि रंजना का ब्याह कभी फ़िर-फ़िर होगा ! इस मौके पर अगर शारदा न हुई तो उसका दिल टूट जायेगा। सोच लीजिए, आप भी बाप हैं और औलाद की कलक कैसी होती है यह भी जानते हैं ! यह तिथि टाल जाना ही अच्छा है। मेरा मन कहता है कि इस बीच अखिल और शारदा अवश्य मिल जाएँगे !”

क्यों न होता, उसके मन में सबसे पहले थी लगन और फिर श्रद्धा । दोनों का संगम हो गया । शिक्षक को आगे बढ़ने वाली छात्रा मिल गई और छात्रा को एक कुशल शिक्षक ।

इस तरह कोठी में शारदा और अखिल अपना आवास बनाये थे । विनोद और प्रमोद दोनों घर-भर के खिलौने थे । पूरे दिन वे हाथों ही हाथ रहते । ऐसे में एक दिन वहाँ आ गई रानी !

बाहर कमरे में विनोद मेज पर बैठा था और अभय एक बीमार के लिए औषधि-पत्र लिख रहा था । रानी चौंकी । वह अभय के पास पहुँची तो उसे देखते ही विनोद चिल्ला उठा—“बुआ तुम यहाँ कैसे आ गई ! चलो मुझे अपने साथ ले चलो, बाबा अब भी मेरे लिये कम्पट और बिस्कुट लाते हैं या नहीं ?”

बालक ललचाया सा, अपनी बाल-मुलभ चंचलता व्यक्त करता हुआ रानी की ओर देख रहा था कि रानी ने उसे गोद में उठा लिया और कहने लगी—“हाँ, हाँ, लाते क्यों नहीं हैं ! तुम कहाँ चले गये थे विनोद ?”

विनोद अपनी बुआ के जवाब में कुछ कहे इसके पहले ही अभय बोल उठा—“अखिल का पता लग गया रानी, मैंने उन्हें ढूँढ़ निकाला ।”

रानी चौंकती हुई जिज्ञासा-भरे स्वर में बोली—“कहाँ चले गये थे भइया ?”

उत्तर में अभय ने रानी को संक्षेप में अखिल की कहानी सुनाई और फिर उसको साथ ले वह कोठी में आया । वहाँ रेणुका के पास शारदा बैठी थी और दूसरे कमरे से घुँघरू बजने की आवाज आ रही थी ।

शारदा को देखते ही रानी लपककर उसके पास पहुँची और बहुत ही उदास होकर आत्मीयता भरे स्वर में पूछने लगी—“वाह भाभी ! कम-से-कम मुझे तो कुछ बतातीं, ऐसी क्या नाराजी थी !”

शारदा संहज स्वर में कहने लगी—“चलते समय मैं जल्दी-जल्दी माँ के तो पाँव लग आई थी, तुम्हारे भइया जल्दी मचा रहे थे । इसलिये तुमसे नहीं मिल पाई । कहो, अच्छी तो हो रानी ! माँ, और पिताजी कुशल से हैं और निखिल का क्या हाल है ?”

दूसरी यह कुमारी ! जो सगी ननद है उसके शब्दों में मधु है, लेकिन उसे मिठास नहीं, कोरी कृत्रिमता भरी है । और जो परायी लड़की है, जो फूलों से जूझती है और सोने-चाँदी से खेलती है, उसकी वाणी में इतना माया है । काश ! रानी भी ऐसी ही बन पाती तो हमारे घर का माथा और डेरा हो जाता !

रेणुका को भी शारदा ने पाया था अपनी माँ—फूलमती—के सदृश अप्रतिम स्नेह बरसाने वाली । यद्यपि वह उसे बहू कहती थी । लेकिन उस शब्द के उच्चारण में माँ की ममता और दुलार समाविष्ट था । शारदा अपनी सास की ओर खिंच जाती कि मैंने सास का सुख कभी नहीं जाना, प्रतारणा अब य वे आने स.सं वाले अंग की पूर्ति करती रहें । रेणुका की वाणी में स.सं और से समानता है । वह बहू और बेटी में कोई भेद नहीं समझती है ।

माँ और वहन की भाँति अभय भी जब शारदा को भाभी कहकर पुकारता तो उसे निखिल की याद हो आती कि निखिल पहले खिलाफ चला फिर माँ की हुंम्रा, तत्पश्चात् एकाएक बदल गया । उसमें वचपना है तभी स्थिरता नहीं और संयम नहीं । अभय सर्वथा उसके विपरीत है । उसके अपने सिद्धान्त हैं और कुछ निश्चित पथ । मुझे वह बहुत सीधा और शिष्ट लगता है, ईश्वर उसकी कीर्ति ऐसी फैलाये जैसे हवा में सुगन्ध !

यह स्थिति थी शारदा के साथ और दूसरा पक्ष था अखिल का जो घर-भर को अपने ऊपर प्रभावित किये बैठा था । उसे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन अभय, रेणुका और कुमारी, बल्कि यहाँ तक कि नौकर गंगा और महाराजिन भी उसे दया का अवतार समझते थे । उसने शान्ति ने कोठी में एक सुखद वातावरण उत्पन्न कर दिया था जिसमें माँ गवने फूली नहीं समा रही थी और बेटा बलि-बलि जाता था । और बेटी ने तो अपने रूप में कवि को भगवान् मान लिया था । वह जब अखिल के सामने आ करती तो अपनी भूमिका में ऐसी खो जाती कि कला निखर कर रह जाती । उसके मुद्राएँ और भाव-भंगिमाएँ, सभी अवयव संचालन, शिल्पी के संकेत पर चलते थे और उसके निर्देशन की यह गति थी कि कुमारी शीघ्र ही एक अभ्यास कर लेती । फिर उसके लिए उसे द्वारा निर्देशन की आवश्यकता नहीं पड़ती

गोले स्वर में आग्रह करने लगी—“भाभी, भइया के मुँह से जो बात निकल जाती है वह उसे करके ही रहते हैं। लेकिन तुम मुझे टाल नहीं सकतीं ! मैं तुमको अपने साथ लेकर ही जाऊँगी।”

इस पर शारदा बोलती ही रह गई और अखिल कहने लगा—“जिद नहीं करते रानी, यह मामला कोई व्यक्तिगत नहीं; जो स्थिति मेरे साथ है, वही तुम्हारी भाभी के साथ। कोई नहीं जायेगा। मैं अपने शरीर से छोटे-बड़े, अपने-पराये और दोस्त-दुश्मन किसी को भी कष्ट नहीं पहुँचाना चाहता। घर की कहानी पुरानी है, वह कोई बदल नहीं गई होगी। फिर वही भँभट होंगे, फिर वही किचकिच ! मेरी अच्छी बहन, हम लोगों को विवश न करो।”

रानी ने बहुत जोर लगाया और पूरी-पूरी कोशिश की। लेकिन अखिल अपने निश्चय से तिल भर भी नहीं डिगा। शारदा भी उसके अनुकूल थी। इसलिए थोड़ी देर बाद रानी को अकेले ही वहाँ से लौटना पड़ा।

रानी जब पथ पर चल रही थी तो उसके मस्तिष्क में विचारों का इतना बड़ा पुञ्ज था कि वह उसको समेट नहीं पाती थी। उसका मन कह रहा था कि कोई भी दिशा अपनी नहीं है और न कोई पक्ष। यहाँ मन रम रहा था। अभय को पाकर सारी उलझनें समाप्त हो चली थीं और लगता था कि एक सुन्दर संसार बसने वाला है जिसमें अभय होगा, मैं होऊँगी और हम लोगों का चिर-प्रेम ! लेकिन ये भाभी और भइया तो मेरे लिए अभिशाप हो गये हैं। कहाँ से आगये ये लोग यहाँ ? अब मैं कैसे जाऊँगी कुमारी के पास और कैसे मिलूँगी अभय को समझाएँ—अजीब उलझन है ! सोचूँगी, इस पर बहुत जल्दी ही विचार करना है कि मुझे कौन-सा कदम उठाना चाहिए।

सड़क पर सवारियाँ दौड़ रही थीं। व्यक्ति चल रहे थे और भीड़ बढ़ रही थी। ऐसे ही रानी के अन्धे विचार आँधी बनकर मचल रहे थे और वह खीझ-खीझकर रह जाती थी।

रानी ने विनोद को गोद से उतार दिया और शारदा के निकट बैठो तनिक हँसकर कहने लगी—“सब लोग अच्छे हैं । “कोई खास बात नहीं यह कहकर वह तत्क्षण ही दूसरा प्रश्न कर बैठी । वह बोली—भइया कहाँ हैं ? “सामने कमरे में कुमारी को नाच सिखा रहे हैं ?” शारदा ने यह कह उँगली से कमरे की ओर संकेत कर दिया ।

तब रानी अखिल के पास चल दी । उसके प्रविष्ट होते ही कुमारी पाँव अपने आप रुक गये और अखिल चौँककर आगन्तुक की ओर देखने लगी ।

रानी भाई के निकट आकर खड़ी हो गई और वह कुछ पूछना चाहती तब तक उसके नेत्र कुमारी की ओर घूम गये । वह भोली हरिणी की भाँति बड़ी आँखें लिये, आश्चर्य से कभी रानी को निहारती और कभी अखिल मुख-मुद्रा देखने लगती । अब क्या होता है, उसकी जिज्ञासा ललक रही थी शिल्पी रानी से साधारण प्रश्न कर रहा था—“रानी ! तुम यहाँ कैसे आओ आओ बैठो । कहो, पिताजी कैसे हैं ?”

रानी एकाएक भाई को कुछ भी जवाब न दे पाई । वह अपनी कोन उँगलियों को एक-दूसरे के साथ ऐँठती हुई उसी कालीन पर बैठ गई जिस अखिल आसीन था । फिर धीरे-धीरे उसके होंठ हिले और स्वर निकला—“आपकी बात पूछते हो भइया, वहाँ सब कुशल-मंगल है । आप अब हम सब लोगों दूर नहीं रह सकते । चलो, घर चलो । नहीं तो मैं जाकर पिताजी से कहूँ तब उनको आना होगा ।”

अखिल की मुद्रा पूर्ववत् रही । वह मधुर शब्दों में रानी को समझा हुआ बोला—“रानी, अब तुम समझदार हो । यहाँ मैं मित्रता के नाते आकर टिका और न किसी लोभ-लालच ने ही रोक रखा है । मैं व्यवहार में बँधा काम करता हूँ, पारिश्रमिक मिलेगा । इससे जीवन शान्त और निर्विघ्न रहेगा पिता जी और माँ बिगड़ते भी हैं और स्नेह भी करते हैं । लेकिन मेरे रक्त उन्हें हमेशा कष्ट ही मिलता है । इसलिए वहाँ मेरा न जाना ही ठीक है ।”

कुमारी थोड़ी देर तक खड़ी रही फिर वह जाने के लिए आगे बढ़ी । शारदा आ रही थी अतः वह उसके साथ आ, दोनों भाई-बहन के पास बैठ

रानी कुछ आसी-सी हो आई थी । उसने शारदा की ओर ताका

चुपचाप चली आई ।”

तब तक सुभद्रा बोल उठी—“देखो तो, यह लड़का जहाँ भी रहेगा नाम में बड़ा जरूर लगायेगा । दूसरे के घर में पड़ा रोठियाँ तोड़ रहा है, न शर्म रह गई है और न हया ।” यह कह वह रानी की ओर उन्मुख हुई और दाँत पीसकर बोली—“खबरदार रानी, जो तुम अब कुमारी के घर गईं ! राम, राम ! कंसी मिट्टी पलीद की है, इस कलाकार के बच्चे अखिल ने !”

सुभद्रा ने यह कहकर चन्द्रभान बाबू को बोलने के लिये विवश कर दिया । उनका चेहरा रोप से तमतमा उठा और वे कहने लगे—“अखिल को इसकी क्या चिन्ता है, बदनामी तो मेरी होती है ! भला किसी के घर में रहने की क्या जरूरत ! अलग रहना था तो किराये के मकान में रह सकता था । मैं आज ही रानी के निखिल को भेजूँगा उसके पास ! फिर चुपचाप घर चला आवे और अगर दुनिया है, कोई कि तमाशा दिखाना है तो कहीं और चला जाय । मैं यह वर्दाश्त नहीं कर सकता कि वह दूसरों की दया पर जिये ।”

वस चन्द्रभान बाबू का यह कहना ही सुभद्रा के लिये पर्याप्त था । वह जानती थी कि अखिल बड़ा स्वाभिमानी है । वह घर में आकर कभी नहीं से मिलेगा । यही सब सोचती हुई वह पति से दुनियादारी की बातें करती रही और बीच-बीच में रानी भी बोल उठती थी ।

रात को जब निखिल घर आया तो आते ही चन्द्रभान बाबू ने उसको अखिल के पास भेज दिया ।

निखिल रास्ते में चौंकता हुआ चला जा रहा था कि भइया शहर में ही रहे और हम लोगों को पता नहीं चला । यह कौन-सा तुक है जो किराये का घर छोड़कर कुमारी के घर में जा टिके ।

रानी ने जो कुछ अभय के घर में सुना, समझा और देखा था वह उसने शहर में सभी को बताया था । निखिल उसी को लेकर अन्तर्द्वन्द्व में पड़ा था ।

और इससे भी अधिक निखिल तब चौंका जब वह अखिल के पास से वापस लौटा था । उसने वाप कबे आकर बतलाया कि मैंने बहुत कोशिश की, काफी समझाया भइया को; लेकिन उन्होंने मेरी एक भी बात नहीं लगने दी । वे कहते हैं कि मैं किसी के मान को तोड़ नहीं सकता । अभय का व्यवहार ऐसा है कि

रानी ने घर आकर सुभद्रा को सब हाल बतलाया । सुभद्रा को यह सुन
 मन में काँटे से चुभने लगे कि अखिल सपरिवार अभय की कोठी में है ।
 सोचने लगी कि राम-राम करके बला टली थी और फिर सिर पर
 धुनने के लिए यह अखिल कहाँ से टपक पड़ा । मैं तो जानती थी कि शहर से
 बाहर चला गया है । वह उलझन में रही । वह चाहती थी कि किसी भी
 भेद चन्द्रभान तक न पहुँचे, नहीं तो वे अखिल को लाकर फिर घर में टिका
 लेकिनतीर छूट चुका था । जिस समय रानी उसको अखिल के बारे में बोच
 रही थी, ठीक उसी समय चन्द्रभान बाबू दफ्तर से आ गये और रानी के
 से अखिल का नाम सुन उसके पास आ, पूछने लगे—“क्या बात है, कोई
 आई है अखिल की या....”

“नहीं, चिट्ठी तो नहीं आई पिताजी !” रानी यह कहने के साथ तत्काल
 वास्तविकता व्यक्त करने लगी । वह इन शब्दों में थी—“पहाड़गंज में मेरी
 क्लास-फेलो कुमारी की कोठी है । आज मैं बहुत दिनों बाद उससे मिलने
 तो देखा वहाँ भाभी और भइया थे, यही माँ को बतला रही थी ।”

चन्द्रभान बाबू कपड़े बदलना भूल गये । हाथ का बेंत कुर्सी से सट
 नीचे गिर गया और वे उसी अस्त-व्यस्त स्थिति में कुर्सी पर आ, अ
 अवस्था को प्राप्त हो सहसा पूछ बैठे—“वहाँ क्या करता है अखिल ?
 कोई सिलसिला तो होगा !”

“सिलसिले की बात ऐसी है पिताजी कि भइया कुमारी को नृत्य
 संगीत सिखाते हैं । इसके अतिरिक्त अभय में सज्जनता है और उस सज्जन
 का जीता-जागता प्रमाण यह है कि भइया उस घर के एक अंग बनकर वहाँ
 रहे हैं । मैंने बहुत कहा; लेकिन वे अपनी ही बात पर अड़े रहे कि मुझे उन
 से कोई मतलब नहीं है । आगे से मुझसे यह कभी मत कहना रानी । और
 जब मैं भाभी के पीछे पड़ी, उनकी बड़ी चिरोरी की तो वे भी भइया ही की
 ऐसी बदलीं जैसे हम सब लोग उनके दुश्मन हों । मैं क्या करती, पिताजी

की भाँति वहाँ जाया करती थी और न निखिल । रह गई रंजना, वह जब से शारदा गई वहाँ अब जा ही नहीं पाती थी ।

दिन चल रहे थे । वैशाख बीत गया था और जेठ की लू झकोरे भर-भर-कर मचल रही थी । एक सप्ताह जब बीता तो रामानन्द ने रसोइये को भेज-कर गयाप्रसाद को बुलवाया । उनका प्रस्ताव गयाप्रसाद के सामने था कि जेठ में केवल तीन सप्ताह रह गये हैं और आपाढ़ में कोई लगनें नहीं हैं । अखिल का पता अब तक नहीं चला । इस अवधि में व्याह-कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिए ।

गयाप्रसाद का मुँह कुछ उतर गया । वे एक लम्बी साँस लेकर बोले—
“क्या किया जाय, आदमियों को तो समझाया जा सकता है, लेकिन स्त्रियों की इच्छा यदि पूरी नहीं होती है तो उनका मुँह लटक जाता है । रंजना की माँ किसी भी भाँति सहमत नहीं कि शारदा की अनुपस्थिति में घर में व्याह रचे । अब आप ही बताइये कि उनको कैसे समझाया जाय । क्या हर्ज है, कि इन सहालगों में व्याह न होकर अगली लगनों में किया जाय ।”

“यह क्या कहते हैं आप ? ऐसा नहीं हो सकता । व्याह इसी महीने होगा ।” रामानन्द कुछ चौंके जिससे उनका स्वर कुछ तेज हो गया था ।

बात नहीं बनी । गयाप्रसाद कुछ विवश हो आये और वह बेवसी शब्दों का रूप लेकर सामने आगई । वे खिन्न होकर कहने लगे—“ऐसा न करिये, जो घर की मालकिन है, उसकी राय के खिलाफ़ चलना उचित नहीं । क्या चिगड़ता है, यदि व्याह अभी न होकर छः महीने बाद होगा ।”

“आप हर्ज की बात करते हैं और यह नहीं सोचते कि इस बार जीवन बड़ी मुश्किल से व्याह के लिये रजामन्द हुआ है । मैं इसीलिए जल्दी करता हूँ, क्योंकि अगर कहीं छोड़ा बिचक गया तो फिर लगाम काम नहीं देगी ।” यह कहकर रामानन्द ने अपने दोनों हाथ मेज पर जोर से पटक दिये ।

गयाप्रसाद निरुत्तर हो गये और रामानन्द फिर कहने लगे—“आप घर में रंजना की माँ को समझा दीजिए कि वे ज़िद न करें । मान लो अगली सहा-लगों तक अखिल का पता न चला तब फिर कितने दिन टालेंगे आप ? सोच लीजिए, शुभ काम में देर नहीं करनी चाहिए, इसीलिये जोर दे रहा हूँ !”

वह मुझे अपने घर का ही एक प्राणी समझता है। इसके अतिरिक्त मैं कुमारी नृत्य और संगीत सिखलाता हूँ, इसके लिए पचास रुपये महीने तय हुआ है। बाज़ार का भी काम करता हूँ। मुझे कोई कष्ट नहीं, बड़ी शान्ति है, उसका भंग न करो निखिल। पिताजी को समझा देना कि वे इसमें अपनी अपनी समझें।

“और वह ने क्या कहा ?”

चन्द्रभान बाबू के इस प्रश्न पर निखिल शारदा के लिए कहने लगा— “भाभी भइया की अनुमति के बिना एक कदम भी आगे नहीं चल सकती है। मेरे कहने पर वे हर बार यही कहती रहीं— मैं क्या बताऊँ निखिल, अपने आपको राजी करो। मैं अकेले कैसे जा सकती हूँ ! यों तो अब सबको मान्य हो गया है, तो माँ से मिलने मैं कभी-कभी आजाया करूँगी। बाकी वहाँ जा रहना, यह तुम्हारे भइया की मर्जी पर है।”

छूटते ही सुभद्रा मुँह बनाकर बोल उठी— “बड़ी पति-परायणा है ! देखो कैसे टाल दिया। चलो निखिल, खाना खा लो, रात बहुत हो गई है।”

तब निखिल कहने लगा— “खाना तो मैं भइया के साथ खा आया है। जब गया था तो पराँठे बन रहे थे, मैंने बहुत कहा कि खाना घर जाकर खाऊँगा, लेकिन मामी नहीं मानी।”

अब सुभद्रा और भी जल-भुन उठी। उसने निखिल से कुछ नहीं कहा। धुपचाप वहाँ से उठ गई।

! ४६ !

निखिल का पंता लंग जाने वाली बात अभी गयाप्रसाद के घर नहीं थी और पहुँचती भी कैसे ! उसकी कोई सूरत नहीं थी। न रानी अब

खीर कर रह जाते थे और ऐसे ही एक दिन तिथि आगई ज्येष्ठ पूर्णिमा की !
किन्तु व्याह-कार्य नहीं हो सका ।

: ५० :

आषाढ़ की पहली वर्षा के बादल गगन में उमड़ रहे थे, घुमड़ रहे थे ।
उमस खूब थी और हवा वन्द थी । लगता था कि पानी बरसने वाला है ।
गोधूलि बेला अब साँझ में बदलने लगी थी और चन्द्रभान बाबू दफ्तर से लौट रहे
थे । उनकी गति में वेग था । घर पहुँचने की जल्दी थी कि सहसा मार्ग में मिल
गये गयाप्रसाद !

गयाप्रसाद ने नमस्कार किया और चन्द्रभान उसका यथाविधि उत्तर दे धीरे
से बोले, “अखिल तो यहीं है, आपको नहीं मालूम ? वह बहू और बच्चों के
साथ पहाड़गंज में वैरिस्टर रामप्रताप की कोठी में रहता है । मैंने निखिल को
भेजा था तो उसने घर आने से इन्कार कर दिया । आप कोशिश कीजिये ।
शायद आपकी बात मान ले ।”

यह सुनते ही गयाप्रसाद को जैसे स्वर्ग मिल गया । एक क्षण में ही वे
सोच गये कि अब मैं रामानन्द को समझा लूँगा और यह निश्चित है कि रंजना
का व्याह माघ में होकर रहेगा । मन की बात वाणी में न व्यक्त कर बे
लोकाचार की बात कहने लगे—“कब मालूम हुआ आपको ? पहले घर में बता
हूँ फिर मैं अभी जाता हूँ ।”

चन्द्रभान जो कुछ अखिल के विषय में जानते थे वह धीरे-धीरे बताने लगे ।
तभी बादलों से बूँदें नीचे उतरने लगीं । टप-टप बड़े बूँद दोनों समधियों के
बदन पर पड़े और उनके रास्ते अलग-अलग हो गये ।

अब पानी खूब जोर बाँधे बरस रहा था । अन्धेरा ऐसा भुक् आया था,

इस पर गयाप्रसाद ने कोई तर्क नहीं किया । वे पराजित स्वर में धीरे-धीरे बोले उठे—“देखिये, कोशिश करूँगा कि आपका कहना सार्थक हो जाय ।”

ये बातें पहले दिन हुई । गयाप्रसाद की घर में आकर फूलमती से मन्त्रा-
हुई । निष्कर्ष वही रहा जो पहले था । दूसरे दिन गयाप्रसाद फिर रामानन्द के पास पहुँचे और अपनी मजबूरी जाहिर करने लगे ।

उस दिन भी दोनों भावी-समधियों में खूब तर्क-वितर्क हुये और प्र-
प्रकार कई दिन तक यह प्रसंग चलता रहा । रामानन्द चिढ़ गये थे । वे गुस्से-
आकर बहुत ही अप्रिय बात गयाप्रसाद से कह गये ।

बात यह थी—“आप अपनी कहते हैं दूसरे की मानते ही नहीं । मैं प-
पचड़े में नहीं पड़ना चाहता कि जब अखिल आये तभी व्याह हो । आपसे क-
पक्की होने के कारण मैंने कई व्याह इधर लौटा दिये । मैं तो व्याह जेठ में क-
करूँगा । आप अपना सोच-विचार कर लीजिये ।”

इस पर गयाप्रसाद मुँह फुलाकर चले आये और घर पहुँच फूलमती से सम्मुख जा कहने लगे—“शारदा की माँ, लगता है कि यह सम्बन्ध अब त-
तब टूटा ! आज साफ-साफ रामानन्द ने कह दिया है कि वे व्याह जेठ में क-
करेंगे, नहीं तो फिर हमारे लिये बैठे नहीं रहेंगे ? बोलो, अब क्या कहती हो ?

फूलमती चौंककर एक कदम पीछे हट गई और कहने लगी—“अपनी जगह दु-
दुनिया देखती है और पराये पूत को ही लोग बद्रीनारायण भेजते हैं । यह स-
सर जबर्दस्ती है रामानन्द की, क्योंकि वे लड़के वाले हैं । मेरी लड़की कुंआ-
बैठी रहेगी अगर वे व्याह नहीं करेंगे ; और तुम घर में हमको तो समझाते हो
हो और बाहर मुँह खोलकर बात नहीं करते ? चाहे तुम्हें बुरा लगे चाहे राम-
नन्द को, रंजना का व्याह तभी होगा जब शारदा मौजूद होगी !”

गयाप्रसाद उलझन में भरे हुये वहाँ से चले गये । इस समय वे सोच रहे थे कि बड़ी आफत है ; न इधर कल और न उधर चैन ! मैं बात बिगाड़ना नहीं चाहता हूँ । गुड़ भरा हँसिया सामने है, न फँकते बनता है और न निगलते हैं कि-
किस-किसको समझाऊँ ? फूलमती अपनी जगह दुरुस्त है और रामानन्द अपने स्थान पर !

गयाप्रसाद उसके बाद रामानन्द के पास नहीं जा पाये । रामानन्द को

गई और उसकी बात आगे आगई । उसने जिस प्रकार निखिल को समझाया था वही बातें गयाप्रसाद से भी कहीं । आखिर विवश होकर गयाप्रसाद को उसका कहना मानना ही पड़ा । वे चलते-चलते बोले—“अच्छा है, खूब कमाओ-खाओ, हमारी खुशी इसी में है ! कोई हर्ज नहीं, तुम कहीं भी रहो, काम से लगा रहना जरूरी है ।”

रंजना शारदा को अपने साथ घर लिवा लाना चाहती थी । शारदा उस समय आने की स्थिति में नहीं थी, इसलिये उसने रंजना को रोक लिया और बोली—“तीसरे पहर चलूँगी रंजना ! सोचती हूँ आज घर जाकर माँ के भी पाँव लग आऊँ ।”

रंजना रुक गई और गयाप्रसाद चले गये ।

तीसरे पहर दोनों वहुनें सबसे पहले सुभद्रा के पास पहुँचीं । रानी और सुभद्रा ने काफी अपनत्व दिखलाया । खूब गिले और शिकवे किये और बार-बार दुनियादारी करके कहती रहीं कि किसी के घर में रहने से क्या फायदा, जब अपना हवेली-सा मकान खड़ा है । लेकिन अखिल को क्या कहा जाय, हमेशा अपने मन की करता है !

दिन ढले तक शारदा वहाँ बैठी रही । फिर रंजना के साथ पीहर की ओर चल दी । इस समय रानी भी उसके साथ थी, जो लौकिक-प्रदर्शन के लिए स्वतः साथ चली आई थी ।

चिराग जलते-जलते शारदा माँ के पास पहुँची । फूलमती उसको गले से लगाकर खूब रोई । शारदा भी अपने आँसू नहीं रोक पाई । वह भी रोने लगी । रंजना और रानी के भी आँसू आगये । सचमुच यह मिलन-घड़ी कितनी सुखदायक थी !

रात आगई और सबमें बातें होती रहीं । बातचीत के सिलसिले में फूलमती ने बताया कि रामानन्द बहुत नाराज हैं । वे इसी साल जेठ में विवाह करना चाहते थे; लेकिन हम लोग इस बात पर अड़े थे कि जब तक शारदा नहीं होगी तब तक रंजना का ब्याह नहीं होगा । अब तुम आगई हो बेटी, मैं कल ही उनको जीवन के घर भेजूँगी । आषाढ़ में अब कोई लगनें नहीं हैं, ब्याह तो अब माघ में ही होगा ।

मानो भादों की अमावस की रात हो । उमस दूर चली गई थी और ठंडी सड़कें तथा गरम मकान पानी से नहा शीतल हो रहे थे । उनसे मोंसे सौंधी वास उठ रही थी और हवा बेंडी होकर बह रही थी । घर आते-आते गयाप्रसाद बिल्कुल भीग गये थे । अखिल और शारदा के मिल जाने की खुशी में वे गीले कपड़े उतारना भूल फूलमती को सामने देखते ही कहने लगे—
“आज पता चल गया शारदा का । पानी बन्द हो, मैं अभी जाता हूँ ।”

प्रसन्नता के अतीव आवेग के कारण फूलमती की आँखों में आनन्द-भाँकने लगे । वह व्यस्त स्वर में पूछने लगी—“कहाँ, क्या शहर में ही है लोग ?”

अब गयाप्रसाद उसी अवस्था में एक ओर बैठ गये और जल्दी-जल्दी कुछ जानते थे सब कह गये ।

रंजना भी बाप के निकट आकर बैठ गई थी । उसकी मुद्रा इतनी प्रफुल्लित थी, मानो उसकी कोई निधि मिल गई हो । जब गयाप्रसाद की बात पूरी हुई तो उसका ध्यान उनके भीगे कपड़ों की ओर गया । वह बोली—“पिताजी कपड़े तो बदल डालिये । पानी बन्द हो जाय, मैं भी आपके साथ चलींगी ।”

गयाप्रसाद अपने कमरे में जा कपड़े बदलने लगे । पानी बरसता रहा फूलमती तथा रंजना की बातें चलती रहीं ।

×

×

×

उस रात पानी खूब बरसा । लगभग ग्यारह बजे रात्रि को आकाश धुंध-धुंध पुछकर साफ हो गया था । मेघ विलय हो चुके थे और उनके स्थान पर आकाश की नीली चुनरी रुपहले सितारों से टँक गई थी । अन्धेरा पाख था । चन्द्रमा निकलकर अस्त हो चुका था । उस समय बादलों की दौड़-धूप चल रही थी और अब अन्धेरा था ।

रंजना और गयाप्रसाद मौसम अनुकूल न होने के कारण उस दिन अकेले के पास नहीं पहुँच पाये । सबेरे दोनों बाप-बेटी गोपेश के साथ पहाड़गंज गये लेकिन गयाप्रसाद के दो प्रस्ताव थे जिन्हें अखिल ने सुनते ही अस्वीकार कर दिया था । वह न तो अब माँ-बाप के सम्पर्क में जाकर रहना चाहता था न ससुराल को ही अपना आवास बनाना पसन्द करता था । दोनों ही बातें

थी। इसलिए रानी भी उठ खड़ी हुई। वह अपने घर की ओर घूम पड़ी और वितोद की उँगली पकड़े तथा प्रमोद को गोद से लगाये शारदा एक रिक्शे में बैठ गई और रिक्शा चल पड़ा पहाड़गंज की ओर।

: ५१ :

रानी ने जो कुछ रंजना के घर में शारदा और फूलमती के मुँह से सुना था वह उसने जाकर माँ से कहा। सुभद्रा को इस पर पूरा-पूरा विश्वास नहीं हुआ। वह सोचने लगी, ये सब बनी-बनाई बातें हैं, रानी को सुनाने के लिये माँ-बेटी ने यह नाटक खेला होगा। जो आदमी मुँह से कम बोलता है वह अन्दर-अन्दर कार्यवाही करता रहता है। फिर बहू की में-में-में बोलने की तो आदत है!

इधर यह था और दूसरी ओर फूलमती ने गयाप्रसाद को वे सारी बातें बतायीं जो शारदा ने उससे बताई थीं। दोनों उस विषय पर काफी देर तक विचार करते रहे और दूसरे दिन गयाप्रसाद रामानन्द के पास जा कहने लगे—“अखिल का पता लग गया; लेकिन आषाढ़ में अब कोई लगन नहीं है इसलिए ब्याह माघ में ही हो पायेगा।”

रामानन्द गयाप्रसाद पर बहुत नाराज थे। फिर भी दुनियादारी के नाते उन्होंने अखिल की क्षेम-कुशल पूछी और उसके बारे में जानकारी प्राप्त कर अपनी बात कहने लगे—“मैं कुछ नहीं जानता, आपने मुझे समझ क्या रखा है? पता नहीं कितनी जल्दी आपके विचार बनते और बिगड़ते हैं। अच्छा किया, जो आप आगये, नहीं तो बाद में मुझसे शिकायत करते। मेरे कालेज के एक प्रोफेसर हैं। कल बातचीत में उनसे यह तय हो गया कि मुझे जीवन का ब्याह उनकी लड़की से कर देना चाहिए। आखिर क्या करता! आप तो फिर मेरे पास आये ही नहीं।”

शारदा माँ की बातें सुन कुछ उदास होकर कहने लगी—“एक बात है माँ अगर जीवन के साथ व्याह न होकर रंजना और निखिल का सम्बन्ध होता तो अति उत्तम था । क्योंकि हम दोनों प्राणियों पर घर की ओर से यह दोष लगाया जा रहा है कि मैंने और रंजना के जीजाजी ने तुमको और पिताजी को अपने घर के खिलाफ भर दिया है कि रंजना का व्याह कहीं और कर दो; यह तो सब बातें हुई थीं घर में । रामानन्द ने डाक्टर का बिल चुकाया था, उस पर यह दोषारोपण हुआ कि वे हमारी टक्कर के रिश्तेदार हैं और हम लोग जानते रहे, फिर भी घर में नहीं बताया कि जीवन और रंजना का व्याह तय हो गया है । काश ! मेरे माथे से यह कलंक का दाग मिट जाता तो कितना अच्छा होता ।”

फूलमती यह सुनकर एक उच्छ्वास लेती हुई बोली—“अब क्या हो सकता है शारदा ! हालाँकि रामानन्द नाराज हैं और उन्होंने यह भी कहा था कि व्याह जेठ में ही करूँगा, निखिल का पता न मालूम कब तक चले, तब तक मैं आने के लिये बैठा नहीं रहूँगा । उनको समझाना होगा और जहाँ बात चल चुकी है व्याह तो वहीं होना चाहिए । तुम्हारी सास को गलतफहमी हुई । व्याह हम लोगों ने अपनी मर्जी से पक्का किया है । तुम्हें तो जब होली पर आई न मालूम हुआ । तुम्हारे पिताजी और मैंने यह सोचकर जीवन की ओर कदम बढ़ाया था कि बड़ी लड़की शारदा जब उस घर में सुख नहीं पा सकती तो दूसरे को जानबूझकर उसी घर में क्यों व्याहा जाय !”

रानी वैठी सब सुन रही थी । अपने घर की निन्दा सुन उसका मुँह कुछ विगड़ गया । किन्तु वह चुप रही, कुछ बोली नहीं ।

शारदा कह रही थी—“बहुत अच्छा हो, अगर रामानन्द विगड़े रहें, उनके नाराज़गी और इन्कार से, मेरा कलंक धुल सकता है ? तुम यह क्यों भूल जाते हो माँ कि मैं उस घर की सौतेली बहू हूँ और रंजना सगी बहू होगी । मैं वहाँ के पैरों की जूती हूँ लेकिन रंजना सास के सिर-ग्राँखों पर रहेगी ।”

इस पर फूलमती ने यह कहकर टाल दिया—“देखो रामानन्द क्या कहते हैं, उसके बाद दूसरी बातें सोची जायेंगी ।”

कुछ थोड़ी देर और इधर-उधर की बातें हुई । शारदा अब जाना चाहती

वह अभय के पास जा पहुँची। दुर्भाग्य कि अभय घर में नहीं था। विवश होकर उसे कुमारी के पास जाकर बैठना पड़ा।

तीसरे पहर का समय था। कुमारी कथक नृत्य की एक भूमिका कर रही थी। जिसमें अवयव संचालन ठीक-ठीक नहीं हो रहा था। अतः अखिल बार-बार उसे हाथ पकड़कर मुद्रा बताता और स्वयं अपने बदन को तोड़-मरोड़, उसको निर्देशन दे रहा था।

रानी थोड़ी देर तक यह देखती रही। फिर दुनियादारी के लिए शारदा के पास जाकर बैठ गई और कहने लगी—“घर में मन नहीं लगा तो चली आई भाभी! माँ से मत कहना नहीं तो वे विगड़ेंगी।”

इस पर शारदा हँस पड़ी। दोनों में थोड़ी देर तक बातें होती रहीं। फिर रानी घर जाने का आयोजन कर वहाँ से उठकर चल दी।

अब अभय आगया था। वह अपने कमरे में ड्राअर खोलकर कोई पुस्तक ढूँढ रहा था, रानी पीछे जाकर खड़ी हो गई और शिकायत के स्वर में कहने लगी—“पता नहीं कितनी देर से आपकी राह देख रही थी। कई दिनों से नहीं आ पाई, सोचा आज चलूँ। लेकिन हज़ूर की सवारी कहीं बाहर गई थी।”

अभय हँसने लगा। उसने ड्राअर बन्द कर दी और कुर्सी पर बैठता हुआ रानी से कहने लगा—“तुम आज मुझसे मिलने आई और मैं नहीं मिला उसकी शिकायत तो बड़ी जल्दी करने लगी; लेकिन अगर मैं पूछूँ कि देवी जी, कई दिन तक क्यों नहीं आई, तो क्या जवाब है तुम्हारे पास?”

“अच्छा तो यह बात है। मैं तो समझती थी कि कारण आप स्वतः ही समझ गये होंगे और……।”

रानी की बात अभी पूरी भी न हो पाई थी कि अभय आश्चर्य प्रकट करता हुआ उससे पूछने लगा—“तुमने क्या कहा रानी, मैं कुछ समझा नहीं।”

“आपको क्या ज़रूरत है समझने की, आप यह नहीं जानते कि भइया और भाभी आपके घर में टिके हैं। फिर मैं कैसे आ सकती हूँ। माँ का हुक्म है कि घर के बाहर न निकलो और न किसी सहेली के यहाँ जाओ। मैं आपके सामने एक कठपुतली हूँ। इसीलिए इशारों पर नाचती रही और यह परवाह नहीं की कि माँ मुझे डाँटेंगी! लेकिन यह सब तब तक था जब तक भइया और भाभी

“अय !” कहकर गयाप्रसाद चौंक पड़े । वे हक्का-बक्का से रामानन्द का मुँह निहारने लगे ।

गयाप्रसाद ने बात बनाने की बहुत कोशिश की; लेकिन गुत्थी उलझती गई और उलझन यहाँ तक बढ़ी कि वे किसी निष्कर्ष पर पहुँचे बिना ही वहाँ से चल दिये ।

फूलमती ने जब यह सुना तो वह मुँह विचकाकर बोली — “हम लोग लड़कों वाले हैं तो कायदे-कायदे भुक् सकते हैं । लेकिन अगर कोई व्यर्थ के धौंस-कुँ में लेना चाहे तो अपने घर बैठे । जीवन से व्याह नहीं होगा तो क्या रकत कुँआरी रह जायगी ? बहुत दिन पड़े हैं, लड़का आसानी से मिल जायगा । ते लो, अगर बात नहीं बनती है तो फिर कोई दूसरा उपाय किया जाय ।”

गयाप्रसाद कुछ नहीं बोले । उनका मौन पत्नी के पक्ष में था । फूलमती के तक बड़बड़ाती रही और वे सुनते रहे । जब ऊब गये तो उठकर बाहर चले गये ।

×

×

×

रानी अपनी उलझन में थी । वह सोचा करती कि अच्छी व्याधि आ गई है अभय के घर । कैसे जाऊँगी उसके यहाँ । भइया और भाभी मेरे लिए छाती के पीपल हो गये हैं । अभय मेरे जितना निकट आ गया था उतना ही अब मैं उसके दूर हो गई हूँ । क्या करूँ उस तक कैसे पहुँचूँ ! माँ का प्रतिवन्ध सामने है और यदि कोई बहाना करके मैं वहाँ जाती हूँ तो भी ठीक नहीं । क्योंकि भाभी अलग रहती हैं तो क्या, उनका आवागमन तो आरम्भ हो गया है । क्या करूँ, कदम-बदल पर खतरा है । प्रीति के पाँव ज़मीन पर न चलकर हवा में उड़ जाना चाहते हैं मंज़िल पूरी हो गई और पूरी होते-होते अकस्मात् यह क्या हो गया जो मैं सर्वविवश हो गई ?

रानी को निश्चिन्तता नहीं हो पाती थी । वह दिन-रात खोई-खोई रह रही थी । वह अहर्निश अपनी समस्या पर मनन किया करती । कई युक्ति उसके सामने आतीं; लेकिन उन पर मानसिक तर्क चलते ही वे व्यर्थ सी प्रतीत होने लगतीं ।

रानी अवसर की प्रतीक्षा में थी कि कब अभय के पास पहुँचूँ, उससे दो बातें कर मन को संतोष दूँ । किन्तु जब मौका नहीं मिला तो एक दिन हिम्मत कर

: ५२ :

रानी गई
गया ।जा कुसीं
?"है कि श्रीति
या में पहुँचरीर केव
दोनों प्राणोंत और शो
हो; क्योंकिवावृ कि
स्त हैं औरके लिए वे
करूँ ?"

। जिन्दगी

र्क में वदत

हकर अभय

र वह सार

र साँफ़ का

र चल दी।

रानी गई और अभय को चिन्ता के समुद्र में छोड़ गई । वह सोचने लगा कि अखिल मेरे घर में रह रहा है शायद इसीलिए रानी कहती है कि घर वाले भइया के दुश्मन हैं और बाहर वाले दोस्त ! और शतरंजी चालों का क्या मतलब है, यह मैं समझ ही न पाया । मेरी समझ से अखिल एक साधारण इत्सान होते हुए भी एक महामानव है और शारदा इतनी भोली और इतनी गम्भीर कि उसकी तुला पर अन्य नारियाँ पेर रखते ही नीचे झुक जाएँगी और उसका पल्ला भारी रहेगा । काश ! आज को धर्म और जातीयता के बन्धन मनुष्य के सम्मुख न होते तो वह संसार में स्वच्छन्द होकर विवर सकता । जमाना ढोंग और पाखण्ड का है । बनावट ने असलियत का मुँह बन्द कर रखा है । तभी रानी पर प्रतिबन्ध है कि अब वह सयानी हो गई है और उसे घर के बाहर नहीं निकलना चाहिए । यह है बीसवीं सदी की भारतीय संस्कृति ! अब राम-राज्य नहीं, जिसमें लड़कियों के स्वयंवर होते थे और अपनी इच्छानुसार पति का निर्वाचन लड़की स्वयं करके उसके गले में माला डाल देती थी ।

अभय के चिन्तन की डोर इतनी बढ़ गई थी कि समेटे न सिमटती थी । प्यार उससे अपना अनुग्रह चाह रहा था और दुनियावी बन्दिशें अजगर की कुण्डली की भाँति उसको जकड़ रही थीं । वह मन मसोस कर रह गया कि घन है, मान है और उसके साथ सम्मान भी ! पिताजी की अनुपस्थिति में घर का स्वामी भी मैं ही हूँ फिर यह कसक क्यों ? क्या जो उत्तरदायित्व के भार से दबे होते हैं उनका यही हाल होता है ! मैं मुक्त होकर अपने छोटे-से संसार में रानी के साथ नहीं विचर सकता ! कैसी विडम्बना है ! यहाँ पर स्वार्थ मुझ को जीत रहा है । सोचता हूँ, काश ! अखिल मुझे मिला ही न होता तो हमारा बस रहा नया संसार बार-बार वीरानी के भय से काँप न उठता ! रानी शक्ति है और अखिल सहयोग ! सहयोगी भी कभी उपेक्षा का पात्र नहीं हो सकता और शक्ति मनुष्य को प्राणों से भी अधिक प्यारी होती है । दुनिया में सब फल जब आज तक किसी को न मिले तो फिर क्या वे मुझे उपलब्ध हो सकेंगे ?

का पता न था । तीन-चार दिन हुए तब भाभी घर भी गई थीं ।” रानी ने सब एक साँस में ही कह गई और अभय किसी गहन विचार में खो गया ।

अब रानी ने अभय की नस पकड़ ली थी । वह उसके निकट जा कुर्सी के हथ्ये पर दोनों हाथ रख उससे पूछने लगी—“क्या सोच रहे हैं आप ?”

उत्तर में अभय धीरे-धीरे कहने लगा—“रानी, पुरानी कहावत है कि प्रीति में है जीवन जोखों । जब तुम सामने होती हो तो मैं एक नयी दुनिया में पहुँच जाता हूँ और जब दूर होती हो तो यह अनुभव होने लगता है कि शरीर केवल मेरे पास है और मन तुम्हारे पास ! भाई अखिल और भाभी शारदा दोनों प्राणों एकदम देवता हैं, देवता ! उनसे तुम व्यर्थ पचकती हो । पहले की बात और थी, किन्तु अब मार्ग बहुत सुगम हो गया है । तुम जब चाहो आ सकती हो; क्योंकि यहाँ तुम्हारे भाई और भाभी रहते हैं ।”

इस पर रानी छूटते ही बोल उठी—“आप नहीं जानते अभय बाबू कि भइया और भाभी की चालें शतरंजी होती हैं । बाहर वाले उनके दोस्त हैं और घर वाले दुश्मन ! मिनटों में बात माँ तक पहुँचेगी और खामखाह के लिए वे लाल-पीली होंगी । अब आप ही बताइए कि ऐसी स्थिति में मैं क्या करूँ ?”

“सोचूँगा रानी ! क्योंकि बहानों से तो काम चलने का नहीं । जिन्दगी को सच्चाई के साँचे में ढालना होगा । स्वाभाविक आकर्षण सम्पर्क में बदल चुका है और सम्पर्क को चिर-साथ की संज्ञा देनी ही होगी ।” कहकर अभय चुप हो गया और रानी उससे प्रश्न-पर-प्रश्न करती गई, जिनके उत्तर वह सतत लतापूर्वक देता गया । फिर जब तीसरा पहर बीतने पर आया और साँझ का सलोनापन मुखरित होने लगा तो उदास मन रानी वहाँ से घर की ओर चल दी ।

रानी के होंठ विचक गये और वह स्वर को तनिक तीखा करके कहने लगी—“वाह ! खूब है टेंडेंसी आपकी ! अकारण ही कोई किसी को समय नहीं दिया करता !” कहने को तो रानी चौंकाने वाली बात कह गई; लेकिन वह मन-ही-मन डर रही थी कि कहीं यह प्रयोग उल्टा न सिद्ध हो जाय जो अभय मुझ से घृणा करने लगे ।

लेकिन अभय बैधा था स्वाभाविक आकर्षण की डोर में ! वह हँसकर बोला—“अरे तुम नहीं जानती रानी ! कवि का दिल दरिया होता है । अखिल भाई कुमारी से बहुत स्नेह करते हैं !”

“हाँ, स्नेह तो करते ही हैं । इसमें क्या सन्देह ! लेकिन……।”

“लेकिन क्या रानी, तुम कहना क्या चाहती हो ?” अभय अब कुछ चौंक गया था । वह बोला—“तुम कवि पर सन्देह करती हो ! अपने बड़े भाई पर ! तुम्हें तनिक भी संकोच नहीं लगता है, अब समझा कि तुम कुमारी के लिए मुझे इतनी पूछ-पछोर क्यों कर रही थीं ? बस, तुम से और कुछ न कहकर मैं केवल यह कह रहा हूँ कि भविष्य में मुझसे ऐसी बातें न करना ! मैं तुमसे अधिक अखिल को जानता हूँ ।”

रानी के चेहरे का रंग उतर गया । मन में छिपी गुप्त आशंका प्रत्यक्ष आकर साक्षात्कार कर रही थी । अतः वह कुछ नहीं बोली । दाहिने पैर के अँगूठे को फर्श पर रगड़ने लगी और थोड़ी देर उसी अवस्था में बैठी रहकर पश्चात्ताप से भरी हुई घर चली आई ।

इस समय आषाढ़ की धूप तिरछी किरणों में धरती पर पड़ रही थी और हवा गर्म थी; ऐसी जैसे केतली से उठती हुई भाप !

समझ में नहीं आता क्या करूँ ? मैं चाहता हूँ वृक्ष फलता-फूलता रहे और मैं
विहँसती रहे ।

इस तरह की अनेक विचारधारायें उठते-बैठते अभय के मस्तिष्क में चर
रहती थीं और वह सोच नहीं पाता था कि ऐसी स्थिति में वह कौन-सा क
उठाये ।

एक दिन दोपहर के पहले रानी उसके पास आई और कुछ इधर-उधर
वातें करने के बाद कहने लगी—“कल मैं आई थी । लेकिन आप नहीं मिले
एक बात पूछूँ, घुरा तो नहीं मानेंगे आप ?”

सदैव हँसते रहने वाला मुख सुस्त था, उदास था । रानी को सामने
ही उसमें चमक आगई और जीवन भाँकने लगा । वह मुलायम स्वर में बोला—
“घुरा क्यों मानूँगा, पता नहीं तुम इतना क्यों पचकती हो ? जहाँ पर तुम
दूसरे के प्रति विश्वास न हो वहाँ ऐसी बातें खपती हैं ! कहो क्या कहती हो ?”

रानी का आँचल हवा से सरक रहा था, उसको सँवारती हुई उसने आ
दृष्टि अभय पर टिका दी और धीरे-धीरे कहने लगी—“कुमारी को आप कि
लिए नृत्य और संगीत सिखला रहे हैं ? किसी इन्स्टीट्यूट या कालेज में नौकर
करने के लिए अथवा उसकी व्यक्तिगत हाँबी के लिए ?”

“यह कुमारी की रुचि की बात है; इसमें माँ या मेरा किसी का कोई
नहीं । वह संगीत पसंद करती है, उसे अच्छा लगता है इसीलिए सीखती
बाकी नौकरी करने वाली बात तो तुम्हारी एक व्यंग्य मात्र है ! तुम्हें इस
कोई आपत्ति है क्या ?”

अभय की इस दो-टुक बात को सुनकर रानी एकदम संयत हो गई ।
सधी हुई वाणी में बोली—“आपत्ति भला मुझे क्यों होगी ? हाँ, उसकी इम्मान
मन को कुछ खरोंचती जरूर है । मैं देखती हूँ क्या दिन और क्या रात, कुमारी
का अभ्यास ही चलता रहता है और आप तो कहते हैं कि भइया को क
पचास रुपये देते हैं, इसके अतिरिक्त वे आपसे कुछ नहीं लेते । फिर भी क
समय देते हैं कुमारी को !”

“समय देने की बात तो ऐसी है कि घर में ही रहते हैं, कुमारी जब चा
है उन्हें पकड़कर बिठा लेती है ।”

लिये-लिये घूमते फिरो । अभय ने तो तुमसे कुछ कहा नहीं । रानी की छोड़ो, पहले जीवन की ओर लपक रही थी, और अब अभय पर डोरे डाल रही है; उसको बकने दो । जिस दिन वह पहले-पहल मुझसे यहाँ मिली थी तभी मैं समझ गई थी कि यह कुछ करतब यहाँ भी दिखलाएगी । पक्के पुरु की चेली है !”

अखिल अब मौन हो गया था और शारदा स्वयं प्रमोद को लेकर अभय के कमरे की ओर चल दी ।

×

×

×

रानी के जाने के बाद अभय कुर्सी पर ब्रुत बना बैठा रहा । वह न तनिक हिला न डुना । उसे रानी पर क्रोध आ रहा था कि देखो रानी तनिक भी नहीं हिचकी अखिल पर लांछन लगाते । भला ऐसे लोगों का क्या विश्वास ! जो अपने घर की घुराई कर सकता है वह दूसरे को कब छोड़ेगा ! कुमारी के लिए वह अपनी दूसरी सहेलियों से भी कह सकती है कि अखिल दिन-दिन भर उसको नाच और संगीत सिखलाता रहता है । बड़ी शरीर लड़की है ! पहले-दिन जब इसने आकर मुझे अपनी माँ के झूठ बोलने की बात बताई थी तो मैं उसे अपनी हितैषिन समझ विश्वास कर बैठा । लेकिन आज वह अपने असली रूप में आ गई । इसका मुझे क्षोभ है ।

अभय यह सोचते-सोचते उठकर खड़ा हुआ और कमर पर हाथ बाँध टहलने लगा । अब उसके मस्तिष्क में दूसरी बात घूम रही थी कि अखिल आखिर इतना व्यवहार क्यों निभाता है, जो अपने काम का नुकसान करके कुमारी के साथ घण्टों समय दिया करता है ! आखिर वह बाज़ार का काम भी तो करता है, हो सकता है, यह सब वह इसलिये करता हो कि कोठी में रहने का आभार उसे कौंचता हो । वह.....

अभय की विचार-शृङ्खला टूट गई; क्योंकि चौखट पर पड़ी चिक को उठा कर शारदा अन्दर आ रही थी ।

जिस समय रानी अभय से बातें कर रही थी तभी अखिल अभय के पास आ रहा था यह कहने कि प्रमोद को रात से टट्टियाँ आ रही हैं, थोड़ी सी दे दो। लेकिन जब उसने कमरे के अन्दर रानी का बोल सुना तो बाहर ठिठककर खड़ा हो गया। एक-एक करके वह अभय और रानी की सारी बातें सुनता गया और चौंकाता गया। फिर जब रानी बाहर आने को उद्यत हुई वह दबे पाँव वहाँ से चला गया।

अखिल अपने कमरे में जाकर सोचने लगा कि शायद रानी मुझे यहाँ नहीं रहने देगी। कदाचित् उसका भुकाव आजकल अभय पर है तभी वह इस बातें उससे कहने की हिम्मत कर सकी। अभय के विचार सर्वथा अच्छे हैं लेकिन उनमें क्या सन्देह का बीज पनप नहीं सकता? मानव स्वभाव बड़ा विचित्र है, इसको पूरा-पूरा नहीं समझा जा सकता!

अखिल उदास बैठा था। शारदा उससे पूछ रही थी—“दवा ले आये?”

अखिल ने पत्नी के मुख पर दृष्टि डाली और धीरे से बोल उठा—“नहीं।”

“क्यों, क्या अभय बावू मिले नहीं?” शारदा के इस प्रश्न पर अखिल धीरे-धीरे कहने लगा—“वहाँ रानी से अभय की बातें हो रही थीं। प्रसंग में चल रहा था, तभी मैं लौट आया। रानी बड़ी विचित्र लड़की है।”

“कैसा प्रसंग?” शारदा कुछ चौंक उठी।

अखिल ने जो कुछ सुना था पत्नी को बता दिया और फिर बोला—“कौन सी बात यह है शारदा कि घर वाले जहाँ भी मिलेंगे, खलेंगे ही। आजकल का जादू अभय पर चल रहा है, इसलिये हम लोगों को अपना बोरिया-बन्धा बांधे बिल्कुल तैयार रहना चाहिए, ताकि चिनगारी शोला बनकर भड़के पहले ही हम लोग यहाँ से कूच कर दें।”

शारदा पति की बातें सुनकर अभय की प्रशंसा करती हुई बोली—“उसके कहने से क्या होता है; इस तरह चिलुग्रों के डर से कथरी छोड़ते रहोगे तो काम चलेगा! कच्ची गृहस्थी है, छोटे-छोटे बच्चे हैं; रोज़-रोज़ नटों जैसे

रानी पर क्रोध था, उसके प्रति घृणा थी और अखिल के प्रति न जाने क्या-क्या जिसे वह सोच नहीं पाता था ।

एक दिन रात के पहले पहर में जब आँगन में सावन की रिमरिमि भड़ी लगी हुई थी, वूँदें स्वर्ग से उतरकर धरती को चूम रही थीं, तब अखिल एक रफ डिजाइन पर पेंसिल फेरता हुआ टेबिल-लैम्प के पास बैठा कह रहा था— “शारदा, बोल अब बहुत भारी हो रहा है । लगता है इस पहाड़ के नीचे तुम दब जाओगी, बच्चे पिस जायेंगे और मैं मिट जाऊँगा ! रानी उस दिन के बाद आज तक फिर नहीं आई । अभय की खामोशी पता नहीं किस बात की सूचक है । उसकी गतिविधि और व्यवहार मानो सो जैसे गये हैं । ऐसी स्थिति में मैं अब यहाँ टिकना नहीं चाहता । जब तक मान रहे तब तक अच्छा है और अपमानित होने के पहले ही मुँह मोड़ लेना कहीं अधिक सुन्दर होता है । मैं सोचता हूँ कि हमें जल्दी ही इस पर विचार कर लेना चाहिये ।”

“तो क्या कहना चाहते हो तुम, कि यहाँ से भी चल दोगे ? न किसी ने कुछ कहा और न किसी ने सुना । अपने आप ही दुनिया भर के मतलब निकाल रहे हो । बरसात का महीना है, छोटे-छोटे बच्चे लेकर कहाँ भटकोगे ?”

शारदा के मुँह से यह भीरु बात सुनकर अखिल गम्भीर स्वर में बोला— “इन्सान जिन्दगी भर भटकता ही रहता है, शायद वह इसीलिये पैदा होता है । कैसे-कैसे मौके जीवन में आयेंगे कोई नहीं जानता ! देश के बँटवारे में हमारी ही तरह असंख्य परिवार परोसी थाली छोड़-छोड़कर, जिन्दगी को हथेली पर रखकर भाग निकले थे । तो क्या हम नहीं कहीं सिर छुपा सकते हैं ! मुझे अपने वाजुओं का बल चाहिए शारदा ! मैं किसी का अनुदान नहीं चाहता । कहीं भी रहूँ, खाने भर को जरूर कमा लूँगा ! और तुम्हारी दृष्टि क्या इतनी मोटी हो गई है जो घर में किसी का रुख नहीं पहचान पाती हो ? क्या अभय को तुम देखती नहीं हो ?”

शारदा ने पति को कोई जवाब नहीं दिया । वह उदास मुख उसकी ओर देखने लगी । बाहर हवा झकोरे ले रही थी । उसके भोके बार-बार अपने साथ वूँदों की बौछार कमरे में फेंक-फेंक जाते । शारदा उठी और उसने दोनों खिड़कियाँ बन्द कर दीं । फिर वह अखिल की मेज के पास आकर खड़ी हो गई ।

रानी कई दिन हो गये अभय के पास नहीं आई जिससे वह समझ गया कि रानी या तो मुझसे कुछ सहम गई है अथवा नाराज हो गई या फिर उसे मुझ की खानी पड़ी है, तभी नहीं आई। लेकिन अभय को उस दिन के बाद फिर शान्ति नहीं मिली। दिन-रात उलझन ही बनी रहती थी।

आखिर उसके मन का कीड़ा नहीं माना। वह रेंगता ही गया। वह अभ्यास के समय अखिल और कुमारी के पास जाकर बैठ जाता। लेकिन वह बैठना केवल थोड़ी ही देर का होता। अभय का मन निर्मल था। कुमारी की सरलता और अखिल की सादगी उसके मन के सन्देह को लेकर दूर खेती और वह उठकर चला आता।

किन्तु अखिल पर इसका प्रभाव दूसरे अंशों में पड़ रहा था। वह अन्तः सोचा करता कि अभय जब भी आता था देर तक बैठता था और मुझसे बोल किये बिना नहीं जाता था। इधर वह दो-तीन दिन आया और दो मिनट नहीं और चल दिया। दो दिन हो गये वह बिल्कुल नहीं आया, शायद उसके मन में रानी की बात पैठती नजर आ रही है। वह मुझसे खिंचा-खिंचा-सा मालूम होता है। इसके क्या अर्थ निकालूँ !

अखिल की यह गतिविधि थी और शारदा उस दिन से कुछ चौंक-सी थी, जब रानी ने उस पर अभय की कोठी में आकर प्रहार का तीर छोड़ा था वह भी देख रही थी अभय को हमेशा अकुलाया सा। माँ रेणुका के समान अभय का यह बहाना था कि अध्ययन के आधिक्य से सिर-दर्द हो रहा है, बाल कल पढ़ना बिल्कुल बन्द कर रखा है, दवा ले रहा हूँ। और कुमारी भी चुचकाई-चुचकाई सी दृष्टिगोचर हो रही थी कि अखिल की हँसी अब उल्टी अंपनी नहीं बल्कि जबर्दस्ती की है। पता नहीं कौन-सी अनहोनी घटना होगई कवि के मन पर चोट कर रही है। ऐसे ही वह देखती थी भाई अभय जिसकी एकदम भूख-प्यास ही हर गई थी।

यह सब ले-देकर अभय वास्तव में अपना सन्तुलन ही खो बैठा था।

अपनी गहरी दृष्टि डाल अफसोस प्रकट कर कहने लगी — “क्यों गंगा, तुम कोठी के दरवान हो और बाहर से लेकर भीतर तक के जिम्मेदार ! तुम सोते रहे और अखिल चला गया और महाराजिन, तुम्हें तो रात में नींद ही नहीं आती है । कहती हो खाँसी सोने ही नहीं देती । तुम भी नहीं जान पाई कि किस समय वे लोग कोठी से बाहर हो गये !”

भृत्य और भृत्या दोनों की दृष्टि फर्श पर बिछ रही थी । उनकी वाणी मूक थी । लगता था कि कसूरवार वे ही हैं जो अपनी जिम्मेदारी का अन्जाम नहीं दे सके ।

अभय आगे बढ़ा । कमरे में पहले का सामान सब यथास्थान था; केवल वही सामान दम्पति अपने साथ ले गये थे जिसको लेकर वे पहले घर के बाहर आये थे ।

कुमारी की आँखें भरी हुई थीं । वह अभय के पास आकर बोली — “क्यों भइया, अखिल बाबू क्यों चले गये ? कहाँ गये कुछ बताया भी नहीं ?”

इस समय अभय उसी कुर्सी पर बैठा था जिस पर बैठकर शिल्पी की तूलिका चलती थी । टेबिल-लैम्प के पास कुछ कागज बिखरे पड़े थे । उसने कुमारी की ओर देखा और बिना कुछ जवाब दिये ही रफ़ डिज़ाइनों के अस्त-व्यस्त अंशों को देखने लगा ।

किन्तु यह क्या ? अभय एकदम चौंक उठा । टेबिल-लैम्प के नीचे एक लम्बा-सा कागज दबा था, जिसमें आरम्भ की पंक्ति लिखी थी — “प्रिय अभय !”

अभय के हाथ कांपने लगे । हृदय की धड़कन दूनी हो गई । पत्र उसने हाथों में थाम लिया और माँ के पास जा टूटे-फूटे स्वर में पढ़ने लगा — “मैंने यही उचित समझा कि ऐसा सोना न पहनूँ जिससे कान फट जायें । तुम स्वयं समझदार हो । तुमने मन में चाहे जो रखा हो लेकिन मुँह पर कुछ नहीं कहा । इसकी मुझे प्रसन्नता है । समझदार को इशारा काफी होता है, वही मैंने किया । अब मैं दिल्ली से बहुत दूर जा रहा हूँ जहाँ न कोई स्वजन होगा, न परिजन ! कुमारी के लिए कोई दूसरा निर्देशक नियुक्त कर लेना । मेरे रहने पर यहाँ प्रनेक बाधाएँ थीं । ससुराल वाले मुँह बिचकाते थे और घर वाले बहुत

चित्र बन रहा था एक संन्यासी का। वह उसकी ओर निहारने लगी और अखिल काम से मन हटा, पेंसिल होठों से लगा, उससे पिछले प्रसंग पर प्रश्न करने लगा। और जब शारदा दो-एक बातों का जवाब दे पाई तो वह फिर उसे समझाने लगा कि हर हालत में, हमें यह कोठी जल्दी ही छोड़ देनी चाहिए।

: ५५ :

आषाढ़ अभी आधा ही बीता था लेकिन वर्षा की प्रगति अच्छी थी। नित घट-एँ उठतीं और रुई के पहल जैसे बादल यत्र-तत्र डोलते फिरते। उनके रंगों में परिवर्तन होता—भूरे, लाल, पीले ! और जब बरसने को हो जाते तो सबेरे सब असित बन गगन पर छा जाते और बरसकर चले जाते। इस भाँति मोन जितना अनुकूल था, अखिल का सन्तुलन उतना ही उसके प्रतिकूल। कई दिनों तक वह स्वयं सोचता रहा, शारदा की सलाह लेता रहा; लेकिन किसी भी तर्क पर नहीं पहुँच पाया।

आखिर एक दिन वह आ गया जब कमरा खाली पड़ा था और कुमारी चौंकती हुई अभय को बतला रही थी—“भइया ! अखिल का कमरा खाली है न उसमें भाभी शारदा हैं न उनकी आवश्यक सामग्री और न ही बच्चे !”

अभय के पैरों के नीचे से जमीन निकल गई। वह शिल्पी के कमरे की ओर भागा। तब तक माँ रेणुका भी वहाँ पहुँच चुकी थीं।

आकाश पर आज मुँह-अंधेरे से ही काले बादल छाये थे, हल्की-हल्की बूँदा-बाँदी हो रही थी और मानसून मस्त लहरियों में मचल रहा था। तब बज गये थे और लगता था कि जैसे अभी पौ ही फटी है। गंगा और महाराजिन रेणुका के आदेश पर कोठी भर में इधर से उधर फिर रहे थे। दोनों डरते-डरते मालकिन के सामने आ खड़े हुये। तब रेणुका अभय पर

धूप ! ग्रीन फोर्ड कार नगर के प्रमुख पथ दरियागंज रोड पर भाग रही थी । उसमें बैठी थी कोमल-वदना कुमारी और ड्राइवर के स्थान पर अभय ।

दोनों भाई-बहन जब कार से उतरकर कोठी में प्रवेश कर रहे थे तो उसके प्रमुख द्वार पर अन्दर जाती हुई रंजना की ओर उनकी दृष्टि गई । उसके साथ गोपेश भी था

कुमारी सोचने लगी कि रंजना को अब क्या जवाब दिया जायेगा और अभय के मस्तिष्क में इस विचार ने जन्म ले लिया कि रंजना आ गई है चलो इसी बहाने अखिल के घर और ससुराल में खबर हो जायेगी कि वह मेरे यहाँ से भी चला गया । दोनों रंजना के पीछे-पीछे चलने लगे और रंजना अखिल के कमरे की ओर जा रही थी कि मार्ग में मिल गई बूढ़ी महाराजिन । उसे देखते ही वह बोल उठी—“आओ बिटिया रंजना ! तुम्हारी बहन और बहनोई तो रात को कहीं चले गये । तुम्हारे घर तो गये न होंगे ?”

“अय्य, क्या कहा, चले गये ! कहाँ ? किसी को कुछ बताया भी नहीं !” रंजना अवाक् हो महाराजिन की ओर देखने लगी ।

इतने में वहाँ आ गई रेणुका । आते हुए उसने दोनों की बातें सुनी थीं । उत्तर में वह कहने लग गई—“किसी को नहीं बताया बेटी, एक पत्र मिला है, उसमें लिखा है कि मेरा यहाँ रहना न घर वालों को अच्छा लगता है और न ससुराल वालों को । वे समझते हैं कि मैं अभय की दया पर जी रहा हूँ । इसलिए मैं अब यह शहर छोड़ देने का निश्चय कर कहीं दूर जा रहा हूँ ।”

रंजना उदास हो गई । उसकी दृष्टि देर तक रेणुका के मुख पर टिकी रही, फिर जब कुछ संयत हुई तो देखा कुमारी और अभय उसके पीछे खड़े हैं । वह मौन रही और कुमारी उससे पूछने लगी—“तो अखिल बाबू अपने घर भी नहीं गये होंगे, शायद वे हम सब लोगों से कुछ असन्तुष्ट हो गये हैं तभी चले गये । आओ रंजना ! बैठो चलकर, खड़ी कब तक रहोगी ?”

यंत्र-चालित-सी रंजना कुमारी के पीछे-पीछे चली गई । थोड़ी देर तक वह उसके पास बैठी और फिर अपने घर चली आई ।

×

×

×

रंजना ने आकर अपने घर में अखिल के चले जाने वाली बात कही तो

ही रुष्ट थे कि मैं कोठी में पड़ा तुम्हारी दया का पात्र बन हराम की रोशनी तोड़ रहा हूँ । क्षमा करना मित्र ! मैं तुम्हारे योग्य नहीं था । प्रत्यक्ष और परोक्ष में यदि कोई भूल मुझसे हो गई हो तो उसे भी तुम भूल जाओगे, अभय ! यही आशा करता हूँ ! बस, अब विदा चाहता हूँ, यदि भविष्य में मिल सका तो सहर्ष तुम्हारा अनुग्रह लूँगा और यदि न मिल सका तो हरि इच्छा !”

इसके बाद पत्र में पत्र-प्रणाली के अनुसार अन्तिम शब्दों में रेणुका को प्रणाम लिखा था और कुमारी को स्नेह तथा आशीर्वाद ।

सबके सब सत्राटे में आ गये और रेणुका पत्र अपने हाथ में ले, अभय के पूछने लगी—“क्यों अभय ! क्या तुमने कुछ कहा था अखिल से ?”

अभय तत्क्षण ही बात को बनाकर बोल उठा—“नहीं माँ ! बात असल में यह थी कि अखिल का पता सबको चल गया था, जिससे शायद उसने कुछ अशान्ति का अनुभव किया और इसीलिए बिना बताए ही चला गया ।”

बात बन गई । कुमारी और रेणुका दोनों ही नहीं समझ पाईं कि इस नाटक का सूत्रपात करने वाली नटी रानी थी । यवनिका पतित हो गई थी और अभय के मस्तिष्क में इतनी कटुता भर गई थी कि यदि उस समय उसे रानी मिल जाती तो वह उसका गला घोट देता ।

सारी कोठी नीरवता से भर रही थी । आसमान पर अंधेरा भुक्ता आ रहा था जो अब मूसलाधार वृष्टि के साथ धरती पर उतर उससे आलिंगन कर रहा था ।

: ५६ :

मध्याह्न बेला में बादल छँट गये और अपनी तीखी रश्मियों में दिवाली चमकने लगा । अब लगता था कि गजब की गर्मी है और बरसात की चिन्ता

इस तरह जितने भी सम्बन्धी और अपने थे कोई कुछ सोच रहा था और कोई कुछ ! पता लगाने का या शहर की खाक छानने का इस बार इसलिए किसी ने प्रयत्न नहीं किया कि प्रायः सभी की यह धारणा थी कि अखिल अब वहीं शहर से बाहर ही चला गया है । उसके लिये भटकना व्यर्थ होगा !

: ५७ :

धीरे-धीरे दो सप्ताह बीत गये और किसी ने भी अखिल के विषय में कुछ नहीं सुना । रंजना का मन अर्हन्ति अपनी वहन की ओर लगा रहता था । वह सोचती, काश ! दीदी यहाँ होतीं तो अब नी बार सावन में तीज-त्यौहार के दिन उनके साथ भूला भूलती ।

रंजना बहुत दुःखी थी । उसका मन कह रहा था कि शायद अब जीजा जी जल्दी वापस नहीं आयेगे । वे खूब छक चुके हैं अपने समुदाय से । अगान्ति ने अभय के औदार्य को भी कोई महत्व नहीं दिया और वे शान्ति की खोज में निकल पड़े ।

इस साल पानी अच्छा था । वर्षा होती ही रहती थी । तीन दिन से बराबर बूँदों की झड़ी लगी थी । सूरज के दर्शन नहीं हुये थे । आँगन में नल के पास इतनी काई जम गई थी कि बहुत सम्हलकर पैर रखने पर भी पैर फिसल जाता था । रंजना पानी से भरी बाल्टी उठाकर रसोई की ओर जा रही थी कि उसके दोनों पैर फिसले । वह रपट पड़ी । बाल्टी का कड़ा उसकी कमर के नीचे था और दाहिने हाथ की कुहनी हरी-हरी काई पर । वह जोर से चीख पड़ी और उसकी कुहनी तथा कमर से खून की धार बह चली । “क्या हुआ ?” कहती हुई घबड़ाई फूलमती उसके पास आ गई । लेकिन खून देखकर उसे चक्कर आ गया और वह वहीं पर गिर पड़ी ।

गोपेश रोता हुआ बाप के पास गया और उँगली पकड़कर उनको अन्दर

वहाँ एकदम सन्नाटा-सा छा गया । घर में दिन भर अखिल और शारदा को ही चर्चा चलती रही और रात को जब चन्द्रभान बाबू दफ्तर से आ गये तो गयाप्रसाद ने जाकर उनको यह समाचार सुनाया ।

दोनों घरों में अखिल की ही चर्चा चल रही थी और रानी सोच रही थी मालूम होता है कि मेरे कहने का प्रभाव अभय पर कुछ जरूर पड़ा । उस समय मुझ पर तो वह बहुत बिगड़ा था; लेकिन फिर वाद में सोचा होगा । उसी ने घुमा-फिराकर कुछ कहा होगा भइया से तभी वे स्वतः चले गये । अच्छा हुआ, अभय कितने दिन नाराज रहेगा ? कुछ दिन और बीत जायें फिर मैं उससे मिलूंगी ! वह अगर कुछ क्रोधावेश में कहेगा भी तो मैं हँसती रहूँगी ! रास्ते का रोड़ा तो हटा !

रानी इसी तरह अपने में सन्तुष्ट थी और सुभद्रा भी मन ही मन बहुत प्रसन्न ! लेकिन चन्द्रभान बाबू का हृदय भरा हुआ था कि कहाँ भटक रहा होगा अखिल अपने नन्हें-नन्हें बच्चों के साथ ।

निखिल में इस घटना से कोई परिवर्तन नहीं हुआ । वह न तब सन्तुष्ट था और न अब !

किन्तु गयाप्रसाद के घर में हलचल मच रही थी । फूलमती और गयाप्रसाद यह सोच रहे थे कि बड़ी मुश्किल से पहली बार पता चला था, तब यह आशा की थी कि माघ में रंजना का ब्याह निश्चित रूप से हो जायेगा । मगर फिर वही पुरानी समस्या सामने है, पता नहीं अखिल कहाँ गया होगा ?

फूलमती जब अधिक दुःख से भर आती तो यह कहने लगती कि समझी जी ने निखिल को भेजा था बुलाने के लिए, अगर वे बुलाने गये होते तो वह क्यों नहीं आता । जब माँ दूसरी होती है तो बाप का व्यवहार भी गैर जैसा हो जाता है । मेरी लड़की का नसीब अगर खराब न होता तो ऐसे घर में उसका ब्याह ही क्यों होता !

रंजना के सोचने का ढंग कुछ और था । उसका ख्याल था कि अवश्य कोई न-कोई गुप्त घटना ऐसी घटी है जिसका आभास सब को नहीं है । इसी लिए जीजा जी चले गये । नहीं तो उनकी बातों से यह मालूम होता था कि अभय की कोठी में उनका मन लगता है और वे अब वहाँ से नहीं जायेंगे ।

: ५८ :

शुभ समाचार लोगों तक देर में पहुँचते हैं; लेकिन अशुभ पंख लगाकर सबके पास उड़ जाते हैं । सारे मुहल्ले में चर्चा फैल गई कि आज रंजना रपट पड़ी तो उसकी बाँह उखड़ गई और अब अस्पताल में पड़ी है । सुभद्रा यह समाचार सुन दुनियादारी करने के लिए रानी के साथ अस्पताल जाकर उसको दो एक बार देख आई ।

पता अभय और कुमारी को मिला । वे लोग भी एक दिन उससे सहानुभूति प्रकट करने आये थे ।

लेकिन जीवन ने जब अचानक रंजना के आहत होने की बात सुनी तो उसका हृदय बैठ गया । उसे न जाने कैसा-कैसा लगने लगा कि यह रंजना का नहीं, बल्कि उसका दुर्भाग्य है कि रंजना पर अचानक आपत्ति आ पड़ी । गया-प्रसाद बाबू की तरफ से ब्याह की तिथि इसलिये टाली गयी थी कि अखिल का पता चल जाय । इस पर पिता जी बहुत नाराज हुए थे और अब भी हैं । लेकिन दैवी गति को कौन जानता है कि एक क्षण में ही क्या हो जायेगा । मान लो उस समय गयाप्रसाद बाबू के मुहूर्त आगे बढ़ाने के प्रस्ताव के पूर्व ही यह दुर्घटना घट जाती तब पिता जी सन्तोष कर लेते । मैं रंजना के सम्पर्क में आने के लिए जितना व्यग्र और आकुल था, उतना ही विलम्ब विधि ने सामने रख दिया है । सुना है हाथ उखड़ गया है और कमर की हड्डी में फ्रैक्चर हो गया है । जाऊँ देखूँ, क्या हाल है उसका !

पाँच बजे के बाद जीवन रंजना के पास पहुँचा । यह उसने इसलिए किया था कि गयाप्रसाद और फूलमती के सामने वह उसके पास आने में संकोच करता था । तभी यह सोचकर कि घर वाले चले गये होंगे, सबको वापस जाते देखकर आया था ।

रंजना से जीवन की थोड़ी देर तक चोट के सम्बन्ध की बात चलती रही । फिर एकाएक जीवन के मुँह से निकल गया—“ईश्वर की लीला देखो रंजना, अखिल भाई फिर कहीं चले गये और इस बार वे शहर में नहीं रहेंगे यह लिख-

लिवा लाया । रंजना भी अचेतनावस्था को प्राप्त हो गई थी । गयाप्रसाद ने उसको सम्हालकर उठाया और जल्दी से अस्पताल की ओर भागे ।

वहाँ पता चला कि दाहिनी बाँह की हड्डी उखड़ गई है और कमर की हड्डी भी मोच से कुछ फट गई है । वे रंजना को अस्पताल में छोड़ घर आये । फूलमती आँसू बहाती हुई नल के नीचे पड़ा खून धो रही थी ।

गयाप्रसाद ने पत्नी को रंजना का हाल बतलाया । दम्पति अस्पताल पहुँचे । वहाँ रंजना अब आँखें खोले छत की ओर ताक रही थी । उसका हाथ पट्टियों के सहारे एक मशीन पर टँगा था और ऐसे ही कटि-प्रदेश स्प्रिंगदार गद्दे पर रुई के पहलों पर टिका था ।

फूलमती पुत्री की यह हालत देखकर फूट-फूटकर रो पड़ी । लेकिन गयाप्रसाद ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया और धीरे से भर्त्सना करते हुए कहा—“हुश, यह क्या करती हो ! समाई रखो, यह घर नहीं, अस्पताल है ।”

फूलमती की साँस जहाँ की तहाँ रह गई । वह आँसू बहाती हुई रंजना के पलंग के पास आकर खड़ी हो गई ।

माँ को रोते देख रंजना असह्य पीड़ा को दाव क्षीण कण्ठ से मुस्कराने का प्रयत्न करती हुई बोली—“क्यों रोती हो माँ ! चोट कोई अधिक नहीं लगी, जल्दी ही ठीक हो जाऊँगी !”

अब फूलमती के हाथ आँचल से आँसू पोंछने लगे । फिर वहीं स्तूल पर बैठ वह उससे बातें करने लगी ।

यह जनरल वार्ड था । रोगियों की चारपाइयाँ पंक्ति-बद्ध थीं । सफेद वर्दी धारण किये नर्स इधर से उधर डोल रही थीं और स्टाफ नर्स वार्ड के बीचों-बीच पड़ी मेज के सामने कुर्सी पर बैठी थी । उसकी दृष्टि देर से रंजना, फूलमती और गयाप्रसाद की ओर केन्द्रित थी । अभी दिन के बारह बजे थे और मरीजों से मिलने का समय था सायं चार से छः बजे तक । उसने एक नर्स को संकेत से पास धुलाया और उससे कहा—“बेड नम्बर दस के पास ये लोग बहुत देर से बैठे हैं । इनसे कह दो जायँ, मिलने का समय चार बजे का है ।”

तब फूलमती और गयाप्रसाद नर्स द्वारा कहे जाने पर विवश होकर बाहर चले आये ।

सपना साकार हो सकेगा ।

घर पहुँचने पर भी जीवन के मन से अखिल का ध्यान नहीं उतरा । वह उसी के प्रति उधेड़-धुन में लगा रहा ।

: ५६ :

दिल्ली से आकर अखिल ने मथुरा में साँस ली । वह होली दरवाजे की एक धर्मशाला में आकर ठहर गया । उसके पास इस समय लगभग पचास रुपये थे । अतः मथुरा जैसे छोटे शहर में किराये पर एक कमरा मिल जाना उसे बहुत सुलभ हो गया । पन्द्रह रुपये मासिक पर एक कमरा ले वह विश्राम घाट की तंग गली में रहने लगा ।

अब काम के प्रसार की बात थी । नया बाजार था, नये प्रकाशक थे । सबसे सम्बन्ध बनाना यह अखिल का सबसे पहला काम था । लेकिन मथुरा हिन्दी का वह गढ़ नहीं था, जहाँ पर उच्चकोटि के प्रकाशक होते । अधिकांश रामायण, महाभारत, भजन और किस्से-कहानियों के छापने वालों और बेचने वालों का केन्द्र था । मथुरा का ऐतिहासिक महत्व उतना नहीं जितना धार्मिक है । इसी लिए वहाँ पर धार्मिक साहित्य अधिक खपता था । उसी की माँग थी और उसी का प्रचार । यहाँ पर अखिल को अपनी चित्रकला में नये-नये प्रयोग करने की सन्धि नहीं थी । प्रकाशक बहुत कम पैसे देकर उससे सस्ते चित्र बनवाते जिनमें उसकी अरुचि थी ।

विवश होकर अखिल यह सब करता । लेकिन डिजाइनों के काम में पचास रुपये से अधिक मासिक आय की आशा नहीं थी । उसका ध्यान कविताओं और लघुकथाओं की ओर गया । बराबर वह पत्र-पत्रिकाओं में अपनी रचनाएँ भेजता रहता । उनमें से बहुत-सी सधन्यवाद वापस लौट आती और जो छपतीं

कर छोड़ गये हैं ।”

रंजना का मुख उदास हो गया । वह धीरे-धीरे कहने लगी—“क्या बताइए, तकदीर के खेल निराले होते हैं ! पता नहीं कहाँ होंगे इस बार ?”

जीवन रंजना को दुखी देखकर समवेदना से भर आया और आश्वासन में स्वर में कहने लगा—“मैं भी विवश हूँ रंजना, क्या करूँ ! अगर कहीं तनिका भी सूराख लगता तो मैं उन्हें सिर-आँखों पर उठकर ले आता । काश ! किन्ना भाँति उनका पता लग जाता तो बहुत अच्छा होता ।”

रंजना अत्यन्त क्षोभ से भर आई और कहने लगी—“जीजा जी को सांसारिक बन्धन बिल्कुल पसन्द नहीं हैं, वे भ्रमलों से दूर भागते हैं । वे जब तक गुप्त रहे, इसी शहर में रहे और शान्ति से रहे । लेकिन प्रकट होने पर अशान्ति ने शायद, फिर उन्हें विवश कर दिया । तभी वे हम लोगों से दूर हो गये । देखो, कल क्या होता है ! आशा पर दुनिया जीवित है । हमें भी निराश नहीं होना चाहिये । यदि हम लोगों की लगन में बल है और दीदी तथा बच्चों का सौभाग्य है, तो वे एक दिन अवश्य मिलेंगे ।”

इसी प्रसंग पर जीवन और रंजना की बातें देर तक होती रहीं । मित्रा का समय समाप्त हो चुका था । वार्ड की घण्टी बज रही थी और जीवन उदास मन, रंजना से यह कहता हुआ जा रहा था—“अच्छा रंजना ! अब चलता हूँ, कल फिर भेंट होगी ।”

जीवन जब अस्पताल के बाहर आया तो उसके मन में यह बात घूम रही थी कि अखिल का पता लगाना आवश्यक है, नहीं तो अगली सहालगी में बाधा पड़ेगी । रंजना के माँ-बाप यह कभी नहीं पसन्द करेंगे कि उनकी बड़ी लड़की घर में न हो और रंजना का व्याह हो जाय । पिता जी को फिर विगड़ का मौका मिलेगा और हो सकता है कि खीझकर वे कोई दूसरा सम्बन्ध बन कर लें । इधर जब वह आगया था तो मुझे तसल्ली हो गई थी कि अब अखिल अभय की कोठी से कहीं नहीं जायेगा । उस बीच में उससे दो-एक बार मित्रा भी तो उसने अपने को पूर्णतया सन्तुष्ट बतलाया था । फिर क्या बात हो गई जो अचानक चला गया । काश ! अखिल दुनिया के किसी भी पर्दे पर हो, प्रकट हो जाय, मैं उसका दामन पकड़कर उसको खींच लाऊँगा । तभी मेरा सुनना

उतना ही जितना भाग्य में बदा है ।

इस पर अखिल धीरे से हँस देता और कहने लगता—“पुरुषार्थ ही मनुष्य का जीवन है और जिन्दगी हँसने के लिये है, रोने के लिए नहीं । परिश्रम से ही प्राप्ति है शारदा ! तनिक मन को मजबूत रखो । धीरे-धीरे सब सुधर जायेगा ।”

इस प्रकार दम्पति एक-दूसरे का इतना ध्यान रखते थे कि जहाँ शारदा पति के अथक परिश्रम को देख, चिन्ता में पड़ जाती थी, वहाँ पत्नी के मुख पर तनिक भी उदासी देख अखिल का मन उछलने-झूबने लगता था । ऐसी स्थिति में वह उसे हँसाने का प्रयत्न करता हुआ कह देता कि शारदा, तुम एकदम मोम हो और मोम तो केवल पिघलना ही जानता है । तुम अपने को स्थिर क्यों नहीं रख पातीं । मैं जानता हूँ कि दिल्ली से एकाएक चले आने का तुम्हें बहुत दुख का वेल बन रहा है । लेकिन सोचो तो कि तुम अशान्ति से कितनी दूर चली आईं । शान्ति में समें शिशुओं का स्वर्ग है और अशान्ति में नर्क ! फिर पता नहीं तुम मन को क्यों छोटा करती हो ।

शारदा तब अनायास ही मुस्कराकर कह देती—“कहाँ मन छोटा करती हो ! तुम तो बस ऐसे ही कहा करते हो ।”

दम्पति इस पर हँस पड़ते और उस हँसी से वह छोटा-सा परिवार स्वर्ग प्रतीत होने लगता ।

: ६० :

अब समय बहुत बीत चुका था । एक दिन रानी ने निश्चय किया कि वह समय से मिलने जायेगी । और उसी दिन वह अभय के पास पहुँच चुपचाप खड़ी हुई । अभय ने उसकी ओर देखा, फिर उपेक्षापूर्वक अपना मुँह घुमा लिया । वह खड़ी की खड़ी ही रही ।

उनमें से कुछ ऐसे पत्र-पत्रिका थे जो पारिश्रमिक के रूप में उसे कुछ थोड़े-से भेज देते ।

मथुरा में सांस्कृतिक गहराई न हो, ऐसा नहीं । साहित्य-प्रेमियों की पुट कई परिपदें थीं, जिनमें यदि एक दिग्गज था तो बाकी अधकचरे । परिपदों की बैठकों में अखिल को आमन्त्रित किया जाता, विषय के अनुसार उसका वक्तव्य होता । किन्तु बाह-बाही और कोरी प्रतिष्ठा के अतिरिक्त और कुछ भी प्राप्त नहीं होता ।

नगर में आये-दिन छोटे-मोटे कवि-सम्मेलन कभी यहाँ और कभी वहाँ रहते थे । उन सबमें अखिल को निमन्त्रित किया जाता, लेकिन पारिश्रमिक भी नहीं मिलता । कभी भूले-भटके ऐसे मौके पर अध्यक्ष महोदय अधिक हो जाते तो दस-पाँच रुपये वे अखिल को दे डालते थे ।

यह स्थिति थी अखिल की मथुरा में । वह बिना सींग का बेल बन जाविकोपार्जन कर रहा था । साथ में थी कच्ची गृहस्थी । जिसमें शिशुओं की आवश्यकताएँ प्रधान थीं ।

बहुत ही कष्टमय के साथ घर की गाड़ी चल रही थी । शारदा चिन्तित थी । लेकिन कवि उसको यह कहकर आश्वासन देता रहता था कि फेर बाँधने में देर लगती है शारदा, और फिर बिगड़ा फेर ! वह तो उस देर में बनता है ।

आषाढ़ बीत गया था और अब सावन भी आधा होने जा रहा था । अर्हन्तिश चिन्ताओं में खोई रहती कि मथुरा परदेश है, यहाँ पर कौन सभी अपरिचित हैं । मुझे बड़ा भय लगता है कि वे दिन-दिन भर बाजार भटकते हैं और रात-रात भर जागरण कर काम में जुटे रहते हैं । फिर पहले वाली स्थिति न हो जाय जो उनको चारपाई की शरण लेनी पड़े दिल्ली में सभी अपने थे । मैं कहीं भी रहती; लेकिन एक निश्चिन्तता भी रहती थी । यहाँ की गलियाँ और यहाँ के घर सभी बेगाने हैं ।

शारदा पति को हमेशा चिन्ताओं से मुक्त रखने का भरसक प्रयत्न रहती और दिन-रात टोकती रहती कि काया राखे धर्म है । इतनी मेहनत करते हो ? उतना काम करो जितना मन और शरीर के बश का हो !

उसी दिन क्यों नहीं गये । उसके कई दिन बाद जाने का कारण कुछ और भी तो हो सकता है ? सोच लीजिए, आप मुझ पर रुष्ट हैं इसीलिये पक्ष के बदले विपक्षी भावनाएँ आप से ऐसा कहला रही हैं ।”

अभय रानी की इस बात पर बहुत खीझ उठा । वह क्रोधित होकर बोला — “रानी ! बनाने की कोशिश मत करो, जो सत्य है उसे कोई झुठला नहीं सकता । मैं तब तक तुम्हारा आदर करता रहा जब तक यह जानता रहा कि तुम मुझसे सच बोलती हो । लेकिन तुम्हारी चालों का जब पता लगा तब से यह स्थिति हो गई है कि मैं तुम्हारी सूरत भी नहीं देखना चाहता । बस, अब तुम जाओ ! मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ ।”

रानी मूर्तिवत् खड़ी रही और अभय दोनों होंठ दाँतों से चबाता हुआ उसकी ओर देखकर कहने लगा — “रानी ! जाओ कुमारी आती ही होगी । मेरे जाने का समय हो रहा है ।”

रानी इस पर भी खड़ी ही रही । तब अभय ऊबकर बाहर जाते हुए बोल उठा — “अच्छा; मैं जा रहा हूँ ।”

“कहाँ जा रहे हो अभय ? कुमारी तो अभी कपड़े ही बदल रही है !” यह कहते-हुये माँ रेणुका ने कमरे की चौखट पर पैर रखा । दोनों माँ-बेटे वहीं ठिठक गये । अभय ने तत्क्षण ही स्थिति को सम्हाल लिया । वह हँसकर बोला — “रानी अभी आई और कुमारी को पूछ रही थी, वही कह रहा था मैं कि वह तैयार होकर आ रही है, देर बहुत कर-दी मैं जाता हूँ ।”

“अच्छा !” कहकर हँसती हुई रेणुका रानी के पास जाकर कौच पर बैठ गई और स्नेह भरी वाणी में बोली — “आओ, बेटा रानी ! बैठो, कुमारी अभी आती है ।”

इसके बाद कुमारी आई । शिष्टाचार का प्रदर्शन हुआ । रानी वहाँ से जान बचाकर भाग जाना चाहती थी । लेकिन अवसर दुनियादारी का था इसलिए थोड़ी देर रुकी । वह घर आना चाहती थी और कुमारी आग्रह कर रही थी कि चलो आज राजघाट चलें । बापू की समाधि पर मैं बहुत दिन से नहीं गई ।

किन्तु रानी अपनी ही जिद पर रही कि रात हो जायेगी । माँ नाराज होंगी । क्षमा करो कुमारी, फिर कभी चलूँगी ।

तीसरा पहर बीतने के करीब था । कुमारी कालेज से आगई थी और सन्ध्या को भाई के साथ घूमने जाने की तैयारी कर रही थी । अभय बिल्कुल तैयार बैठा था । वह कुमारी के आने की प्रतीक्षा में था कि रानी वहाँ आगई।

कई क्षण बीत गये । कमरे का मौन वातावरण मुखरित नहीं हुआ । धीरे रानी ने अपराधी की भाँति कहा—“शायद आप मुझ पर अब भी नाराज हैं । मैं डरती थी कि कहीं मुझ पर आते ही बिगड़ न पड़ें, इसीलिए इतने दि तक आने का साहस नहीं कर पाई । आप बोलते क्यों नहीं, चुप क्यों हैं ?”

अभय की मुद्रा में परिवर्तन आया । वह आक्रोश से भरकर बोल उठा—“चली जाओ रानी ! तुमने जो नाटक खेला था, वह पूरा हो गया । तुम बहिन को भगाना चाहती थीं, सो चला गया, अब क्या करने आई हो यहाँ ?”

रानी तब अपनी सफाई देने लगी । वह बोली—“मैं क्यों भगाना चाहती थी भइया को, मुझे क्या गरज पड़ी थी । मैंने तो आपसे केवल यही कहा था कि भइया और भाभी यहाँ हैं इसलिए मैं आने में संकोच करती हूँ । मैं ……”

“और यह क्यों भूल जाती हो रानी, तुम्हीं ने तो कहा था कि भइया को भाभी की चालें शतरंजी होती हैं । मुझे पूरा विश्वास है कि जिस दिन तुम मुझ से अखिल के सम्बन्ध में यह कहने आई थीं कि अकारण ही कोई किसी समय नहीं दिया करता ! पता नहीं भइया कुमारी के साथ इतना क्यों व्यग्र रहते हैं । उस दिन अखिल ने तुम्हारी बातें सुन ली थीं । क्योंकि तुम्हारे जाने के थोड़ी देर बाद भाभी शारदा प्रमोद के लिए दवा लेने आई थीं तो कह रही थीं कि अभी उनको भेजा था तो शायद यहाँ कोई बैठा बातें कर रहा था इसलिए वे लौट गये ।” अभय यह कहकर एक लम्बी साँस ले तत्क्षण ही कहने लगा—“यह बिल्कुल सही है कि अखिल भाई ने तुम्हारी सब बातें सुनी थीं और इसीलिये वे चले गये । इसके लिए तुम दोषी हो रानी ! मुझे धन्य करो, मैं तुम्हारे योग्य नहीं । जाओ, कुमारी आती होगी । पता नहीं, तुम्हें इतनी विरक्ति क्यों होगई है ?”

रानी रुआँसी हो आई । साड़ी के पल्ले को दोनों हाथों से ऐंठती हुई धीरे धीरे मद भरे स्वर में कहने लगी—“यह आप कहते हैं; लेकिन मैं कैसे मानूँगी भइया ने मेरी बातें सुनी थीं और तभी चले गये । अगर यह सत्य है तो फिर

और कटे वृक्ष की भाँति धम् से विस्तर पर गिर पड़ी ।

आज रानी का हृदय टूट गया था कि अभय उसके हाथ से अब बाहर गया जान पड़ता है । उस पर अब मेरी कोई भी कला अपना प्रभाव नहीं डाल सकती । जिस कारण मैं अपनी भलाई सोच रही थी वह अहित का प्रतीक बन गया । न भइया कोठी छोड़ते और न अभय का मस्तिष्क मेरी ओर से खराब होता । कैसी भूल की मैंने कि जो अपने आप ही अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली । अब अभय को प्राप्त करने के लिये केवल एक ही मार्ग है, वह यह कि किसी प्रकार अखिल भइया आजाएँ और उनके आने पर अभय का गुस्सा अपने आप ही ठंडा होना बन जायगा ।

तीसरा पहर हो रहा था । आज छुट्टी का दिन था । अतः दोपहर को मन बहलाने रानी अभय के घर गई थी । लेकिन वहाँ से घोर असन्तुलन लेकर लौटी । अब वह सोच रही थी कि जीवन कैसा भी हो हमेशा हँसकर बात करता था । किन्तु अभय पर तो ऐसा भूत सवार हो गया कि देखते ही वह काटने को दीड़ता है ।

सहसा रानी का ध्यान रंजना की ओर गया कि चलो रंजना से ही मिल आऊँ, कुछ मन बहल जायेगा । वह कितनी सौभाग्यवती है जो जीवन जैसा पति उसे सहज ही प्राप्त हो रहा है । एक मैं हूँ जो जीत के लिए बाजी लगाती हूँ और बार-बार मात खानी पड़ती है ।

रानी मन-ही-मन उधेड़-धुन करती हुई अस्पताल पहुँची । रंजना की बाँह और कमर दोनों में प्लास्टर चढ़ा था, जिसके अभी जल्दी खुलने की सम्भावना नहीं थी । आज किसी कार्यवश गयाप्रसाद नहीं आये थे । फूलमती गोपेश के साथ आई और जल्दी ही चली गई थी ।

रानी को सामने आता देख रंजना लेटे-लेटे बोली—“आओ रानी ! आज कई दिन बाद आई हो ।”

प्रश्न के साथ ही रंजना की दृष्टि रानी के उदास मुख पर केन्द्रित हो गई । वह पूछने लगी—“क्या बात है रानी, आज चेहरा सुस्त है ?”

रानी स्टूल पर बैठ गई और धीरे से बोली—“कुछ भी नहीं रंजना ! अस्पताल ऐसी जगह है जहाँ आने पर आदमी का मन कुछ दुखने-सा लगता है ।

रानी किसी तरह कुमारी से पीछा छुड़ाकर घर आई। वहाँ वह सोच रही थी कि जिसकी आशा थी वही हुआ। खैर, आज पहला दिन था। गुस्सा जितनी जोर से उबला, उतना उफान उसमें नहीं आया। अब दूसरी बार में अभय कुछ और ठण्डा हो जायेगा। फिर दस-पाँच बार के आने-जाने से वह इस बात को बिल्कुल भूल ही जायेगा कि मेरे कारण अखिल भइया उसकी कोठी से चले गये। रुठी हुई नारी को पुरुष देर में मना पाता है। लेकिन रुष्ट पुरुष को स्त्री हँसकर जल्दी ही मना लेती है। फिर मुझे तनिक भी घुरा नहीं मानना चाहिए, अभय के उस समय के व्यवहार को। प्यार की मंजिल में सभी स्थल आते हैं। जहाँ हँसी है वहाँ गुस्सा अगर न हुआ, तो जिन्दगी की महफिल सूनी हो रहती है।

रानी के इस प्रकार के चिन्तन ने उसको वेदना से मुक्त कर दिया और बरबस ही उसका ध्यान जा अटका अभय की ओर, जब उसने कहा था—“मुझे कितनी खुशी होती है जब तुम आजाती हो !” अभय का मन नहीं बदला है। मन में एक छोटा-सा सन्देह आ गया है। उसे मैं धीरे-धीरे निकालकर दूर फेंक दूँगी।

इस निष्कर्ष पर पहुँचते-पहुँचते रानी को आत्म-सन्तोष मिल गया था। रात का तीसरा पहर बीतने जा रहा था और उसकी पलकें मुँद रही थीं।

: ६१ :

रानी ने जो सोचा था वह नहीं हुआ। दूसरी बार जब वह अभय के पास गई तो अभय उस पर आग-बबूला हो उठा और खीझकर बोला—“क्षमा कीजिये, देवी जी ! अब बहुत हो चुका ! भविष्य में आप कुमारी से ही मिला करें। मेरे पास आने का कष्ट न करें, अच्छा नमस्ते !”

रानी अपनी यह उपेक्षा वर्दाश्त नहीं कर सकी। वह निराश मन घर आई

इसीलिये वे चले गये। क्या मेरी मुश्किल आसान नहीं हो सकती है रंजना ? मन पाया तो तुमसे कह दिया और भला किससे कहती ?”

रंजना गौर से रानी की बातें सुन रही थी। वह कुछ गम्भीर हो आई और धीरे से शान्त-स्वर में बोली—“रानी, दुनिया में कोई काम असम्भव नहीं। अगर तुम्हारी लगन सच्ची है तो प्रयत्न सार्थक होगा। अभय की नाराजगी एक दिन अपने-आप ही दूर हो जायेगी और जीजाजी भला तुम्हारी वजह से क्यों गये होंगे ! उनका स्वभाव जितना मिलनसार है उतना ही एकाकी भी। जहाँ तनिक भी अशान्ति हुई तो वे उठकर चल देते हैं। मन छोटा न करो रानी ! दुनिया के दस्तूर निराले होते हैं। कभी हँसकर जीना पड़ता है और कभी रोकर। मेरा विश्वास है कि जीजाजी का पता जल्दी ही चल जायेगा। क्योंकि वे परिवार वालों और सम्बन्धियों से मुँह मोड़ सकते हैं, लेकिन दीदी मोह के बन्धन नहीं तोड़ सकतीं। एक दिन वे अवश्य आयेंगे।”

रंजना की इस बात पर रानी ने एक दीर्घ उच्छ्वास ली और उसके मुँह से निकल गया—“देखो क्या होता है ?”

रानी और रंजना की थोड़ी देर तक और बातचीत हुई। छः बजने में बीस मिनट रह गये थे, अतः रानी अब उठकर चल दी और चलते-चलते कहती गई—“अब कल आऊँगी; तुमसे इतनी बातें हो गई, चित्त कुछ हल्का हो गया।”

रानी के जाते ही रंजना चौंकती हुई सोचने लगी कि मैं पहले ही जानती थी कि जीजाजी के कोठी से जाने का कारण कुछ और है। आज समझ में आ रहा है कि यह सब रानी की करतूत थी। अच्छा हुआ अब कुछ उसकी आँखें तो खुली हैं ! साँप सब जगह टेढ़ा चलता है, लेकिन अपनी बाँबो में सीधा ही प्रविष्ट होता है। किन्तु रानी की गति सर्वथा विलोम थी इसीलिये उसकी हार हुई और वह पछता रही है। काश ! अब भी वह सुधर पाती तो कितना अच्छा होता !

रंजना की दृष्टि सोचते-सोचते दीवाल में लगे कलाक पर जा पड़ी। छः बजने में दस मिनट रह गये थे। सहसा उसके मन में यह प्रश्न उठने लगा कि आज जीवन ने आने के लिए कहा था, क्या बात हुई अभी तक नहीं आया।

×

×

×

कोई खास बात नहीं !” यह कहकर रानी ने मुस्कराने की विफल चेष्टा की और प्रसंग बदलकर बोल उठी—“अभी कितने दिन लगेंगे, पड़े-पड़े ऊब जायेगी, प्लास्टर कब कटेगा ?”

रंजना ताड़ गई कि रानी उससे कुछ छिपाना चाहती है जो छिपा नहीं पा रही है। वह चलताऊ ढँग में बोली—“करीब एक महीना और लगेगा। हाँ, उस अलवम वाला विशेष पदार्थ अब तुम्हारे मन को परेशान तो नहीं करता है। उसके बाद फिर सिर-दर्द तो नहीं हुआ ? मैं तो डर गई थी उस दिन, क्या का दर्द था तुम्हें !”

रानी कुछ विगड़ती, चिढ़ती या खीझ उठती। यह सब नहीं हुआ। उसने आनन पर उदासी घनी हो उठी और वह धीरे से क्लान्त-स्वर में बोली—“हैं, न करो रंजना ! मैं आज वास्तव में बहुत दुःखी हूँ।”

“क्यों, क्या हुआ ? कोई नया सिर-दर्द पाल लिया ?”

आज रानी की उच्छ्वल प्रवृत्ति पता नहीं कहाँ विलीन हो गई थी। उसके जीवन की सारी कटुता जैसे पश्चात्ताप बनकर उसकी रग-रग में तेजाब की तरह समा गई थी। वह फूटकर रो देना चाहती थी। लेकिन वातावरण नियन्त्रित था। जिस रंजना से उसे ईर्ष्या थी आज वही एकमात्र उसके सम्मुख ऐसी पात्री थी जिससे वह अपना दुःख कहकर वेदना को हल्का कर सकती थी। वह रुँधे गले से बोली—“रंजना ! तुम शायद मुझे अच्छी दृष्टि से नहीं देखती, तभी मेरा उपहास करती हो ! वास्तव में अब तक मैं एक ऐसी पहेली बन रही, जिसे बूझकर भी कोई नहीं समझ पाया ! लेकिन अब अन्तर में आग जल रही है। उसके शोले मन को चकनाचूर कर रहे हैं। आज मैं तुम से कुछ नहीं छिपाऊँगी। जीवन के प्रति मेरा अनुराग अवश्य था; किन्तु वह तुम्हारे विचारों का आदमी है। इसलिए मैंने उससे मुँह मोड़ लिया। फिर भाग्य ने उसे नक अभय को सामने लाकर खड़ा कर दिया। मैं उसमें खो गई। लेकिन रंजना जो दूसरे के लिए कुआँ खुदाता है वह उसमें स्वयं गिर पड़ता है। नई-नई प्रीति थी, तब तक वहाँ आकर टिक गये भइया और भाभी। फिर भइया एकाएक वहाँ से चले गये। अब अभय मुझसे बहुत नाराज़ है, उसका कहना है कि मैं अधिक आती-जाती थी और भइया घर वालों से दूर-ही-दूर रहना चाहते

जीवन उठकर खड़ा हो गया और गुलाब का एक फूल तोड़ हाथ में पकड़ नवाता हुआ बोला—“वस, यहीं पर तुम भूलती हो रानी ! मैंने तुम्हें कोई वचन दिया था क्या ? काश ! तुम समझ पातीं कि मेरे अन्तर में क्या है !”

“मैं बताती हूँ आपके अन्तर में हलाहल भरा है, जिसे मैं अमृत समझती रही । लेकिन अब आँखें खुल गई हैं और मुझे आपसे विरक्ति हो गई है !”

मिलाई का समय समाप्त हो चुका था । अस्पताल की घण्टी ज़ोर से घन-घना कर बज उठी । दिन भर का थका-हारा सूरज अस्ताचल की गोद में सिर झुकाने जा रहा था ।

रानी घूमकर चलने लगी तो जीवन बोल उठा—“वस, चल दीं रानी ! अभी तुम्हारा मुस्सा तो उतरा ही नहीं ! आओ और दो-चार खरी-खोटी सुना लो, फिर जाना ।”

रानी जीवन की व्यंग्यपूर्ण मुस्कान देखकर ठहर गई और चिढ़कर कहने लगी—“मुझे क्या गरज पड़ी है जो आपको खरी-खोटी सुनाऊँ । हाँ अलवत्ता, आपको कुछ कहना बाकी रह गया हो तो अपना गुबार निकाल डालिये ।”

इस पर जीवन बोला—“मुझे क्या गरज पड़ी है और क्या हक है जो किसी से कुछ कहूँ ।”

“क्यों, हक क्यों नहीं ? तब तो मेरी हर बात आपको अच्छी लगती थी । और कभी ऐसा मौका ही नहीं आता था कि तर्क-वितर्क की जरूरत पड़ती । उस नाते आप सब कुछ कह सकते हैं ।”

रानी की इस बात पर जीवन उसके पास आकर गम्भीर स्वर में कहने लगा—“जानती हो रानी कि मेरी आदत इधर की उधर करने की नहीं है । मैं सारी बातों पर पर्दा डाले बैठा हूँ और तुम ऐसा कहती हो !”

“कैसा पर्दा ? कोई चोरी की है मैंने ! आप क्या कह रहे हैं ?” रानी चोट खाई हुई-सी नागिन की भाँति फुफकार उठी ।

“तो सुनो ! जो घड़ी तुमने मुझको बर्ष डे पर उपहार में दी थी उसका इतिहास क्या है ? क्या मैं पूछ सकता हूँ ? यह सब देवता तुल्य अखिल और भाभी शारदा को घर से निकालने की एक युक्ति नहीं थी ? कंगन तुमने चुराया था रानी ! इस बात को केवल मैं जानता हूँ दूसरा और कोई नहीं । बो लो

रानी जब सीढ़ियों से उतरकर अस्पताल के फाटक की ओर जा रही थी तो सामने घास पर टहल रहे जीवन पर उसकी दृष्टि पड़ गई। वह चाहती थी कि उसकी निगाह वचाकर निकल जाय। लेकिन जीवन सामने आ गया था और हँसता हुआ पूछ रहा था—“क्यों रानी ! अच्छी तो हो ? आजकल तुम दिखलाई नहीं पड़तीं !”

रानी की तयोरियाँ चढ़ गईं और वह रुष्ट होकर बोल उठी—“आकर क्या करूँ, जो कुछ और अपमान करना चाहते हो, कर लो, सामने खड़ी हूँ !”

जीवन फाटक के मार्ग में खड़ा था। लोग आ-जा रहे थे। अतः वह घास की ओर बढ़ आया और रानी से बोला—“आओ, बैठो फिर तुम्हें बताऊँ कि मैं तुम्हारा मान चाहता हूँ या अपमान !”

“मुझे कुछ भी सुनने की जरूरत नहीं,।” रानी एक गुलाब के कुञ्ज के पास जाकर खड़ी हो गई और जीवन वहीं बैठ गया। वह बोला—“रानी, तुम मुझे कैसा आदमी समझती हो ?”

रानी तनी हुई खड़ी थी। वह उपेक्षा भरे स्वर में बोली—“आप यह सब क्यों पूछ रहे हैं ? मैं आपसे दूर-ही-दूर रहना चाहती हूँ। जो पराया है, उससे अपनत्व कैसा ?”

जीवन हँस पड़ा। उसके मुँह से निकल गया—“अच्छा, तो मैं दुश्मन ही सही। यह बताओ कि तुम्हारा क्या ले लिया है !”

रानी एकदम उबल पड़ी और बोली—“आग लगाकर खाक बटोर रहे हो और पूछते हो कि तुम्हारा क्या ले लिया। जेजे पर नमक न छिड़किये जीवन बाबू ! मैं आपके हाथ जोड़ती हूँ !”

जीवन अब तक हँसी की मुद्रा में था। उसकी मुखाकृति भी बदल गई और वह कहने लगा—“साफ-साफ क्यों नहीं कहतीं रानी ! मैं तुम्हारी झूठी शिकायत सुनने के लिये बिल्कुल तैयार नहीं हूँ।”

रानी भला कब चुप रहने वाली थी ! वह छूटते ही बोल उठी—“आपने मुझे चकमा क्यों दिया ? मुझसे मीठी-मीठी बातें करते रहे और अन्दर-ही-अन्दर किसी और के वन बैठे ! मैं आपसे बात भी करना पसन्द नहीं करती हूँ। बंटे जाइये जीवन बाबू ! आप समझ लीजिये कि रानी मर गई !”

फिर दूसरे क्षण रानी यह सोचने लगी कि मैं रंजना को न जाने क्यों गलत समझती आई, आज को निखिल भइया के साथ उसका ब्याह हुआ होता तो वह गाढ़ में मेरे काम आती ।

इस भाँति रानी जब सब ओर से उपेक्षिता थी तो उसको आत्मीयता का एक कोना स्पष्ट दिखाई दे रहा था और वह कोना रंजना थी ।

प्रातः निखिल जब नाश्ता करने बैठा तो उसने उदास रानी की ओर देख-कर पूछ दिया—“रानी ! तबियत तो ठीक है तुम्हारी ? कोई तकलीफ है क्या ? मुँह क्यों उतरा है ?”

इस पर रानी की उदासी दूनी बढ़ गई । वह धीरे-धीरे कहने लगी—“कुछ नहीं निखिल भइया ! कल मैं अस्पताल रंजना से मिलने गई थी तो उसकी बातों ने मुझ पर ऐसा असर डाला कि तब से बार-बार यह बात मन को कोंच उठती है कि रंजना को हमारे घर की बहू बनना चाहिये था । अभी तुमको देखा तो सहसा वह बात मन में फिर आ गई ।”

चाय की चुस्की लेता हुआ निखिल मुँह बिचकाकर बोल उठा—“यह सब बेकार की बातें हैं । छोड़ो रानी मैं.....।”

“नहीं भइया, रंजना बहुत अच्छी लड़की है । कल उसकी बातें सुनकर मेरी आँखों में तो आँसू आगये । साफ-साफ कोई भला कैसे कह सकता है । लेकिन मैं इतना जानती हूँ कि रंजना जीवन के साथ बंधने से सन्तुष्ट नहीं है ।”

निखिल कुछ सोचने लगा । रानी उसके कप में थोड़ी चाय और ढालने लगी । दूध स्टोव पर चढ़ा था । उसमें उबाल आया और वह उफनकर बह चला । चिढ़ाव उठी । दोनों भाई-बहन चौंककर उधर देखने लगे तब तक वहाँ बड़-बड़ती हुई सुभद्रा आ पहुँची—“तनिक काम को कहो तो इस लड़की की जान निकल जाती है । सब दूध उबल गया और यह बातें बघार रही है ।”

अब दूध खौल रहा था । रानी जल्दी-जल्दी स्टोव बुझा रही थी और निखिल रूमाल से मुँह पोंछता हुआ अपने कमरे की ओर जा रहा था ।

×

×

×

सावन की बदली की धूप प्रातः के पहले ही प्रहर में इतनी प्रखर हो उठी थी कि लगता था कि जेठ की चिलचिलाती धूप है ! लेकिन पथ पर चल रहे

अब तुम्हारे पास इसका क्या जवाब है ?”

अब रानी के पैरों के नीचे की धरती कांपने लगी । उसके प्रज्ञा-चक्षु खुल गये । वह यह कहती हुई वहाँ से चल दी — “तो आपको अगर मेरे ऊपर कीचड़ उछालकर ही सन्तोष मिलता है तो शौक से उछालिए । स्त्री तो पुरुष के सम्मुख सदैव पराजित ही रही है ।”

“नहीं रानी, यह तो नीचों के काम होते हैं । मैंने तो केवल बात का जवाब दिया है; कुछ कह थोड़े ही रहा हूँ ।” जीवन यह कहकर फिर मुस्करा उठा और अंगारों पर पैर रखती हुई रानी वहाँ से चली गई ।

जीवन आज रंजना से मिलने नहीं जा सका था । अतः उसके पाँव अपने घर की ओर उठने लगे और साँझ का झुटपुटा अब रात के अन्धकार में धीरे धीरे बदल रहा था ।

: ६२ :

रानी की स्थिति अच्छी नहीं थी । घर आकर उसे माँ की डाँट खानी पड़ी कि रात तक क्या करती रही अस्पताल में ! इससे वह बहुत दुखी हुई । वह मन-ही-मन सोचने लगी—कैसी हूँ मैं जो हर आदमी मुझ पर खार खाये बैठा है ! शायद यह सब मेरे किये का फल है; जो आग खाता है उसे अंगार जरूर उगलने पड़ते हैं । जीवन से मैं व्यर्थ ही उलझी । एक तो देर हो गई और दूसरे बोटी इस भय से काँपती है कि यदि कहीं उसने घड़ी देने वाली बात किसी पर भी उगल दी तो अनर्थ हो जायगा । काश ! यह धरती फट जाती और मैं इसमें समा जाती तो सारे भंझटों से छुटकारा मिल जाता । सब बदले हैं । सभी के मुँह फूले हुये हैं, लेकिन रंजना के पास अभी मेरे लिये सहानुभूति शेष है, ऐसा प्रतीत होता है ।

बोव चलती रही और वे मिल गये । लेकिन इस बार तो उनके पत्र से जो श्रम को लिख गये थे, स्पष्ट है कि वे नगर से कहीं दूर चले गए हैं । ऐसी स्थिति में कहाँ ढूँढ़ा जाय उनको ?”

“हाँ बात तो सही है ।” गयाप्रसाद यह कहकर थोड़ा सा सरक गये और स्वर में निखिल से बोले—“आओ बैठ जाओ निखिल, खड़े कब तक रहोगे ?”

निखिल बैठ गया । और गोपेश बाप की गोद से उतरकर माँ के अंक में आसीन हो गया । दस-पाँच मिनट निखिल की दम्पति से वार्ता हुई जिसमें निखिल और शारदा का ही विषय प्रधान रहा । फिर जब गयाप्रसाद सपत्नीक उठकर चलने लगे तो सहसा उन्हें कुछ स्मरण हो आया । वे जेब से दो रुपये का नोट निकालकर निखिल को देते हुये बोले—“लो भइया निखिल, जल्दी में मुझे आन ही नहीं रहा । कुछ थोड़े से फल लपककर ला दो, रंजना को । हम लोग अब चलते हैं ।”

निखिल गयाप्रसाद के हाथ से झोला ले फल लेने चला गया और दम्पति धीरे-धीरे फाटक के बाहर हो गये ।

रास्ते में फूलमती गयाप्रसाद से कह रही थी—“लड़का तो सज्जन है निखिल ! देखो क्या होता है, रामानन्द तो ऐसे बैठे हैं ।”

इस पर गयाप्रसाद एक लम्बी साँस लेकर बोले—“रंजना की माँ, जहाँ लड़की का संस्कार होता है वह वहीं जाती है ! मुझे कुछ ऐसा लग रहा है कि जब रंजना का ब्याह निखिल से ही करना पड़ेगा । क्योंकि लड़की दुनिया देती और मान पर चोट कोई नहीं पड़ने देता । रामानन्द मतलबी आदमी हैं । वे सभी जरूरतों को बहुत महत्व देते हैं और दूसरों की जरूरत को जरूरत ही नहीं समझते । जितने मन से मैंने उनके यहाँ रिश्ता किया था उतनी ही तबियत ख खड़ती जा रही है ।”

जब तक घर नहीं आ गया तक तक फूलमती और गयाप्रसाद की बातें होती रहीं । उधर निखिल जब फल लेकर रंजना के पास लौटा तो आते ही उसे कहने लगा—“रंजना, तुमसे तो बात ही नहीं कर पाया, कहो कैसी तबियत ? अस्पताल में पड़े-पड़े ऊब गई होगी !”

निखिल को इसका बोध नहीं हो रहा था। आज पता नहीं अतीत में रंजना के प्रति प्रकट हुई कटुता उससे दूर-दूर क्यों भाग रही थी। वह सोच रहा था कि भइया पर सन्देह करना क्या मेरा सर्वथा निर्मूल है! क्या यह सोच लूँ कि माँ जो लाँछन भइया के प्रति रंजना पर लगा रही थीं वह सरासर मिथ्या था! शायद मैं व्यर्थ के सन्देह में वह गया। ऐसा लगता है कि रंजना निर्दोष है। उस समय आवेश में मुझे सब कुछ विपरीत ही दिखाई दे रहा था। अब सोचता हूँ तो निष्कर्ष यह निकलता है कि माँ ने व्यर्थ ही हवा में गाँठें बाँध कर रस्सी का साँप बनाया था जिसने मुझे डस लिया। शायद कल बातों-बातों में रंजना ने रानी से पूछा हो कि और सब लोग आये, लेकिन निखिल नहीं दिखाई दिया। मैंने बड़ी भूल की जो अस्पताल में उसे देखने नहीं गया। आज जरूर जाऊँगा और रंजना के सामने इसके लिए क्षमा-प्रार्थी होऊँगा!

दुकान पहुँचकर भी निखिल रंजना के प्रति कुछ-न-कुछ सोचता ही रहा। न जाने आज उसकी कुंठा और सारी कटुता कहाँ विलीन हो गई थी। उसे लग रहा था कि वह हाथ आई खुशी बरबस ही दूसरे को दे बैठा है।

तीसरे पहर जब निखिल अस्पताल पहुँचा तो वहाँ गयाप्रसाद, फूलमती और गोपेश सभी थे।

रंजना निखिल को आया देख सहसा चौंक उठी और फूलमती मृदु स्वर में कहने लगी—“आओ बेटा निखिल! अब तो ठीक है रंजना। प्लास्टर जल्दी ही कट जायेगा।”

केवल दो स्टूल थे। एक पर गयाप्रसाद बैठे थे और दूसरे पर फूलमती। फूलमती निखिल के लिए स्टूल छोड़ जब बैठने का आग्रह करने लगी तो वह खूबसूरती के साथ यह कह गया—“आप बैठिये माँ जी! मैं ऐसे ही अच्छी लगता हूँ।”

“इस पर फूलमती हँस पड़ी। वह अपनी जगह पर बैठ गई और गयाप्रसाद कहने लगे—“निखिल! कुछ पता चला अखिल का? पता नहीं वह इस बार कहाँ है?”

इस पर निखिल दुनियादारी न करके साफ-साफ कहने लगा—“ऐसा है चाचा जी कि पहले सबको यकीन था कि भइया शहर से बाहर नहीं गये हैं

“हाँ कुछ खींचातानी दोनों तरफ से है जरूर ! वे काम में जल्दी चाहते हैं और पिताजी सहमत नहीं, इसलिए कि जब दीदी घर में होंगी तभी वे ब्याह करेंगे !”

रंजना के मुँह से यह सुनकर निखिल कहने लगा—“और सुना है कि रामानन्द यह भी तो कहते हैं कि यदि टाल-मटोल हुई तो वे कोई दूसरा सम्बन्ध कर लेंगे ।”

रंजना इस पर कुछ गम्भीर होकर बोल उठी—“हाँ, कहते तो हैं, लेकिन वह सब भविष्य के हाथ है । अभी क्या कहा जा सकता है ।”

दोनों में यह प्रसंग चल ही रहा था कि वहाँ आ गया जीवन । उसके हाथों में मौसमियाँ थीं । उनको जब वह रंजना के पास रखी आलमारी में रखने लगा तो देखा कि वहाँ फलों का ढेर लग रहा था । वह समझ गया कि यह निखिल लाया है । तब उसने एक सरसरी निगाह से निखिल की ओर देखा और दुनियादारी के नाते पूछ दिया—“निखिल भाई, सब चैन-चान है । कहो निखिल बाबू का कोई समाचार मिला ।”

निखिल ने उस पर बहुत ही भीठे ढंग से अपनी अनभिज्ञता प्रकट कर दी । दोनों में थोड़ी देर तक बातें हुईं । जिसमें बीच-बीच में रंजना ने भी योग दिया । फिर एक साथ ही वे दोनों बाहर आ गये ।

निखिल जब अस्पताल से दूकान की ओर जा रहा था तो उसके मस्तिष्क में यह बात घूम रही थी कि मोती सबको अच्छा लगता है । सम्बन्ध होने का निश्चित समझ जीवन का अनुराग रंजना के प्रति हो गया है । लेकिन मैं सोचता हूँ कि रंजना मुझसे पृथक् नहीं । वह बेवसी के हाथों केवल लोक-लाज के भय से बिक सकती है । उसके हृदय में मेरे लिये स्थान है और वह रहेगा ।

लेकिन जीवन का औत्सुक्य कुछ मन्द पड़ गया था । वह सोच रहा था कि निखिल का रंजना के पास आने का मतलब यह है कि उसे रंजना से पुराना प्यार है । इसलिए वह अपने पर नियन्त्रण नहीं रख पाया और चला आया । उसे दोनों के ब्याह की बात थी । किन्तु अब सम्बन्ध मुझसे होने जा रहा है वह जानकर भी निखिल रंजना से कोई भेदभाव नहीं मानता है, इसकी मुझे खबर है । रंजना एक दैवी वरदान है, उसे कौन नहीं चाहेगा ?

रंजना विस्मय से चौंक उठी । वह एक क्षण में ही सोच गई कि निखिल तो मुझ पर रुष्ट था । उसे मेरे प्रति सन्देह था, फिर यह मिलनसारिता क्यों ? यदि दुनियादारी के नाते कोरी सहानुभूति प्रकट करने का प्रश्न होता तो उसे पहले आना चाहिये था जब माँ सुभद्रा आई थीं । आज एकाएक यह कैसे आ गया ?

एक क्षण तक रंजना की यह स्थिति रही । फिर वह धीरे-धीरे कहने लगी—“ऊबना भी एक तरह से मन को मारना है, लेकिन मजबूरी सब कुछ करा लेती है निखिल बाबू !”

निखिल एकटक रंजना के मुख की ओर देख रहा था, वह हँसकर मृदु-स्वर में बोला—“हाँ यह तो है ही । रंजना, मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ । शायद तुम उसे ध्यान से सुनोगी !”

“मैंने कभी आपकी अवज्ञा की है क्या, जो ऐसा कह रहे हैं ? कहिए क्या कहते हैं ?” रंजना के मुख पर यद्यपि गम्भीरता थी, लेकिन फिर भी सम्मता की प्रतीक मुस्कान उसके होंठों पर खेल रही थी ।

निखिल मन-ही-मन कुछ लज्जित हुआ और सहज स्वर में कहने लगा—“रंजना ! तुम मुझ पर असन्तुष्ट होगी कि मैं भी माँ के ही समान तुम्हारे प्रति सन्देह के घरौंदे में आ गया हूँ । मगर सोने को मुलम्मा कहने से उसकी आब घट नहीं जाती । तुम कुन्दन हो रंजना ! मैंने भूल की इसके लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ । मेरी ओर से अपने मन में कोई विकार मत रखना । मैं तुम्हारा आदर करता हूँ ।”

रंजना हँस पड़ी और सम्मान भरे स्वर में बोली—“मेरी समझ से तो आपने मेरा अनादर कभी नहीं किया । यों तो समय और वातावरण का प्रभाव प्रत्येक मनुष्य पर पड़ता रहता है । मैं समझती थी कि आप स्वयं ही सारी परिस्थितियों से विज्ञ हो जायेंगे, इसीलिए चुप रही । कहिए, दूकान का काम कैसा चल रहा है ?”

निखिल रंजना के इस प्रश्न पर कहने लगा—“ठीक है, अच्छी चलती है । रानी कहती थी कि रामानन्द बाबू और चाचा जी से कुछ खटपट चल रही है ?”

पूजनीय माताजी !

सादर प्रणाम ।

मैं कुशल से हूँ । आप कोई चिन्ता न करें । गोपेश के लिए राखी भेज रही हूँ । रंजना से वैधवा देना और उसको मेरा प्यार कहना । आप सब लोग भी सानन्द ही होंगे ? यही सोचती हूँ । शेष फिर ।

आपकी पुत्री,

शारदा

बस फिर क्या था । अखिल ने लिफाफा बन्द कर दिया और पता लिखकर बाहर जाते समय लेटरबक्स में छोड़ दिया ।

×

×

×

गयाप्रसाद के घर से लेकर चन्द्रभान और रामानन्द के घर में शारदा के पत्र ने अपनी हलचल मचा दी ।

निखिल ने जब रंजना से यह सुना तो बोला—“मैं मथुरा जाऊँगा रंजना ! छोटा-सा शहर है, भइया को ढूँढ़कर ही रहूँगा ।”

रंजना प्रसन्नता के अतीव आवेग से आलोड़ित होकर बोली—“जरूर जाइये निखिल बाबू ! इस काम में देर नहीं करनी चाहिए । ऐसा लगता है कि राखी दीदी ने जीजाजी से छुराकर भेजी है तभी पता नहीं लिखा ।”

“यह बात नहीं रंजना, तुम भूलती हो, लिफाफे पर पता भइया ने ही लिखा है । मैं जाता हूँ । जाने का प्रोग्राम बनाता हूँ ।” यह कहकर निखिल चला गया, ऐसे ही आगया जीवन ।

रंजना और जीवन की बातें भी पत्र के ही विषय में होती रहीं । निष्कर्ष निकला कि जीवन रात को ही मथुरा जाने के लिए तैयार हो गया ।

निखिल जब रंजना को दूसरे दिन यह बतलाने आया कि कल प्रातः वह मथुरा जा रहा है, तो यह सुनकर वह आश्चर्यचकित हो उठा कि जीवन उससे पहले ही चला गया ।

इस तरह घर आ गया और जीवन के विचारों का क्रम नहीं टूटा, वे निरन्तर चलते ही रहे ।

: ६३ :

आज राखी का पवित्र त्यौहार था । सावन के बादल नन्हीं-नन्हीं धूँवों में बरस रहे थे । शारदा ने बकरी के दूध में सेमइयाँ बनाई थीं । आर्थिक अभाव-वश रुपये-बोस आने सेर का दूध अखिल नहीं ला सकता था । तब बच्चों का मन रखने के लिए बारह आने का एक सेर बकरी का दूध वह ले आया था । खा-पीकर जब सब पूरा परिवार राखी बाँध मगन और मुदित बैठा था, तभी एका-एक शारदा के मुँह से एक उच्छ्वास निकल गई । वह धीरे से बोल उठी—“आज अगर मैं दिल्ली में होती तो गोपेश के राखी बाँधती ! क्या करूँ, कहो तो भेज दूँ ?”

इस पर अखिल किसी गहरे विचार में डूब गया । वह शारदा के मन को बुझाने के पक्ष में नहीं था और पता भी किसी को नहीं देना चाहता था । एक ओर खाई थी तो दूसरी ओर खन्दक ! वह असमंजस में पड़ गया कि क्या करे ! इतने में उसको चुप देख शारदा पुनरावृत्ति कर उठी । वह कहने लगी—“मैं सोचती हूँ इसमें तुम्हें आपत्ति नहीं होनी चाहिए । मेरा एक ही भाई है ।”

शारदा की इस बात को सुनकर अखिल गम्भीरतापूर्वक मुस्करा दिया और बोल उठा—“तो ऐसे ही मेरे भी अकेली ही बहन है । लेकिन अन्तर यह है कि मैं पुरुष हूँ और तुम नारी । तुम्हें पिघलना आता है और हम फौलाद के बन जाते हैं । भेज दो राखी गोपेश को । मैं मना नहीं करता !”

शारदा के लिए इतना पर्याप्त था । रोली और राखी लिफाफे में बन्द कर उसीके साथ एक छोटा-सा पत्र भी उसने रख दिया । अखिल कभी शारदा के पत्र नहीं पढ़ता था; लेकिन आज उसने पत्र निकालकर पढ़ा, लिखा था—

क्योंकि छः वजे से कार्यक्रम आरम्भ हो जायेगा । किन्तु अखिल ने यह कहकर टाल दिया कि बच्चे की तबियत खराब है; मैं नहीं जा सकूंगा ।

इस तरह बड़ी मुश्किल से उन लोगों ने अखिल का पीछा छोड़ा । फिर जब वह घर आया तो देखा शारदा प्रमोद के माथे में घिसकर लाल चन्दन लेप रही है और एक पड़ोसिन वृद्धा कोई घरेलू औषधि चौकी पर पीसकर उसको पिला रही है ।

अखिल चुपचाप यह देखता रहा । उसकी आँखों में आँसू आगये कि मैं समर्थ पिता नहीं हूँ । मेरे सामने मेरा बच्चा बिलबिलाये और मैं उसके लिये कुछ न कर सकूँ, यह एक अभिशाप नहीं और क्या है ?

वृद्धा थोड़ी देर बैठ फिर यह कहकर चल दी कि मैं जा रही हूँ । इसे अभी तनिक देर में नींद आजायेगी । जब जगे तो एक खूराक और दे देना ।

बुढ़िया चली गई और अखिल शारदा से पूछने लगा—“क्या दवा दी है ? बाजार में तो कुछ काम नहीं हुआ ।”

शारदा शान्त स्वर में कहने लगी—“चलो कोई बात नहीं । पड़ोसिन ने एक घूँटी बताई है, चार पैसे का नुस्खा था । मुझे लगता है यह दवा जरूर कारगर होगी । देखो न, अब बुखार कुछ कम हो चला है,” यह कहकर वह प्रमोद के भूरे वालों पर हाथ फेरने लगी और अखिल उसकी नब्ज टटोलने लगा ।

दवा से आराम पहुँचा । प्रमोद की आँखें लग गईं और दम्पति में वार्ता चलने लगी कि गृहस्थी एक महान् भ्रंश है; किसी तरह भी कल नहीं मिलती । पेट को जुटाओ यह तो हो नहीं पाता फिर समय-कुसमय के लिए कुछ बचा लेना तो एक टेढ़ी खीर है । जिस देश में कला का कुछ मूल्य न हो वहाँ के कलाकार ऐसे ही खून के आँसुओं में रोते हैं ।

रात बीती । सबेरे सूरज की किरणों खिलखिला कर हँस पड़ीं । अखिल का मन किसी काम में नहीं लगा । वह उलझे चित्त को लेकर घर के बाहर भी नहीं जाना चाहता था । क्योंकि मन का गुबार यदि कहीं पूँजी पर बरस पड़ता तो पूँजीपति नाराज हो जाते और फिर शायद उसे बाजार में काम भी नहीं मिलता । अहिंसा का पोषक अखिल समाई के सहारे सन्तोष की लहरियों में

मथुरा में अखिल की कंठ नहीं थी। उसकी डिजाइनों की ऐसी छीछालेदर थी कि उसकी आत्मा रो देती थी। गृहस्थी का खर्च कठिनाई से चलता था और कभी-कभी तो ऐसा हो जाता कि चूल्हा जलने की नीवत नहीं आती थी। वह कला का पुजारी था और दुनिया बनावट की भूखी है। वह आवरण चित्रों को ऊँची भावनाओं से भरना चाहता; लेकिन होता यह था कि प्रकाशक उस पर होंठ बिचका देते। वे आकर्षक, अश्लील और सस्ते चित्र देने का आग्रह करते, जिन्हें मन मारकर अखिल बनाता था, पेट के लिए, पैसे के लिए।

घर में छोटे बच्चे प्रमोद को ज्वर आ गया था। बुखार की तेजी में उसे शी-तीन उल्टियाँ हुईं और कुछ पतले दस्त। शारदा रो दी और अखिल घबड़ा गया। प्रमोद के लिए दवा लाना आवश्यक था और उसकी जेब खाली थी। उसने इस आशय से शारदा की ओर देखा तो वह वस्तु-स्थिति को पहचानकर धीमी वाणी में बोली—“जाओ देखो कोई प्रकाशक कुछ पैसे दे दे तो बड़ा अच्छा हो। प्रमोद की तबियत एकदम बिगड़ गई है।”

इस पर अखिल बाजार पहुँचा। चौक और होली दरवाजे के प्रकाशकों को बहुत टटोला। लेकिन उन पत्थरों ने पिघलना जैसे सीखा ही नहीं था।

निराश अखिल जब घर की ओर लौट रहा था तो दिन के चार बजे थे। उमस खूब जोर की थी और गर्म सड़क अपनी साँसें छोड़ रही थी, जिससे छल-छला कर पसीना निकल आता और अधिक चलने पर सारा वदन स्वेद से भीग जाता।

अखिल धोती से माथे का पसीना पोंछता हुआ आगे बढ़ रहा था तब तक सहसा वह टकरा गया एक साहित्यिक शिष्ट-मण्डल से।

यह चार व्यक्तियों का एक समुदाय था। कोतवाली के सम्मुख आज एक कवि-सम्मेलन का आयोजन था। ये लोग अखिल को लेने आ रहे थे कि तब तक वह स्वयं मिल गया।

एक साथ ही सबने निवेदन किया कि वह अभी उन लोगों के साथ चले

पहुँचा । प्रकाशक ने बतलाया कि अखिल दिल्ली का नामी चित्रकार है । यहाँ विश्राम घाट मुहल्ले में रहता है ।

बस, जीवन के लिए इतना ही पर्याप्त था । वहाँ से सीधा वह विश्राम घाट पहुँचा और जहाँ-तहाँ लोगों से पूछने लगा कि यहाँ कोई अखिल नाम के कवि मंहोदय रहते हैं । लेकिन विश्राम घाट कोई छोटा मुहल्ला नहीं था जो सहज ही पता चल जाता ।

जीवन निराश मन गलियों में भटक रहा था कि सहसा उसकी दृष्टि एक घर से निकलते हुये अखिल पर पड़ गई । वह लपक कर उसके पास पहुँचा और उसको गले से लगाता हुआ आनन्द-विह्वल वाणी में बोला—‘जिन खोजा तिन पाइयाँ’ खूब मिले भाई अखिल ! मैं आज कई दिन से भटक रहा हूँ । चलो घर चलें ।”

अखिल ने भी शिष्टता का प्रदर्शन किया और उसको साथ ले शारदा के सामने जा खड़ा हुआ ।

अखिल प्रमोद के लिए दूध लेने निकला था । वह शारदा से यह कह कि शारदा जीवन बाबू को बँठाओ, मैं दूध लेकर अभी आता हूँ, बाहर चला गया ।

जब तक अखिल दूध लेकर नहीं लौटा तब तक वह यही सोचता रहा कि यदि शारदा राखी न भेजती तो जीवन यहाँ कभी नहीं आता । मालूम होता है दिल्ली में सबको मालूम हो गया है कि मैं पथुरा में हूँ । अब बहुत मुश्किल है । आज जीवन आया है । वह दिल्ली लौट चलने के लिए विवश करेगा । फिर जब मैं नहीं मानूँगा तो कल गयाप्रसाद भी आ सकते हैं । हो सकता है कि पिता जी निखिल को भेज दें और आ सकता है अभय भी ! ऐसी स्थिति में क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आता । मैं भँसटों से दूर रहना चाहता हूँ; लेकिन कहीं भी शान्ति से थोड़े दिन भी नहीं रह पाता । मालूम होता है कि यह नगर भी मुझे छोड़ना पड़ेगा ।

इधर शारदा और जीवन में बातें हो रही थीं । जीवन कह रहा था—“भाभी ! परदेश में रहकर सिवाय तकलीफ के आराम नहीं है । मेरी बात मानो, अखिल भाई को समझाओ और सब लोग दिल्ली लौट चलो । अरे ! आप लोगों के लिए कोई जगह की कमी है क्या ? मैं तो कहता हूँ कि सब लोग

बहता रहा और अपनी स्थिति पर सोचता रहा ।

प्रमोद का फूल-सा चेहरा कुम्हला गया था । ऐसा लगता था कि उसका मुख किसी ने हल्दी से पोत दिया है । गौर-वर्ण अब पीतिमा को प्राप्त हो रहा था । एक ही दिन के पुखार ने उसकी यह हालत कर दी थी । शारदा उपचार में निरन्तर व्यस्त थी और लाभ अपना प्रमाण प्रत्यक्ष दिखला रहा था ।

×

×

×

जीवन को मथुरा आये आज पाँचवाँ दिन था । लेकिन शिल्पी का कहीं भी पता नहीं लग रहा था । वह एक होटल में ठहरा था और ऐसे ही दो दिन तक कसकर भटका निखिल । फिर जब उसे सफलता नहीं मिली तो दिल्ली लौट गया ।

तिलक द्वार से चौक तक मथुरा के विशिष्ट मन्दिरों का जमघट है । श्रावणी से लेकर जन्माष्टमी तक साँझ होते ही होली दरवाजे की सड़क भीड़ के रेलों से भर जाती है । जीवन का अनुमान था कि हो सकता है अखिल या शारदा झाँकी देखने आयें और इसी बहाने भेंट हो जाये ।

लेकिन आनन्द लहरियों में न बहकर तूफान बनकर मचल रहा था । फिर कहाँ गुञ्जायश थी कि दम्पति राग-रंग में भूलते और रंगरेलियों में भटकते फिरते ! न तो अखिल घर के बाहर निकला था और न शारदा । जीवन निराश हो होटल में लौट आया और संयोग की बात जब होटल के मैनेजर की मेज पर रखे एलस्ट्रेटेड वीकली के वह पृष्ठ पलट रहा था तो सहसा एक पुस्तक पर उसकी निगाह पड़ गई ।

पुस्तक का नाम था 'मनु की दिनचर्या' । लेकिन उस पर चित्र बना था एक तरुणी का, जिसकी एक लोल-लटक कपोल पर झूल रही थी । चित्र के नीचे डिजाइनर का तीन अक्षरों का नाम था अखिल ।

जीवन इतना चौंका कि उसकी कोई सीमा नहीं रही । अखिल और वह उसकी कलाकृति ! कहीं में भ्रम में तो नहीं हूँ ! कोई दूसरा चित्रकार भी अखिल हो सकता है । मनु की दिनचर्या पर एक सुन्दरी का चित्र ! क्या यही है, आज की भारतीय संस्कृति, कला और शिल्प !

जीवन यह सब सोचता रहा और प्रातः उस पुस्तक के प्रकाशक के पास

: ६५ :

निखिल दो ही दिन बाद मथुरा से लौट आया था । इससे रंजना को प्रसन्नता नहीं हुई । वह सोचने लगी कि निखिल एक दूकानदार है और दूकान-दार अपना अधिक समय कहीं नहीं दे सकता ।

लेकिन जीवन अभी तक नहीं लौटा था । रंजना का अनुमान था कि जीवन खाली हाथ नहीं लौटेगा । वह टिक गया है तो उसके यह अर्थ होते हैं कि वह बीजा जी को ढूँढ़कर ही रहेगा ।

निखिल रंजना से यह कह गया था कि दो-चार दिन बाद फिर जाऊँगा और पता करूँगा, भइया मिलेगे जरूर । हम लोगों को निराश नहीं होना चाहिये ।

सहसा मथुरा से जीवन का तार रामानन्द के पास आया । जिसको लेकर वह चन्द्रभान बाबू के पास पहुँचे ।

तार का आशय था कि निखिल यहाँ है । निखिल या और किसी घर के बड़े-बूढ़े को यहाँ आना चाहिये । क्योंकि मेरी कोशिशें बेकार हो रही हैं ।

चन्द्रभान बाबू ने उसी समय निखिल को धुलाकर जीवन का तार दिखलाया और कहने लगे—“कोई-न-कोई बस या मोटर मिल जायेगी, जल्दी जाओ निखिल, यह लो रुपये ।” यह कहकर उन्होंने कुछ दस-दस के नोट जेब से निकालकर उसको दे दिये ।

निखिल जाने की तैयारी करने लगा तो उसके पास रानी आगई और वह विद करने लगी—“भइया ! मैं भी चलूँगी । मेरे जाने से भाभी पर अधिक जोर पड़ेगा और वे जरूर आ जायेंगी । इसके अलावा जन्माष्टमी का त्यौहार है, मथुरा की झाँकियाँ भी देख लूँगी ।”

निखिल ने आनाकानी की तो वह अपना प्रस्ताव माँ के पास ले जा पहुँची । वहाँ चन्द्रभान भी बैठे थे ।

यों तो सुभद्रा रानी को मथुरा कभी नहीं जाने देती । लेकिन पति के समुल्ल वह उसका विरोध नहीं कर पाई । बाप ने अनुमति दे दी और रानी ने जल्दी-जल्दी जाकर अपनी अटैची ठीक करने लगी ।

मेरे घर में रहो चल कर !”

शारदा कुछ उदास हो आई। चीनी का शरबत एक गिलास में भर जीवन के आगे बढ़ाती हुई वह बोली—“जीवन भइया, तुम नहीं जानते कि तुम्हारे घर में जब हम लोग जाकर रहेंगे तो बहुत बड़ा विस्फोट हो जायेगा। अभी पहले के ही दोषारोपणों को लेकर हम दोनों प्राणी पछता रहे हैं। फिर यह नया कार्य घर में सास-ससुर को बिल्कुल सह्य नहीं होगा। तुम्हारे पिता जी ने डाक्टर बसु का बिल चुका दिया और तब तक दूसरी घटना यह घट गई कि मेरे पिता ने रंजना के साथ तुम्हारा व्याह तय कर दिया। सास-ससुर ने लाँछन लगाया कि मेरी सम्मति से ही रंजना का व्याह तय हुआ। क्योंकि पहले यह योजना थी कि उसका व्याह निखिल से होगा। घर में बड़ी हाय-हत्या हुई और मजबूर हो कर हम लोगों ने घर के बाहर कदम निकाला। दूर क्यों जाते हो, प्रमाण सामने है। अभय की कोठी में जब हम लोग रहे तो यह सुनने में आया कि हम सब अभय की दया पर जी रहे हैं, फिर बताओ किसी के घर जाकर रहना कैसे सम्भव हो सकता है ?”

जीवन शरबत पीते-पीते शारदा की सारी बातें सुन गया। उत्तर में वह बोल उठा—“भाभी ! घर वाले तो कुछ-न-कुछ कहते ही रहते हैं। आदमी को अपना काम करना चाहिए। जब ऐसी बातें हैं तो जैसे यहाँ किराया देती हो क्या दिल्ली में किराये पर घर नहीं मिल सकता ?”

“मिल क्यों नहीं सकता है जीवन बाबू ! लेकिन वे अब वहाँ रहना नहीं चाहते हैं। उन्हें कैसे समझाऊँ ?”

शारदा की इस बात पर जीवन जोरदार शब्दों में बोला—“अखिल भाई को मैं समझा लूँगा !”

अखिल आ गया था। उसकी जीवन से काफी देर तक बातचीत हुई। वह अपनी जिद पर अड़ा रहा और जीवन अपनी टेक पर !

रात को अखिल होटल जाकर जीवन का सामान मजदूर से घर लिवा लाया और फिर दोनों ने साथ-साथ भोजन किया। लेकिन इसके बाद जब तक तौद ने अपना चँवर नहीं डुलाया दोनों में बातें होती रहीं जिसमें बीच-बीच शारदा भी बोल उठती थी।

कवि के आने की राह देखने लगे ।

×

×

×

अभी साँझ का झुटपुटा धरती पर उतरा ही था कि कमरे में घना अन्धेरा हो गया । शारदा ने मिट्टी के तेल की दिवरी जलाकर आले में रख दी और फिर जीवन तथा पति के निकट जा बैठ गई ।

प्रमोद अब स्वस्थ हो गया था । वह बाहर आँगन में बैठा खड्ग की चिड़िया से खेल रहा था और विनोद को आज पतंग उड़ाने की सूझी थी तो वह अब तक अन्य बच्चों के साथ छत पर खेल रहा था ।

जीवन कह रहा था—“आप अपना विचार बदल दीजिए अखिल भाई ! छोटे-छोटे बच्चे लिये परदेश में पड़े हो, यह अच्छा नहीं लगता । मेरी बात मानो, दिल्ली चलो; वहाँ पर जैसा आप चाहते हैं मैं वही करूँगा । किराये पर घर दिलवा दूँगा । बस, फिर आप सब के पास रहते हुये भी सबसे अलग ही रहेंगे ।”

“नहीं, जीवन नहीं । मुझे विवश मत करो । मैं तुम्हारे प्रेम और व्यवहार का कायल हूँ, मुझे मजबूर न करो मित्र !” अखिल ने ऊबकर यह कहा और उठकर खड़ा हो कमर पर दोनों हाथ बाँध टहलने लगा ।

तब जीवन शारदा की ओर उन्मुख हुआ और बोला—“भाभी ! तुम्हीं समझाओ अखिल भाई को । मेरी बात तो ये मानते ही नहीं ।”

शारदा असमंजस व्यक्त करती हुई बोली—“जीवन भइया ! यदि मैं यह कहने में समर्थ हो पाती तो देश छोड़ परदेश क्यों आती ? ये किसी की नहीं मानेंगे । मैं क्या बताऊँ !”

“नहीं भाभी ! कन्धे डालने से काम नहीं चलेगा । अपना अपना ही होता है । लाठी मारने से भला कहीं पानी अलग-अलग हो जाता है ? ऐसी जिद जिसमें भविष्य बनता हो तभी उचित है, वरना सर्वथा अन्याय-संगत !”

जीवन बात समाप्त कर शारदा के उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था तभी बाहर से सहसा किसी ने पुकारा, दोनों चौंककर उधर देखने लगे और टहलता हुआ अखिल चौखट पर पहुँच गया ।

बाहर बिजली का जर्दीला प्रकाश प्रमुख-द्वार पर पड़ रहा था और हवा

दोनों भाई-बहन जब घर के बाहर आये तो रिक्शे पर बैठते ही निखिल ने रानी से कहा—“अभी रंजना के घर खबर नहीं पहुँची होगी कि भइया मिल गये । चलो रानी अब चार भी बज रहे हैं, रंजना को अस्पताल में खबर देते चलें।”

रानी ने स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया और थोड़ी देर बाद ही दोनों अस्पताल पहुँच गये ।

रंजना ने जब यह सुखद समाचार सुना तो उसकी आँखों में प्रसन्नता के आँसू भर आये । वह दुखिया मन से बोली—“काश ! प्लास्टर खुल गया होता तो मैं भी आप लोगों के साथ जा पाती । अस्पताल में पड़े-पड़े जी ऊब गया है । आज पिता जी से कहूँगी कि नाहक खर्च उठा रहे हैं, अब मुझे घर ले चलें।”

रंजना के प्रति रानी और निखिल दोनों ने समवेदना प्रकट की । फिर बात की बात में वे स्टेशन जा पहुँचे ।

: ६६ :

कुमारी आज बहुत दिनों बाद रंजना से मिलने अस्पताल गई थी । रंजना ने उसकी अभ्यर्थना की और बताया कि जीजा जी मथुरा में हैं । जीवन वास्तु कई दिनों से उनकी तलाश में गये थे । आज उनका तार आया है, निखिल और रानी भी अभी-अभी मथुरा गये हैं ।

कुमारी का हृदय बल्लियों उछलने लगा और मन-मयूर अतीव प्रसन्नता से नाच उठा । वह थोड़ी देर रंजना के पास रुकी फिर जल्दी-जल्दी कोठी आई और माँ तथा भाई को अखिल के मिलने का समाचार सुनाने लगी ।

इस पर अभय और रेणुका में परस्पर कुछ बातें हुई और दोनों माँ-बाप

जीवन और निखिल को लौटा दूँ; मगर इसके बाद की स्थिति और भी भयानक हो जायेगी। गयाप्रसाद भी आ सकते हैं और उसके बाद पिताजी भी। जब पता चल गया है तो बड़ों को परेशान करने से कोई लाभ नहीं। जैसा जीवन कहता है मैं किसी के यहाँ न रहकर अलग किराये के मकान में रहूँगा। इसमें यदि किसी को आपत्ति हुई तो मैं किसी की परवाह नहीं करूँगा।

अखिल एक निश्चय पर पहुँच गया था। रात अपनी भरपूर जवानी पर धी और तारों की ज्योति दीप्ति को प्राप्त हो रही थी। दूर सुदूर व्यवधान पर भीमुरों की शहनाई बज रही थी, झिल्ली भँकार रही थी। अखिल की पलकें भिचने लगीं और विचार थकने लगे।

सबेरे जब कमरे में गोलमेज-सभा जुड़ी तो अखिल ने सहर्ष अपनी राय दे दी कि अभी दो-तीन दिन रुकना होगा। बाज़ार के काम से फुरसत पाकर ही दिल्ली चलूँगा।

निखिल हर्ष से फूल उठा। रानी निहाल हो गई और जीवन ने जैसे बहुत बड़ी विजय प्राप्त कर ली हो।

: ६७ :

जन्माष्टमी के बाद कवि सबके साथ दिल्ली आ गया। वह धर्मशाला में टिकना चाहता था, लेकिन जीवन ने एक होटल में उसके ठहरने की व्यवस्था कर दी।

पता लगा अभय और कुमारी भी वहाँ आ पहुँचे। दोनों ने बहुत आग्रह किया कि अखिल पुनः कोठी में प्रवास करे, किन्तु वह सहमत नहीं हुआ।

दम्पति रंजना के पास अस्पताल पहुँचे। रंजना के हर्ष का इस समय वाराणस न रहा था। साँझ होते-होते जब दोनों अस्पताल से वापस लौटे तो होटल

की गति इतनी मन्द थी कि शायद उस समय पेड़ का पत्ता भी नहीं डोल रहा था । अखिल ने पहचाना और आगन्तुक व्यक्ति ने जब उसके चरण स्पर्श किये तो उसके मुँह से स्नेह भरा मृदु-स्वर निकल गया—“आओ निखिल ! कहो अच्छे तो रहे ।”

निखिल के पीछे उत्सुक रानी खड़ी थी । अखिल ने उसके सिर पर हाथ फेरा और दोनों के साथ-साथ अन्दर आता हुआ बोला—“लो शारदा ! निखिल और रानी को भी जीवन ने घुला लिया ।”

शारदा हँस पड़ी और जीवन मुस्कराता हुआ कहने लगा—“आखिर और चारा ही क्या था ? मजबूर होकर मुझे तार देना पड़ा । अब हम एक से तीन हो गये हैं, अखिल भाई की जिद नहीं चलेगी । उन्हें दिल्ली चलना ही होगा ।”

इस पर सब लोग हँस पड़े । छत पर से आता हुआ विनोद अपनी धुआँ रानी से लिपट गया और तब तक निखिल ने प्रमोद को अपनी गोद में उठा लिया था ।

प्रसंग मिला-भेंटी में बदल गया । और रात के दूसरे पहर में जब सभी भोजनादि से निवृत्त हो चुके तो निखिल ने चन्द्रभान बाबू का सन्देश अखिल को बताया । अखिल ने बहुत टालने की कोशिश की लेकिन जीवन के तर्क, उसकी सहानुभूति, निखिल का सौहार्द और रानी की श्रद्धा ने अखिल को हैरान कर डाला ।

निष्कर्ष कुछ नहीं निकला । अखिल ने यह कहकर सब से फुरसत पाई—“अच्छा मैं विचार करूँगा, कल सबेरे ही बता दूँगा कि मैं तुम लोगों के साथ जाऊँगा या नहीं ।”

रात की डोली धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी । घटाटोप अन्धेरा था । नीला आकाश श्याम वर्ण-सा प्रतीत हो रहा था और उसमें तारे झाँक रहे थे जुगनु की तरह । घर में नींद ने सब पर अपना जादू डाल दिया था; लेकिन अखिल उससे रूठा था । उसके मस्तिष्क में इतनी उलझन थी कि पलकों मुँदने का नाम ही नहीं लेती थीं । वह सोच रहा था कि शायद मुझे दिल्ली जाना ही पड़ेगा । बात का जवाब लाठी से देना हिंसा का द्योतक है । दुनिया में सबको खुश रख कर चलना पड़ता है । यह भी हो सकता है कि मैं अपने विचारों पर अडिग रहूँ ।

भी आर्थिक सहायता लेने के लिए वह तैयार न था । पास में पैसा नहीं था और जो पुराना उधार पड़ा था निकट भविष्य में उसके मिलने की कोई आशा नहीं थी । अखिल उद्विग्न था । शारदा हैरान थी । दोनों आशा पर अवलम्बित और समय आगे भाग रहा था ।

: ६८ :

चन्द्रभान बाबू अखिल की ओर से पूर्णतया निश्चित नहीं हो पाते थे । वर्तमान उनके मन में यह बात खटकती रहती कि अखिल घर में आकर क्यों नहीं रहता । एक दिन उन्हें इस चिन्ता ने बहुत हैरान कर डाला । तब वे अखिल को पास बुलाकर कहने लगे—“जाओ निखिल ! अखिल से कहना कि पिताजी ने तुमको बुलाया है । उसको अभी अपने साथ लिवा लाओ ।”

निखिल जब भाई के पास पहुँचा तो वह इन्कार नहीं कर सका । उसके साथ घर चला आया ।

चन्द्रभान आते ही उससे कहने लगे—“अखिल, क्यों हैरान करते हो मुझको ? घर में आकर रहो । बाहर रहने से मेरी बदनामी होती है ।”

अब समय तीसरे पहर का था । कमरे में पंखा पूरी रफ्तार में चल रहा था । चन्द्रभान बाबू पलंग पर बैठे थे । आज उनकी छुट्टी थी और छुट्टी के दिन प्रायः उनकी घर पर ही रहकर आराम करने की आदत थी । सुभद्रा पलंग के पास आराम-कुर्सी के हथों पर दोनों हाथ फैलाये बैठी थी और अखिल के आते ही रानी भी उत्सुकतावश माँ के बगल में आ बैठी थी । अखिल और निखिल दोनों बाप के सामने कौच पर बैठे थे । अखिल को उत्तर में कुछ भी सोचने की जरूरत नहीं पड़ी । वह सहज स्वर में कहने लगा—“इसमें बदनामी किस बात की है पिताजी ! मैं कमाकर खाता हूँ, किसी से माँगकर नहीं, और कमाना

में जीवन मिला । उसने करौलबाग में एक कमरा किराये पर तय कर लिया था । अतः रात के पहले पहर में ही अखिल और शारदा अपने नन्हें-मुन्नों के साथ वहाँ पहुँच गए ।

निखिल और रानी जब माँ-बाप के सामने पहुँचे और अखिल की क्या योजना है यह सब उनको बताया, तो सुभद्रा उबलकर बोल पड़ी—“ऐंठ बहुत है अखिल में, तो अपनी ऐंठ लिए बैठा रहे । मैं उसके पैर पखारने नहीं जाऊँगी कि आकर घर में रहो । लड़ाई-झगड़ा घर-घर होता है । लेकिन कोई इस तरह का नाटक नहीं करता फिरता । यह लड़का दुनिया को तमाशा दिखा रहा है, तमाशा !”

चन्द्रभान अब चुप न रह सके । वे भी गुस्से में भरे हुए थे कि अखिल को पहले घर आना चाहिये था, यह होटल में ठहरने का कौन-सा तरीका है ? क्या हम सब लोग मर गये हैं ? वे बोले—“निखिल की माँ ! जब खोटा सिक्का पल्ले पड़ जाता है तो वह चलाए नहीं चलता । खिसियाकर आदमी उसे फेंक देता है । तो बस अब अखिल के लिए यही समझ लो । मैं उसके पैरों पर टोपी रखने नहीं जाऊँगा ! छोड़ो, जितना उसके पीछे-पीछे दौड़ा जायेगा उतना ही वह हाथ-पाँव फैलायेगा ।”

इस तरह दम्पति में देर तक बातें होती रहीं । निखिल और रानी वहाँ से चले गये थे । वे दोनों आपस में योजना बना रहे थे कि हम लोगों को सबेरे ही होटल पहुँच जाना है ।

प्रातः जब निखिल और रानी यह समाचार घर लाये कि अखिल भइया करौलबाग में एक किराये के घर में चले गये हैं तो सुभद्रा ने मन-ही-मन आत्म-सन्तोष की साँस ली; किन्तु प्रकट में कुछ नहीं कहा ।

चन्द्रभान का चेहरा उदास हो गया और लाचारीवश उनके मुँह से निकल गया—“चलो कोई हर्ज नहीं, अखिल की ही ज़िद रहे । मुझे क्या, मैं तो उसकी बढ़ती का ही साथी हूँ । कहीं भी रहे सुख से रहे ।”

और सुख के नाम पर इस-समय अखिल तथा शारदा दोनों बिल्कुल रीति थे । हर काम का फेर देर में बनता है । इधर काफी दिन वह मथुरा में रहा था, दिल्ली के बाज़ार में आकर सबसे पहले काम प्राप्त करना था । उसके बाद पारिश्रमिक का प्रश्न आता था । साथ ही जीवन, निखिल और अभय किसी की

हो गई, कमाओगे नहीं तो खाओगे क्या ?”

अखिल चुपचाप बैठा रहा। उसने माँ को कुछ जवाब नहीं दिया। वल्कि बाप की ओर उन्मुख हो कहने लगा—“पिता जी, दूकान पर बैठने की बात कहते हैं, उसके लिए पता नहीं मेरा मन क्यों नहीं भरता है। मैं अपने साथ अनावश्यक बंधन नहीं चाहता।”

“तो दूकानदारी एक अनावश्यक बंधन है अखिल ! रोजगार दाता है, यह क्यों भूल जाते हो !” चन्द्रभान बाबू यह कहकर अखिल की ओर देखने लगे और वह कहने लगा—“दूकानदारी अनावश्यक बंधन नहीं है पिताजी ! लेकिन मैं अधिक कमाना नहीं चाहता ! जितने में आसानी से गुजारा हो सके उतना ही पर्याप्त है।”

इस पर चन्द्रभान बोलते-ही-बोलते रह गये। सुभद्रा तमककर बोल उठी—“हाँ, तो यह कहो कि कमाना नहीं चाहते हो, पड़े-पड़े खाना चाहते हो ! बच्चे सामने हैं, उनका भी ख्याल है तुमको। क्योंकि तुम तो केवल अपना पेट भर लेना चाहते हो। आदमी को वक्त जरूरत के लिए चार पैसे जरूर बचाना चाहिए।”

इस पर चन्द्रभान पत्नी के समर्थन में तत्क्षणा ही कहने लगे—“हाँ अखिल, अब उस तुम्हारे काम में कोई फायदा नहीं है। मैं जोर देता हूँ कि तुम कबाड़िये बनकर न रहो, दूकान में बैठो और अपनी पोजीशन बनाओ।”

अखिल विचार-मग्न हो गया। तब निखिल उससे धीरे-धीरे कहने लगा—“हाँ भइया ! पिताजी ठीक कहते हैं। आप बड़े हैं मुझसे पहले जिम्मेदारी आपकी है। आप दूकान में आ जायेंगे तो मुझे बाहर निकल-पैठ कर विजनेस बढ़ाने का मौका मिलेगा।”

किन्तु अखिल धुत बना बैठा रहा।

चन्द्रभान बाबू फिर कहने लगे—“अखिल, दूकान ही नहीं, अब तुम्हें घर भी सम्हालना है। मैं बूढ़ा हो चला हूँ। रानी का ब्याह करना है, निखिल की भी बहू आयेगी। गृहस्थी बड़ी है, आमदनी नहीं बढ़ेगी तो खर्च कैसे चलेगा। थोड़े अपने धन्धे को, उसमें कुछ नहीं रखा है।”

लेकिन अखिल फिर भी चुप रहा।

कोई चोरी नहीं है । घर से बाहर रहने का अर्थ कुछ और नहीं केवल यह है कि घर में हमेशा दाँता-किटकिट मची रहती है । यह अच्छा नहीं । एक समय भोजन मिले लेकिन जीवन शांति से बीते, यही सोचकर मैं अलग रहता हूँ । और फिर वे लड़के कैसे होते हैं जो कमाने के लिए देश छोड़कर परदेश में भटकते हैं । मैं अपने में सन्तुष्ट हूँ । आपसे विनय करूँगा कि मुझे घर में रहने के लिए बाध्य न करें ।”

चन्द्रभान गम्भीरतापूर्वक अखिल की सब बातें सुन गये । फिर एक लम्बी साँस लेकर कहने लगे—“अखिल, अब आँखें खोलो, तुम्हारी कमाई मैंने देख ली । बहुत कुछ कमाकर घर भर दिया है । बाकी रहा है सो और कर लो । घर में निखिल अकेला है, दूकान में बैठो, अपना काम सम्हालो और इस कला-कारिता को छोड़ दो । कुछ नहीं रखा है डिजाइनों और कविताओं में ! दोनों भाई दूकान में बैठोगे तो दूकान का वाम और बड़ेगा । कुछ तरक्की की भी सोचो अखिल ! अब तक कला तुम्हारे सिर पर भूत बनकर सवार रही उसके हाथ जोड़ लो । घर का धंधा देखो जिसमें रोटियाँ हैं । क्या रखा है कोरी वाह-वाही में ! वहाँ और बच्चों को ले आओ और कल से निखिल के साथ दूकान पर बैठो । आज की दुनिया गुण की नहीं पैसे की भूखी है । पैसा पैदा करो अखिल, अगर आदमी बनकर जीना चाहते हो !”

अखिल कुछ संशय में पड़ गया । वह एकाएक कुछ भी जवाब नहीं दे पाया ।

इतने में सुभद्रा का स्वर तीखा होकर सबके कानों में समाने लगा—“कौन दाँता-किटकिट करता है अखिल, आनन्द से सब लोग रहते थे । बच्चों से घर हँसता रहता था । अपने आप ही बिना बताये चले गये । इसके बाद फिर आज सूरत देख रही हूँ भइया तुम्हारी ! कितने दुबले हो गये हो ! क्या घर में भी ऐसे ही रहते थे ! पहाड़ी धीरज में मकान लेकर रहे । उसके बाद अभय की कोठी में गये । इस बीच बेचारी वहाँ तो दो-एक बार आई भी और तुम मान लिये बैठे रहे कि मैं तुम्हें मनाने आऊँ ! सो कान खोलकर सुनलो अखिल, मेरी गरज न तब थी और न अब है । तुम्हारा मन हो तो आओ; मैं तो भले ही के लिए कहती हूँ । कलक नहीं मानती, इसलिए बड़बड़ाती हूँ और तुम लोग उसके उल्टे अर्थ लगा लेते हो । काम-धन्धे से लगने को कहो तो यह दाँता-किटकिट

उसी में तोत गई कि मेरी गरज नहीं है, आग्रो चाहे न आग्रो; तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए था । मुझे विश्वास था कि पिताजी के कहने को भइया नहीं टालेंगे, वे बहर आ जायेंगे । लेकिन.....”

“लेकिन क्या, मैंने उससे कह दिया कि न आये ! मेरे मुँह न लगे निखिल, तो मुँह है, वैसी बातें करो ।” यह कहकर सुभद्रा ने रानी को अपना लक्ष्य बनाया । वह उसके पास जा दोनों हाथ फटकार कर बोली—“और तू भी बहुत पिट-पिट करने लगी है रानी ! अखिल के सामने दाइयों जैसी बातें कर रही थी । और अब दूती बनकर निखिल का दिमाग घुमा रही है । खबरदार, जो तुम्हारे मुँह से कुछ सुना !”

चन्द्रभान बाबू पत्नी का गरजना सुनकर वहाँ आ गये थे और रानी को तनिक भी भय नहीं था । वह दृढ़ता के साथ माँ को जवाब दे रही थी—“तो मैंने क्या कह दिया है माँ ! मेरे पीछे बेकार पड़ गई ।”

“अभी मेरी पुराई कर रही थी और कहती है कि मैंने क्या कह दिया ? तू न बनाओ रानी, क्या कालेज में यही पढ़ती हो ?”

चन्द्रभान अब बीच में आगये और कहने लगे—“क्या बात है ? निखिल ने माँ ! क्यों बिगड़ रही हो ?”

सुभद्रा अब जोर-जोर से रोने लगी और कहने लगी—“ये दोनों कहते हैं कि अखिल को मैंने नहीं यहाँ आने दिया । वह मेरी बातों से चिढ़ गया तभी तो मैंने उसके लिए राजी नहीं हुआ । भला तुम्हीं बताओ, मैंने क्या कह दिया है उससे !”

चन्द्रभान तनिक गम्भीर हो गये और कुर्सी पर बैठते हुये बोले—“हाँ, एक बात तो है, तुम्हें अखिल से यह नहीं कहना चाहिए था कि मेरी गरज न तब थी और अब है । मैं तुम्हें मनाने नहीं जाऊँगी । जानती हो, यह मौका ऐसी बातें करने का नहीं था । अखिल को राह पर लाने के लिये उससे शान्ति और सह-व्यय से बात करनी थी । जानती तो हो उसका स्वभाव कि वह.....”

“तो मैंने कीन-सी लाठी मार दी है उसके ? तुम सब लोग मेरे पीछे क्यों हो ? मैं पुरी हूँ तो सब लोग मिलकर मुझे मार क्यों नहीं डालते ! हाय ! मेरी यह छीछालेदर !” कहकर सुभद्रा दोनों हाथों से सिर पीट-पीटकर

तब सुभद्रा चिड़चिड़ा उठी—“ये कुछ नहीं करेंगे, जो करते आये हैं उसी में जिन्दगी भर भटकेंगे। घर का पल्ला हल्का रहे या भारी, इनसे कोई मतलब नहीं। व्यर्थ कहते हो कुछ इनकी आँखें नहीं खुलेंगी।”

माँ की बात समाप्त होते ही रानी अखिल की ओर देख धीरे से बोल उठी—“हाँ भइया ! अब आपको घर में सहयोग देना ही चाहिए। अच्छा नहीं लगता है कि भाभी और बच्चे एक किराये के घर में रहें। अपना हवेली सा घर खड़ा है। क्या आपको इसका मोह नहीं लगता ?”

अब अखिल के होंठ हिले और मौन टूटकर स्वर बन गया। वह बोला—“रानी ! मोह क्यों नहीं लगता है; जिस घर में जन्म लिया वह मेरे लिए स्वर्ग से भी महान् है। लेकिन मैं एक बार फिर सबसे यही कहूँगा कि मुझे मेरी कला पर ही जीवित रहने दो, अन्य काम मुझे उलझाये रहेंगे और मन मारकर कोई काम नहीं होता।”

इस प्रकार साँझ तक सबमें वार्तालाप चलता रहा। अखिल माँ-बाप और भाई किसी के प्रस्ताव पर सहमत नहीं हुआ।

जब अखिल चला गया तो रात तक सुभद्रा बार-बार उसका प्रसंग चला कर कुछ-न-कुछ बड़बड़ाती रही। निखिल और रानी को यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। आखिर निखिल ने रानी से कह ही तो दिया कि माँ को पता नहीं क्या हो गया है जो कभी किसी से अच्छे बोलती ही नहीं। जब तक भइया बैठे रहे उनसे उखड़ी-उखड़ी बातें करती रहें और अब जब चले गये हैं तो भी इन्हें शान्ति नहीं, बड़बड़ाए ही जा रही हैं।

रानी भाई के समर्थन में उसका पक्ष लेती हुई कहने लगी—“हाँ, देखो तो, पता नहीं इनकी कैसी आदत है।”

सुभद्रा ने बाहर जाते हुए निखिल और रानी की बातें सुनीं तो वह पैर पटकती हुई वहाँ पहुँची और गरम होकर कहने लगी—“हाँ, मैं ही तो एक बद्दुर्लभ घर में बाकी तो और सब लोग बड़े अच्छे हो। क्या कह दिया मैंने अखिल को जो तुम पीठ पीछे मेरी निन्दा कर रहे हो ?”

साहस करके निखिल बोल उठा—“सब कुछ तो कह दिया माँ, और कैसे कहा जाता है। भइया का मन हो रहा था, वे चुप रहे और तुम इतना तीखा

कि मैं अपने पैरों पर खड़ा हो सकूँगा तभी वे बड़बड़ाती हैं, और क्रोध करती हैं। उनकी बातों को बुरा न माना करो निखिल !”

तब निखिल कहने लगा—“मैं कुछ नहीं कहता हूँ भइया, वे स्वयं ही पेट कूटकर पीर पैदा करती रहती हैं। मैं.....”

अभी निखिल इतना ही कह पाया था कि रानी बोल उठी—“भइया ! माँ अब बहुत चिड़चिड़ी हो गई हैं। बिना मतलब सब पर विगड़ा करती हैं। आखिर कहाँ तक चुप रहूँ ! मुँह से जवाब निकल ही जाता है।”

निखिल और रानी धीरे-धीरे चाय पी रहे थे और अब शारदा भी इन सब के बीच आ, बातें सुनने लगी थी। अखिल मुस्करा उठा। वह रानी से कहने लगा—“यहीं पर तुम भूलती हो रानी ! बड़े का बड़प्पन हर हाल में रखना पड़ता है। इसी में शोभा है कि माँ कुछ भी कहें और हम उनको पलटकर जवाब न दें। तुमने देखा होगा कि कल वे कितनी बातें करती रहीं और मैंने होंठ पर से होंठ नहीं उठाया। तुममें अभी बहुत बचपना है रानी !”

शारदा भी रानी को समझाने लगी। वह बोली—“हाँ रानी ! तुम्हें बीच में नहीं बोलना चाहिए था। घर में कौन ऐसा है जो माँ की आदत नहीं जानता। तुम नहीं जानती रानी ! तनिक में माँ यह कहने लगेंगी कि तुम मेरे पास आती-जाती हो, मैंने तुम्हें सिखा दिया है। ऐसे मौके न आने पायें, वही अच्छा है !”

रानी का स्वभाव भी उग्र था। लेकिन ऐसा नहीं कि जो कटुता और जड़ता को चुनौती देता। वह उत्तेजित होकर बोली—“भाभी ! वहाँ तक दबना चाहिए जब तक आँसू न निकलें और आँसू निकल आयें पत्थर फिर भी नहीं पसीजा तब उस समय का दबूपन निरी कायरता है। माँ की वाणी इतनी कटु है कि जब वे उसका प्रहार तुम पर और भइया पर करती थीं तो मैं उसकी गहराई तक नहीं पहुँच पाती थी। लेकिन अब जब स्वयं पर बीत रही है तो उसका अनुभव करती हूँ कि भाभी तुमने बहुत समाई की। हम लोग अबज्ञा नहीं कर रहे हैं। अपने हक के लिए लड़ रहे हैं, यह अनीति नहीं है। पिता जी ने कहा था और भइया सपरिवार घर में जाकर न रहते। ऐसा हो ही नहीं सकता था। लेकिन माँ अपनी कर्कशता को तनिक भी नहीं दार पाईं। इसीलिए भइया चुपचाप चले आये। तुम कुछ भी कहो भाभी, मगर मैं अनुचित व्यवहार के विरुद्ध आवाज

२५८

रोने लगी ।

चन्द्रभान बाबू मामलै को तूल-अर्ज नहीं देना चाहते थे । वे वहाँ से चले गये । निखिल और रानी भी धीरे-धीरे खिसकते बने और सुभद्रा बड़बड़ाती रही कि अखिल मुझे सब तरह खलता है । घर में रहता था तो रोज हाय-हाय होती थी और अब अलग रहता है तो भी कल से नहीं बैठने देता । तनिक देर के लिये आया और इतनी हलचल मचा दी ।

: ६६ :

अखिल को जब पता चला कि उसके चले आने के बाद घर में निखिल और रानी उसके पक्ष को लेकर कुछ बोले तो माँ से भँझट हुआ और पिताजी ने भी उन्हें दो-एक कड़ी बातें कहीं जिससे माँ देर तक बड़बड़ाती रहीं और रोती रहीं तो, उसने निखिल और रानी दोनों को समझाया कि वे उसके लिए माँ को नाराज न करें ।

प्रातः का समय था । अखिल कमरे में बैठा रात की बनाई हुई कविता में संशोधन कर रहा था । निखिल और रानी उसके पास बैठे थे और शारदा मेज पर चाय के तीन गिलास लाकर रख गई थी । विनोद कूद-कूदकर विस्कृत रहा था और प्रमोद माँ की गोद में किलकारियाँ ले रहा था । भाइयों की सख्ती गर्मी थी । खजूर का पंखा रानी के हाथ में डोल रहा था, जिसकी मन्द-मन्द बयार दोनों भाइयों पर पड़ रही थी । अखिल ने पेंसिल और पैड मेज पर रख दिया फिर गिलास उठा होठों से लगाता हुआ बोला—“निखिल ! माँ का स्वभाव जानते हो फिर भी उनसे उलझते हो, यह अच्छा नहीं । आदमी की विचारधारा यदि किसी के प्रति विश्वासदायिनी नहीं होती है तो अटूट विश्वास को उसके अविश्वास को नहीं बदल सकता है । माँ को मेरे ऊपर भरोसा नहीं है

: ७० :

रंजना का मन अस्पताल में पड़े-पड़े ऊब गया था । वह घर आना चाहती थी । लेकिन गयाप्रसाद इस भय से उसको नहीं लाना चाहते थे कि लड़की जात है, तनिक भी कोर-कसर रह गई तो लड़के वाले नाक-भौंह तिकोड़ेंगे ।

यद्यपि रंजना को इस समय कोई मानसिक क्लेश नहीं था, फिर भी वह अपने को पिंजड़े का एक पक्षी ही समझती थी । शारदा और अखिल उससे मिलने आते थे । कभी-कभी कुमारी भी पहुँच जाती थी अखिल के साथ । और रानी भी दूसरे-तीसरे दिन आती-जाती रहती थी । ऐसे ही निखिल और जीवन भी आते थे ।

एक दिन जीवन जब रंजना से मिलने आया तो उसने बाहर से ही देखा कि वहाँ निखिल बैठा है । रंजना उससे बातें कर रही है । वह पीछे लौट पड़ा और सोचने लगा कि रंजना और निखिल के आकर्षण में कोई अभाव नहीं पड़ा । वे दोनों पहले की ही भाँति अपने को नैकट्य में बाँधे हैं । मुझसे सम्बन्ध होने जा रहा है, शायद यह बात निखिल के मन पर चोट करती है ।

सहसा जीवन चौंक पड़ा—अरे, तो क्या रंजना निखिल की अमानत है ? ब्याह पहले उसी से होने जा रहा था । मैं कहाँ बीच में आ टपका ? रंजना का स्वाभिमान जाग्रत है । वह माँ-बाप का विरोध कर मर्यादा का उल्लंघन कभी नहीं करेगी । और निखिल भी ऐसी माँ का बेटा है जो उसके विपरीत कभी नहीं चलना चाहेगा । क्या वास्तव में मैं रंजना और निखिल के बीच में बाधा बन रहा हूँ ? इसका पता कैसे चले, समझ में नहीं आता ।

इसके बाद बरबस जीवन के पैर वार्ड की ओर घूम गये ।

वहाँ निखिल कह रहा था—“रंजना ! बात अब पक्की हो चुकी है, इसके लिये न मैं कुछ कर सकता हूँ और न तुम । बस यही समझ लो कि हम लोगों को एक सूत्र में बँधना नहीं बदा था ।”

रंजना जवाब में निखिल से कुछ कहना चाहती थी कि सहसा उसकी दृष्टि जीवन पर पड़ गई । वह बोल उठी—“आइये जीवन बाबू ! बैठिये ।”

ज़रूर उठाऊंगी ! भइया निखिल मेरे साथ हैं, एक दिन वह ज़रूर आयेगा जब मैं अपने व्यवहार पर पछतायेगी और हम सब लोग इकट्ठे रह सकेंगे ।”

रानी की बात कहीं पर भी तर्क-संगत नहीं थी । शारदा चुप रही । अखिल एकटक उसका मुँह निहारता रहा और निखिल आवेश में आ कहने लगा—
“भइया, ज़माने ने करवट बदली है । हर आदमी अपने हकों का भूखा है और उनकी माँग करना कोई गुनाह नहीं है । मेरा दावा है घर के वर्तन भागे-भागे नहीं धूमेंगे, उनको एक जगह संग्रह करना ही होगा । पिताजी हमेशा नीति की बात कहते हैं; लेकिन मैं का आधा-चावल अलग पकता रहता है । मैं और रानी दोनों ने कोई गुस्ताखी नहीं की, केवल बात का जवाब दिया है ।”

अखिल दोनों को समझाता रहा और शारदा भी अपना मत प्रदान करती रही । लेकिन ज़माने की ठोकर खाकर सजग हुई रानी और अश्व के घरोंदे से निकला हुआ निखिल दोनों अपने-अपने विचारों पर हड़ रहे ।

समय आगे बढ़ा । रानी और शारदा ने मिलकर रसोई बनाई । फिर जब भोजनोपरांत वह निखिल के साथ घर पहुँची तो सुभद्रा उसको देखते ही अंगारों पर पैर रखती हुई बोली—“रानी ! यह आज्ञादी नहीं चलेगी । तुम धूमोगी, और घर का काम कौन करेगा । आज वे भी भूखे ही दफ्तर गये हैं और चूल्हे में चूहे डण्डे पेल रहे हैं । जब तुम सब लोग मेरे सिर पर सवार हो तो मैं भी कहाँ तक रियायत करूँ ? वस आज से समझ लो मैं भी घर का पाई भर भी काम नहीं छुड़ूँगी । फिर देखूँ तुम कैसे घर के बाहर निकलती हो !”

रानी ने जैसे माँ की इस बात को सुना ही नहीं । वह निखिल से कहने लगी—“निखिल भइया ! दूकान जाओ, माधौ को भेज देना खाना बनाती हूँ, पिताजी को दे आयेगा और तुम्हारे लिए भी वहीं भेज दूँगी ।”

निखिल दूकान चला गया और सुभद्रा गुस्से से होंठ चवाती हुई अपने कमरे में जा, एक कुर्मी पर बैठ गई । इस समय आकाश में भादों की दोपहरी का सूरज तेजी से चमक रहा था । कमरे का पंखा बन्द था । उस सुभद्रा की साँसों से संगम कर रही थी और उसकी आँखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं ।

जानों को एक सूत्र में बँधना नहीं बँधा था । जीवन कहीं उसी आधार पर तो कुछ नहीं पूछना चाहता है ? वह अपनी मनःस्थिति पर काबू पा धीरे से बोली—
“कहिए, क्या पूछना चाहते हैं ?”

जीवन की दृष्टि रंजना के मुख पर जाकर केन्द्रित हो गई । वह धीरे-धीरे कहने लगा—“रंजना ! सुना है पहले तुम्हारा ब्याह-सम्बन्ध निखिल से होने वाला था । फिर एकाएक मुझसे क्यों तय हो गया ? क्या बात हुई थी ?”

रंजना का मुख उदासी में झूब गया । वह दुखी होकर बोली—“जीवन बाबू ! निखिल के घर की स्थिति अब आप भी अच्छी तरह समझते हैं । दीदी के साथ उस घर में जो व्यवहार हुआ इसीलिए माँ और पिताजी ने विचार बदल दिया । पहले उनका इरादा निखिल के लिए जरूर था ।”

जीवन रंजना की मुखाकृति देखकर भाँप गया कि रंजना का इस समय दुखी होना इस बात का प्रतीक है कि उसे निखिल से लगाव है और उसके विच्छेद में वह दुःख का अनुभव करती है । वह कुछ सोचता हुआ उससे कहने लगा—“तो इस ब्याह से तुम्हें शायद कोई खुशी नहीं है, रंजना !”

“खुशी ना खुशी की बात न पुछिये जीवन बाबू ! यह तो सब चलता ही रहता है । आप आज मुझसे वह सब क्यों पूछ रहे हैं ? समझ में नहीं आता !” यह कहते क्षण रंजना का स्वर किसी गहरी वेदना से कराह सा उठा था ।

जीवन रंजना की गतिविधि देख रहा था । वह उसके प्रति उदार होकर कहने लगा—“रंजना ! जो मैं स्पष्ट जानना चाहता हूँ, क्या तुम खुले शब्दों में ही उसका जवाब दोगी ?”

रंजना तथ्य को समझ गई कि जीवन क्या कहना चाहता है । वह संयत होकर बोली—“जीवन बाबू ! अब क्या पूछना रह गया है आपको । जो स्थिति थी वह मैंने बतला दी ।”

जीवन को इससे सन्तोष नहीं हुआ । वह व्यस्त स्वर में कहने लगा—“रंजना, शायद तुम मेरी जीवन-संगिनी बनकर सुखी नहीं रह सकोगी, यही सोच रहा हूँ और तुमसे पूछ रहा हूँ कि तुम इस ब्याह से प्रसन्न हो ?”

“यह मुझसे क्यों पूछते हो, जीवन बाबू ! माँ-बाप की खुशी मेरी खुशी है । उस पर मैं कुछ कैसे बोल सकती हूँ ?” यह कहकर रंजना जीवन की अ

निखिल ने शिष्टाचार का पालन किया और जीवन उसके निकट आ दूसरे स्तूल पर बैठ गया ।

थोड़ी देर तक दोनों बैठे; इसके बाद साथ-साथ उठकर बाहर चले आये ।

×

×

×

जीवन घर आकर और भी अधिक उलझन में पड़ गया । उसका मस्तिष्क इस समय बिल्कुल बेकार सा हो गया प्रतीत होता था । वह बार-बार सोचता कि क्या मन मारकर रंजना मेरे घर में सुखी रह सकेगी ! मैं कितने बड़े भ्रम में रहा जो उसको अपनी समझता रहा । परिस्थिति ड़ाँवाडोल हो रही है । पिताजी गयाप्रसाद बाबू पर बहुत नाराज हैं जैसी कि पिछले दिनों सम्भावना रही कि रिश्ता अब टूटा तब टूटा । वैसी ही स्थिति फिर उत्पन्न हो सकती है । यह मैंने कभी नहीं सोचा था । अब सारे साधन प्रस्तुत हैं और अगली सहालगों में व्याह अवश्य हो जायेगा, यह निश्चित है । लेकिन यह हलचल क्यों ? मैं किसी का मन मारकर अपनी इच्छा पूरी करने का मन नहीं रखता । फिर यहाँ पर एक का ही नहीं, दो आत्माओं का मिलन है । उसमें व्याघात बनना शोभा नहीं देता । मैं निखिल से बाद में मिलूँगा और रंजना से पहले । उसके अन्तर के भावों को पढ़ने व परखने की कोशिश करूँगा । यदि वह कुछ संकोच और लिहाज करेगी तो स्पष्ट बातें करूँगा ।

जीवन सारी रात विचारों में खोया रहा । नींद उससे छूटी रही और प्रातः का सूरज जब निकला तब भी वह उद्विग्न रहा । उसके बाद वह कालेज भी नहीं जा सका । प्रतीक्षा करने लगा कि कब चार बजे और मैं अस्पताल पहुँचूँ ।

आज केवल गोपेश आया था बाप के साथ । गयाप्रसाद दस-पाँच मिनट रंजना के पास रुके और फिर चले गए । तब साढ़े चार बजे के लगभग व्यग्र जीवन रंजना के सम्मुख जा बैठ गया । दो-एक मिनट इधर-उधर की बातें हुईं । फिर एकाएक जीवन ने पूछ दिया—“रंजना ! एक बात पूछूँ, क्या बताओगी ?”

रंजना कुछ चौंक गई । उसे कल की बात याद हो आई कि जब जीवन आ रहा था तो निखिल मुझ से कह रहा था कि बस अब यही समझ लो कि हम

: ७१ :

रात आ गई थी। अस्पताल विजली की रोशनी से भर उठा था। सफेद छत में लटक रहे विजली के पीले बल्ब पंखे की हवा में धीरे-धीरे भूल रहे थे और पंखों के परों की परछाईं दीवारों से लेकर छत तक पड़ रही थी। रंजना विचारों में खोई छत की ओर ताक रही थी। बार-बार वह यह सोचने लगती कि मैंने कोई सपना तो नहीं देखा है। क्या जीवन के विचार सचमुच बदल गये हैं ? अचानक ही इतना परिवर्तन हो जायगा, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। आज मेरी समझ में आ रहा है कि वास्तव में सनाई का बहुत बड़ा महत्व है ! जीवन जब मुझे वहन स्वीकार कर चुका है तो वह रामानन्द से खुले शब्दों में कह सकता है कि पिता जी, रंजना का ब्याह मुझसे नहीं निखिल से होना चाहिये। मेरे घर में भी माँ और पिता जी की विचारधारा बदल रही है। निखिल का भी मन सब ओर से उजला है। उपेक्षा और घृणा का स्थान आकर्षण में परिवर्तित हो गया है तो यह सब लक्षण कैसे हैं, यह स्पष्ट हो जाता है। काश ! मैं पहले जान पाती कि जीवन के अन्दर एक विशाल व्यक्तित्व छिपा है जो कर्तव्य की वेदी पर अपना उत्सर्ग करने में गर्व का अनुभव करता है।

जीवन घर आकर इतना प्रसन्न था मानो उसने बहुत बड़ी विजय प्राप्त कर ली है। वह सोच रहा था कि पहले पिताजी से कहूँगा फिर निखिल से मिलूँगा। उसके बाद इस सम्बन्ध में मुझे गयाप्रसाद बाबू और चन्द्रभान बाबू से भी मिलना होगा। रंजना के साथ निखिल का ब्याह हो जाने का मतलब यह होगा कि अखिल का जीवन सुखमय बन जायेगा। पुरानी पीढ़ी के पहियों ने ईंट को फोड़कर रोड़ा बना दिया और नौबत यह आ लगी है कि रोड़ा धूल बनने की तैयारी में है। लेकिन नई पौध अपने-पराये का भेदभाव भूल उस रोड़े को सुरक्षित रखेगी। अखिल प्रेम का भूखा है। उसे दुतकारना बहुत बड़ी भूल है। लेकिन विमाता सुभद्रा इन बातों को भला कब सोचती हैं। सुभद्रा के वाक्-वाणों ने जो घाव अखिल और शारदा के हृदय में कर दिये हैं, उन पर मरहम रंजना ही लगा सकती है। उसे उस घर की बहू बनना ही चाहिये।

देखने लगी ।

जीवन कहने लगा—“समझा रंजना, समझा ! तुमने जो नहीं बताया चाह। वह अपने-आप ही प्रकट हो गया । मैं किसी की खुशियां न खरीदना चाहता हूँ और न जबरदस्ती छीनने के ही पक्ष में हूँ । जो खुशी वरदान बनकर मिले वह मेरे लिये स्वर्ग-सुख से बढ़कर है और मेरी खुशी को रखने के लिये किसी को अपनी कुर्बानी देनी पड़े, यह मैं कभी नहीं चाहता । रंजना, जब तुम नारी होकर कुल की मर्यादा के लिए इतना बड़ा त्याग कर सकती हो तो मैं कापुरुष नहीं बनना चाहूँगा ! अब तक मैं तुमको भावी-पत्नी के रूप में देखता था लेकिन आज से तुम मेरी धर्म-वहन हुईं ।”

“यह क्या कह रहे हैं आप ?” रंजना एकदम चौंक उठी । उसकी भौंचक्की दृष्टि जीवन के मुख पर दीढ़ने लगी और जीवन हँसता हुआ कहने लगा—“चौंकती क्यों हो रंजना ! मैं भावावेश में नहीं हूँ; मेरी प्रज्ञा जाग्रत है । मैं निखिल के घर की खाई को पाटने की कोशिश करूँगा और इसके लिये शायद मुझे अधिक प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा, क्योंकि जब तुम जैसी गृहलक्ष्मी वहाँ पहुँच जायेगी तो वह घर अपने आप स्वर्ग बन जायेगा । तब अखिल भाई और तुम्हारी वहन घर में जाकर रहने से इन्कार नहीं कर पायेंगी । मैं बहुत प्रसन्न हूँ रंजना । पिताजी से कह दूँगा, वे स्वयं ही गयाप्रसाद बाघु को यह सलाह देने के लिये विवश हो जायेंगे कि रंजना का ब्याह निखिल से ही होना चाहिए ।”

रंजना चित्र-लिखी सी जीवन की ओर देख रही थी और जीवन के होठों पर मुस्कान थिरक रही थी ।

पक्षी कोटरों की ओर उड़े चले जा रहे थे । सबको अपने-अपने बसेरे पर पहुँचने की धुन थी । लेकिन जीवन अपना बसेरा छोड़कर वीरानियों में नहीं खोया था । उसे तो यह खुशी थी कि उसके हाथों एक बहुत बड़ा अहित होते-होते बच गया । रंजना उसकी नहीं, निखिल की अमानत है ।

रंजना मौन थी और निखिल जीवन से कह रहा था—“यह सब आपने ही किया है जीवन बाबू ! अचानक आप में इतना परिवर्तन हो जायेगा इसकी कल्पना भी नहीं की थी ।”

उत्तर में जीवन हँसते-हँसते कह गया—“जो मुझे करना चाहिये था मैंने ही किया है निखिल, और इससे मुझे एक बहुत बड़े सुख की अनुभूति हो रही है ।”

इस तरह देर तक निखिल और जीवन की बातें होती रहीं, रंजना मगन थी, निखिल अपने में सन्तुष्ट था और सबसे अधिक उल्लास था जीवन में । वह खुशी से फूला नहीं समा रहा था ।

: ७२ :

जब अखिल मथुरा में था तो उस अवधि में काफी दिन तक उसकी प्रतीक्षा कर लेने के बाद अभय ने कुमारी के लिए एक संगीत-मास्टर नियुक्त कर दिया था । अतः अब अखिल के वहाँ पर जाने का प्रश्न ही नहीं उठता था । कुमारी बहुत चाहती थी और अभय का भी मन था कि वह मास्टर छोड़ा दिया जाय और उसके स्थान पर अखिल की नियुक्ति हो जाय । लेकिन अखिल इसके लिये कदापि प्रस्तुत नहीं था । एक तो वह अब ऐसा सम्पर्क नहीं रखना चाहता था; जिसमें किन्तु-परन्तु की सृष्टि हो और दूसरी बात यह थी कि वह किसी के पैर पर पैर नहीं रखना चाहता था । दूसरे की जीविका पर डाका डालने वाला मनुष्य मनुष्य नहीं, पशु से भी अधम होता है ।

अखिल अभय के विशेष आग्रह और कुमारी के अनुरोध पर उनके साथ कभी-कभी कोठी चला जाता था । और शारदा, उसको तो कुमारी आये दिन अपने साथ खींच ले जाती थी ।

इस तरह रात बीत गई और जब सबेरे का आगमन हुआ तो जीवन नित्य-कर्म से निवृत्त हो, रामानन्द के पास अपना प्रस्ताव लेकर पहुँच गया ।

×

×

×

पहले तो रामानन्द बहुत लाल-मीले हुये; लेकिन जब तथ्य को उन्होंने सूक्ष्मता के साथ परखा तो जीवन की बात मान गये ।

जीवन को जैसे बहुत बड़ी निधि मिल गई । उसने अस्पताल जाकर रंजना को बताया कि मैंने पिता जी को समझा लिया है । वे राजी हो गये हैं ।

इतने में वहाँ निखिल आ गया और आते ही जीवन की बात सुनकर पूछने लगा—“कौन राजी हो गया है जीवन बाबू ?”

इस पर जीवन मुस्करा उठा और निखिल को बैठने का संकेत कर कहने लगा—“आओ बैठो निखिल ! तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर । मैंने अपने पिता जी को राजी कर लिया है कि वे गयाप्रसाद बाबू को इस बात के लिए विवश कर दें कि रंजना का व्याह तुमसे हो ।”

“अँय ! यह क्या कह रहे हैं आप, सम्बन्ध तो आपके साथ होने जा रहा है !” निखिल विस्मय-विस्फारित नेत्रों से जीवन की ओर देखने लगा और रंजना मन्द-मन्द मुस्कराती रही ।

जीवन अत्यधिक आत्मीयता से भर आया था । वह बोला—“नहीं निखिल, मैंने कुछ सोच-समझकर ही अपना विचार बदला है और वास्तविक विजय तो मेरी उस दिन होगी जब तुम रंजना के साथ प्रणय-बन्धन में बँध जाओगे ।”

रंजना अब तक चुप थी । निखिल भौंकका-सा बैठा था । उसकी ओर देख वह धीरे-धीरे कहने लगी—“एक बात शायद अभी आपको नहीं मालूम हुई है निखिल बाबू कि जीवन बाबू अतीत में जो मुझे भावी पत्नी के रूप में देखते रहे हैं, उसके प्रायश्चित्त में मुझे धर्म-बहन स्वीकार किया है ।”

“अच्छा !” निखिल दूना चौंक उठा ।

तब जीवन हँसने लगा और हँसी के मिस बोला—“हाँ निखिल, अब कोई भी ऐसी शक्ति नहीं जो मेरे शुभ कार्य में बाधा डाले ! मैं सबको मनवाकर ही रहूँगा कि रंजना और तुम्हारा दोनों का परस्पर एक सूत्र में बँधना अति उत्तम है ।”

कर रहे थे गयाप्रसाद मेरे साथ रंजना को बाँध रहे थे। अब वह विवशता प्रसन्नता में बदल गई है, इसका मुझे महान् सुख है।

इस तरह चन्द्रभान और गयाप्रसाद के घरों के बीच में जो दूरी आ गई थी उसको निकटता में बदलता देख, जीवन आनन्दातिरेक से भूम उठा।

किन्तु यह सब तो था, एक नई बात और हो गई थी। जीवन कुमारी को निक भी नहीं भुला पाता था। वह उसके अकृत्रिम सौन्दर्य पर इतना मुग्ध था कि दिन-रात यही चाहा करता कि वह सौन्दर्य-मूर्ति मेरे सामने बैठी रहे और उसकी रूप-माधुरी का पान करता रहूँ।

वास्तव में कुमारी की रूप-राशि विलक्षण थी। सुन्दर रानी भी थी, लेकिन उसको जीवन ने कवि की बहन के नाते हमेशा अपनी बहन ही समझा। पोर छवि तथा रूप-रंग रंजना का भी खूब निखरा हुआ था; किन्तु जीवन ने उसको भी उसी तराजू पर तौला जिस पर रानी को तौला था। कुमारी के प्रति जीवन की धारणा यह होने लगी थी कि काश ! कुमारी मेरे घर में बहू बनकर पालकी से उतरे और मैं स्वर्गीय सुख में विभोर हो जाऊँ !”

ने अपनी
र्थन करने

प्रसाद से
के हाथों

: ७३ :

बवौर आरम्भ होते ही रंजना का प्लास्टर कट गया और वह घर आ गई। घर में उसके ब्याह की खुशी की लहरें दौड़ रही थीं। यद्यपि सुभद्रा नाक-भौं निकोड़ती थी; लेकिन चन्द्रभान पूर्णतया सहमत हो गये थे। और गयाप्रसाद ने उनकी निखिल और रंजना की बात पक्की हो गई थी। अबसर हँसी-खुशी का था। माघ वदी एकदशी का मुहूर्त ठहरा। शारदा के सामने अब यह एक समस्या थी कि समुराल जाकर ब्याह में सास का हाथ बटाये और मैके में बोलमती का।

एक दिन जब कुमारी और अभय अखिल के घर में बैठे बातें कर रहे थे तो वहाँ अचानक पहुँच गया जीवन । वह निखिल और रंजना के सम्बन्ध में अखिल और शारदा से बातें करने आया था । इन लोगों को देखकर वह दुनियादारी के नाते बैठकर इधर-उधर की बातें करने लगा ।

वार्ता चल रही थी । शारदा सबके निमित्त जलपान के आयोजन में लगी थी । और कुमारी बैठी सबकी ओर टुकुर-टुकुर देख रही थी । सहसा कमरे के वातायन से हवा का एक झोंका आया जिससे उसकी सुरमई साड़ी का आँवल कन्धे से सरक गया । अपनी कमल-नाल जैसी आँगुलियों से वह उसको सुधारने लगी । तब तक उसकी दृष्टि सामने गई । जीवन उसकी ओर तिहार रहा था । कुमारी कुछ सकुचा गई । उसने दृष्टि नीची कर ली, और सिकुड़कर बैठ गई ।

जीवन ने देखा कुमारी अप्सरा के मानिन्द सुन्दरी है । बहुत ही भाग-शाली होगा वह व्यक्ति जिसकी यह रूप की खान अर्द्धांगिनी बनेगी ।

थोड़ी देर बैठकर दोनों भाई-बहन चले गये । तब जीवन ने रंजना और निखिल के व्याह का प्रस्ताव दम्पति के सामने रखा ।

शारदा और अखिल पहले तो बहुत चौंके । लेकिन जब जीवन ने अपनी सारी परिस्थिति बतलाई तो वे उसके पक्ष में आ अपना-अपना समर्थन करने लगे ।

×

×

×

जीवन के पहुँचने से पहले ही रामानन्द बाबू चन्द्रभान और गयाप्रसाद ने इस सम्बन्ध में बातें कर चुके थे कि चन्द्रभान निखिल को गयाप्रसाद के हाथों सौंप दें और गयाप्रसाद रंजना को ।

इसके बाद जब जीवन चन्द्रभान और सुभद्रा के पास पहुँचा और अपनी योजना बतलाई तो उन लोगों ने उससे विशेष तर्क नहीं किये । सुभद्रा जरूर ऊट-पटाँग बड़बड़ाती रही । लेकिन चन्द्रभान बाबू ने जीवन को यह कहकर सन्तोष दे दिया कि अच्छा मैं विचार करूँगा ।

जीवन ऐसे ही गयाप्रसाद के घर पहुँचा और अपना सुझाव फूलमती तथा गयाप्रसाद के सामने रखा तो उसने देखा और अनुभव किया कि दम्पति को उसके प्रस्ताव से अत्यन्त प्रसन्नता हुई । वह सोचने लगा कि बेबसी बस

निश्चय ने नीचे उतर आई, चलते-चलते वह कहती गई कि अभी आई और निखिल
ससुराल जीवन से यह कहने लगा—“जीवन बाबू ! आप चलकर सायबान के नीचे
बिठिये, मैं दो मिनट में आता हूँ ।” फिर सहसा उसका ध्यान कुमारी की ओर
गया । वह उससे बोला—“तुम भी बैठो कुमारी, रानी अभी आती है ।”

रानी चली गई थी और चला गया था निखिल भी ! अब रू की राशि
जीवन के सम्मुख ही एक स्टूल पर निखर रही थी । अन्धेरा बढ़ रहा था और
बाँद की चाँदनी जीवन को आलोकित कर रही थी । क्षण पंर क्षण बीतने लगे,
जीन वहाँ पलता रहा और न तो लौटा निखिल और पता नहीं कहाँ रुक गई
रानी !

नीचे सुभद्रा और शारदा चावल सहेजने में व्यस्त थीं । कुछ वासमती
चावल मोटे चावल में मिल गया था । इसके लिए सुभद्रा बड़बड़ा रही थी कि
रतने में रानी जा खूँटी से अपना शाल उतारने लगी । उसको देखते ही सुभद्रा
बरस पड़ी—“तुम्हारी तो देह नहीं लचती रानी ! हमेशा काम से जी चुराया
करनी हो, काम नहीं कर सकती तो बच्चों को तो सम्हाले रहो । वही चावल
मटके में भर रही थी कि विनोद और प्रमोद ने वासमती चावल फेंका दिये ।
देखो, कितने चावल उसमें मिल गये हैं । शाल लेकर कहाँ चलीं, पहले यह काम
निपटाओ !”

रानी के नथुने फूल गये और हल्का-सा गुस्सा आ गया । वह तिनक कर
बोली—“चावल मिल गये हैं तो मैं क्या करूँ ? मुझसे ये काम नहीं होते हैं
पाँ ! ऊपर कुमारी बैठी है । निखिल भइया और जीवन बाबू भी हैं । मैं... ।”

अब सुभद्रा को सहसा दुनियादारी का बोध हो आया । जीवन के प्रति जो
कटुता उसके मन में पहले होगई थी उसका अब लेशमात्र भी नहीं था; क्योंकि
जीवन अब उसके सम्मुख बिल्कुल स्पष्ट था; खुला आइना सा । और कुमारी की
वह इसलिए इज्जत करती की कि वह एक बहुत बड़े बाप की बेटी थी और
रानी से स्नेह रखती थी । वह रानी से बोली—“अरे पगली, जाड़े-पाले में उन
भोगों को ऊपर क्यों बिठा रखा है । जाओ नीचे बुला लाओ ।”

शारदा भी सास के समर्थन में रानी से बोल उठी—“हाँ रानी ! जाओ,
यहीं बुला लाओ न सबको ! मैं यह काम अभी निपटाती हूँ ।” इस पर रानी

ब्याह के एक मास पूर्व शारदा सुभद्रा के पास चली आई थी और निश्चय यह हुआ था कि वह दोनों पक्षों की एक प्रधान पात्री है, इसलिए ससुराल और पीहर दोनों घरों को उसे सम्हालना है।

कुमारी और अभय माँ रेणुका सहित दोनों पक्षों में शामिल होने का निश्चय कर चुके थे। लेकिन जीवन और रामानन्द केवल वर पक्ष की ओर से ही शामिल होना चाहते थे।

दोनों घरों में ब्याह का उछाह था। तिथि बिल्कुल निकट आ गई थी। अतः अखिल ने भी किराये के कमरे में ताला लगा दिया और घर में आकर कामों में बाप का हाथ बटाने लगा।

×

×

×

रंजना अब पूर्ववत् सुचारु रूप से चलने-फिरने लग गई थी। इसी बीच कुमारी का उससे विशेष घनिष्ठत्व हो गया था। वह प्रायः जब रानी के घर जाती तो रंजना से मिले बिना नहीं लौटती।

माघ की वसन्ती बयार धीरे-धीरे डोल रही थी। उसमें ठिठुरन थी, सिहरन थी और थी कुछ गुलाबी मादकता। कुमारी खुली छत पर बैठी रानी के साथ ढलते सूरज को देख रही थी। आज वह कोठी से अकेले ही आई थी। दोनों सहेलियाँ परस्पर हँस-बोल रही थीं कि इतने में जीवन का हाथ पकड़े हुये निखिल वहाँ आ पहुँचा और आते ही रानी की मीठी भर्त्सना करता हुआ बोला—“रानी ! तुम कितनी पागल हो, इतनी ठण्डी हवा चल रही है और यहाँ बैठी हो ! खुद तो खुद आई और बेचारी कुमारी को भी घसीट लाई। जाओ शाल ओढ़ लो।” इस पर रानी खिलखिला पड़ी और बोली—“भइया मुझे जाड़ा नहीं लगा है। और कुमारी एक जागीरदार की बेटी है, इसलिए जाड़े का उसे अनुभव नहीं होता।”

रानी के इतना कहते ही कुमारी के दूधिया दाँत गुलाबी अधरों से बाहर झाँकने लगे। जीवन मुस्करा उठा और निखिल की भी हँसी छूट गई।

उजाले को ग्रसता हुआ अन्धकार धरती पर आने की कोशिश में था। वह चहाती हुई चिड़ियाँ उसके भय से घोंसलों की ओर उड़ी चली जा रही थीं। गोघुल हो आई थी। रानी थोड़े से विनोद का प्रदर्शन कर जल्दी-जल्दी शाल

अभाव व्यसन बन, उसकी जिन्दगी के साथ ऐसा जुड़ जाता है कि फिर वह आजीवन उससे मुक्त नहीं हो पाता । आज को यदि अखिल भाई के साथ जिद वाला दुर्भाग्य न होता तो वे बहुत आगे बढ़ चुके होते । एक देव-पुरुष और उसकी समाज में यह छीछालेदर ! मैं खूब जानता हूँ कुमारी, कि दुनिया मुँह देखती है, गुण नहीं ।” इस पर कुमारी ने समवेदना प्रकट की और दोनों में अखिल का ही प्रसंग चलने लगा ।

नीचे रानी भुँझला रही थी । निखिल कह रहा था—“कल इन्कम टैक्स की तारीख है, विगत दो वर्षों की फाइलें अभी खोज कर दूकान ले जानी हैं; जल्दी करो रानी ।” यह कहकर वह जीवन के पास पहुँच गया ।

उसके थोड़े ही देर बाद रानी बगल में कुछ फाइलें दाबे जा उपस्थित हुई । फिर सब लोग नीचे आये और आतिथ्य को ग्रहण कर कुमारी अपने घर चल दी । जीवन भी निखिल के साथ बाहर आगया ।

: ७४ :

निश्चित मुहूर्त में रंजना और निखिल का व्याह-कार्य सम्पन्न हो गया । खूब धूमधाम रही । अखिल सपरिवार व्याह के बाद भी घर में ही बना रहा । वह अपने किराये के घर में वापस जाना चाहता था; लेकिन चन्द्रभान बाबू इसके विपक्ष में थे । वे किसी भी शर्त पर अखिल को नहीं जाने देना चाहते थे और यही प्रयत्न था रंजना, रानी और निखिल का ।

शारदा बात-वात पर पति का मुख देखती थी, क्योंकि वह उसके साथ बहुत भटक चुकी थी और भविष्य के लिये बहुत डरती थी कि कहीं फिर वैसे ही स्थिति न आजाय जिसमें मौत और जिन्दगी का खेल खेलना पड़ जाय । अब घर में रंजना आ गई थी और वह वहन के स्नेह-सूत्र से पृथक् रहने से घबड़ाती

२७२

जब जीने की ओर बढ़ी तो वहाँ मिल गया निखिल । वह कहने लगा—“रानी! मेरे कमरे में चलो, कुछ काम है उसे तुम कर दो । दूकान से इसीलिए आया था कि रास्ते में मिल गये जीवन बाबू !”

रानी आसमान से गिरी खजूर में अटकी ! वह निखिल के पीछे-पीछे चल दी ।

अन्धेरा अब घना हो चला था । जीवन ने पास ही लगा स्विच ऑन कर दिया जिससे सायबान की नीली पुती टीन एकदम चमचमा उठी । उसने देखा कि जब उसके युगल कर परस्पर बद्ध हो दीप देवता को प्रणाम कर रहे थे उस समय कुमारी ने भी वही किया ।

जीवन का हृदय तीव्र गति से धड़क रहा था । वह कुमारी से कुछ बोलना चाहता था । लेकिन शब्द कण्ठ-द्वार तक आकर वापस लौट जाते थे और यह आशा तो थी ही नहीं कि कुमारी स्वतः कुछ कहेगी ।

आखिर पुरुष अपना संयम नहीं निर्वाह कर पाया । वह कुमारी की ओर बेमुश्किल नज़रों से देखता हुआ अतीव मृदु स्वर में बोला—“अरे; निखिल कहाँ रह गया और रानी भी नहीं आई अभी ! कुमारी, तुम भी चुप बैठो हो । कहो, अभय बाबू कहाँ हैं ?”

तार बज उठा और स्वर-स्पन्दन की लहरियों पर डोलने लगा । कुमारी धीरे-धीरे कह रही थी—“जब मैं आई थी तो भइया कहीं काम से गये हुए थे । कहिए, आप तो अच्छे हैं ?”

“शुक्रिया है उस ऊँर वाले का ।” कहकर जीवन ने दूसरा प्रश्न कर दिया । वह बोला—“तुम संगीत के मामले में बंसल को अच्छा समझती हो कुमारी या हमारे अखिल भाई को । मेरी समझ से तो तुम्हें अब जब कि अखिल भाई आ गये हैं, उनसे ही नृत्य और संगीत की शिक्षा लेनी चाहिये ।”

“तो क्या आप जानते हैं कि मैंने और भइया ने इसके लिये प्रयत्न नहीं किया ? हम लोग कोशिशें करके हार गये । लेकिन अखिल बाबू नहीं राजी हुए तब आप ही बताइये कि ऐसी स्थिति में क्या हो सकता है ?”

कुमारी सहज ही मृदु स्वर में यह सब कह गई और जीवन उससे कह लगा—“हाँ कुमारी, आदमी में चाहे जितनी प्रतिभा हो; लेकिन कोई-न-क

मैं इन सब पचड़ों में बिल्कुल नहीं पड़ना चाहता । आपसी सम्बन्ध दूर से अच्छे लगने हैं । तुम्हें तो मालूम है कि मैं घर से अलग केवल इसलिए जाता हूँ, जिसमें घर वालों के हृदय में मेरे लिए गुञ्जाइश रहे । अधिक मिठाई थोड़े पड़ जाते हैं । और फिर एक बात यह भी है कि मुझे कुछ इन दिनों और से न जाने कैसी विरक्ति सी हो गई है, मन चाहता है कि किसी प्रदेश में चला जाऊँ, जहाँ अपना कोई न हो ।”

जीवन गम्भीर हो गया और बोल उठा—“अखिल भाई ! आप भावुकता प्रवाह में बह जाते हैं और तथ्य के निकट पहुँचने की कोशिश नहीं करते कि मैं अपने हैं, बेगाने बेगाने ।”

अखिल मौन था । उसके अक्षरों पर मुस्कराहट खेल रही थी । रसोई में बर्तन कूट रहे थे । लकड़ियाँ शायद कुछ गीली थीं जिससे कमरे में धुआँ भर रहा था । जीवन ने देखा कि शारदा की आँखों में धुआँ भर गया है जिससे उसकी आँखें कड़वी होकर खारी पानी बहा रही हैं । उसके हृदय पर हथौड़े की चोट थी और वह विह्वल होकर बोल उठा—“भाभी ! मालूम होता है कि लकड़ियाँ भी नहीं हैं, न हो कोयले डालकर अंगीठी जला लो ।”

घर में कोयला था ही नहीं । शारदा कुशलता के साथ बोल उठी—“नहीं भा ! उसकी जरूरत नहीं है, अभी चूल्हा जलता है चाहे जितना देख-भाल करो, लेकिन कोई-न-कोई चैले-गीले निकल ही आते हैं ।”

बात समाप्त कर शारदा चूल्हा फूँकने लगी । धुएँ के बादल कमरे से बाहर निकल कर मँडराने लगे और आग प्रज्वलित हो उठी । चूल्हा जलने

लगा । जीवन थोड़ी देर और बैठा । वह अब जाना चाहता था; लेकिन तब तक आ गई कुमारी ।

कुमारी अखिल के निकट आकर बैठ गई और शारदा रसोई से बाहर निकल उसके बीच आ खड़ी हुई । तभी मौका उपयुक्त देखकर जीवन ने यह बात बोली कि अखिल कुमारी को संगीत क्यों नहीं सिखलाता । कुमारी का पक्ष था; क्योंकि जीवन उसकी ओर था । वह हँसकर बोली—“हाँ जीवन, अब आप ही समझाइये न, अखिल भाई को !”

थी। किन्तु प्रायः यह होता है कि जिस बात की मनुष्य को आशंका होती है वह हर हालत में होकर ही रहती है। गारदा सब कुछ सोचती रही। लेकिन अखिल इस बात पर अड़ गया था कि मैं तो अलग ही रहूँगा। मेरे लिए शान्ति इतनी महँगी है कि उसको किसी भी शर्त पर भंग नहीं होने दूँगा। तुम्हारा मन है तो तुम सब के साथ घर में रह सकती हो। मगर मैं ऐसे बंधन में कभी नहीं बँधना चाहूँगा, जिसमें चार दिन की चाँदनी हो और फिर अन्धेरा पाख।

आखिर वह दिन आ गया जब अखिल शारदा को लेकर करीलबाग वाले घर में चला आया। रंजना की चौथी चल गई थी। वह इस समय पीहर में थी। सुभद्रा ने ऊपरी उपड़-चुपड़ बहुत किया; लेकिन उसका अन्तर्मान जो चाहता था वह हो गया। चन्द्रभान बाबू अखिल पर बहुत नाराज हुए कि वह घर न छोड़े। किन्तु वह न माना।

यद्यपि निखिल की बात अखिल ने नहीं मानी थी; फिर भी उसे सन्तोष था कि रंजना इस बिगड़ी हुई परिस्थिति को एक दिन सुधार कर ही रहेगी।

माघ बीत रहा था। गुलाबी जाड़ा वसन्ती बहार के साथ-साथ वह रहा था। अखिल अपने कमरे में बैठा प्रमोद को खिला रहा था और शारदा रसोई में व्यस्त थी कि इतने में जीवन ने प्रवेश किया। वह अखिल के पास आकर बैठ गया और कहने लगा—“कैसे बैठे हो अखिल भाई? आज कालेज में छुट्टी थी सोचा आपसे मिल आऊँ।”

अखिल इस पर इधर-उधर की बातें करने लगा। जिसमें जीवन का मन रम गया और एकाएक उसके मुँह से निकल गया—“अखिल भाई! एक बात कहूँ, मानेंगे आप!”

अखिल हँस पड़ा और हँसते-हँसते कहने लगा—“जीवन भाई, पूछो, कोई खास बात है क्या?”

“खास तो नहीं, मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप कुमारी को संगीत सिखलाना क्यों नहीं पसंद करते हैं? उस दिन अभय से मालूम हुआ कि कुमारी की श्रद्धा आप पर है और आप कहते हैं कि मैं दूसरे के पेट पर लात नहीं मारना चाहता, बंसल साहब बहुत धुरा मानेंगे। आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए।”

जीवन की इस बात पर अखिल ने बिना कुछ सोचे ही कह दिया—“जीवन

आइयों के बादल उनके सिर पर छाये बने रहते हैं।”

तुम नहीं जीवन कुछ जवाब देने जा ही रहा था तब तक सहसा उसकी दृष्टि कुमारी कोठी पर पड़ गई। कोठी पीछे छूट रही थी कार आगे बढ़ रही थी। जिस पर बहुत कुछ चौंका और पूछने लगा—“यह क्या कुमारी ! कोठी तो निकल गई; क्या मुझे छोड़ने चल रही हो ? क्यों कण्ट करोगी। गाड़ी रोको, मैं चला पड़े।”

लेकिन कुमारी के हाथ स्टीयरिंग व्हील पर घूमते रहे और मुस्कराती हुई कहने लगी—“इसमें कण्ट किस बात का जीवन बाबू ! मुझे शर्मिदा न दिये और, दो मिनट भी तो नहीं लगेंगे। कनाट प्लेस है ही कितनी दूर !”

“यह बात नहीं कुमारी। मैं तो सिर्फ इसलिये कह रहा था कि तुम्हें जाकर लौटना पड़ेगा। मैं कोई रिक्शा पकड़ लेता। तकलीफ करने की क्या जरूरत थी।”

जीवन के मुँह से यह सुनते ही कुमारी तनिक हँसी लाकर बोली—“अच्छा आप दुनियादारी के पूरे पंडित जान पड़ते हैं, जिसे आप तकलीफ कहते हैं। मैंने आपसे ऐसी सौके बहुत बड़ा महत्व रखते हैं। आतिथ्य सेवा से बढ़कर दूसरा कोई धर्म है !” यह कहते-कहते कुमारी की हँसी छूट गई और जीवन भी लखिला पड़ा।

दोनों में बातें चलती रहीं। जीवन का घर आ गया था। कार रुक गई और जब वह नीचे उतरा तो कुमारी से आग्रह करने लगा कि वह दो मिनट रुक कर फिर चली जाय। कुमारी ने उसको टालने की बहुत कोशिश की। किन्तु अन्त में वह उसके अनुरोध को टाल नहीं पाई। उसे जीवन के घर जाना पड़ा। वहाँ रामानन्द कुमारी को देखकर फूले नहीं समाये। बड़े स्नेह और आश्रय से वे उससे बातें करते रहे। फिर जब वह चली गई तो सोचने लगे कि कुमारी जैसी सुशील लड़की, मेरी बहू होती तो मेरा बुढ़ापा शान्ति और सुख के साथ निर्विघ्न कट जाता। जितनी सुन्दर है, उतनी ही शिष्ट और अधिक कुशल। मगर वह एक वैरिस्टर की लड़की है, इस घर के योग्य कहाँ ?” इस प्रकार रामानन्द बाबू देर तक इसी समस्या पर सोचते रहे और कुमारी प्रसंग उनके मस्तिष्क में तब तक घूमता रहा जब तक वे सो नहीं गये।

जीवन हँस पड़ा और कुमारी की ओर उन्मुख हो कहने लगा—“तुम नहीं जानती कुमारी कि मैं अभी थोड़ी देर पहले यही प्रसंग चला रहा था । लेकिन यहाँ तो सूरदास की काली कमरी है जिसको अखिल भाई ओढ़े हैं, जिस पर दूसरा रंग चढ़ ही नहीं सकता है ।”

इस पर केवल कुमारी ही नहीं हँसी, बल्कि सब लोग खिलखिला पड़े ।

थोड़ी देर तक सब में बातें चलती रहीं । भोजन करने का समय हो गया था । शारदा ने कुमारी और जीवन से आग्रह किया; लेकिन जीवन खाकर आया था और यही स्थिति कुमारी के भी साथ थी । दोनों उठकर चल दिये और अखिल कपड़े उतारने लगा ।

×

×

×

बाहर कुमारी की कार खड़ी थी । वह जब उसके निकट पहुँची तो शिष्ट वेश जीवन से कहने लगी—“घर ही चल रहे हैं न जीवन बाबू ! आइये, आप पहुँचा दूँ ।”

जीवन ने पहले थोड़ी दुनियादारी की । फिर कार में जाकर बैठ गया ।

रास्ते में कुमारी ने अपने आप ही कहा—“देखा जीवन बाबू ! अखिल अपने निश्चय पर किस तरह अडिग रहते हैं । आदमी देवता स्वरूप है । लेकिन अफसोस, दुनिया उनकी कदर नहीं जानती ।”

वातचीत का सिलसिला जब स्वयं ही चल पड़ा तो जीवन की बाँछें उठीं । वह मन्द मुस्कराहट के साथ बोला—“कुमारी, हर दृष्टि पारखी होती है । दुनिया में गहराई कम है और उथलापन अधिक ! जितना तुम भूती हो अखिल भाई को और जितना मैं जानता हूँ, क्या हर बसर उनको पहचानता है ?”

कुमारी कवि के प्रति समवेदना से भर आई और एक लम्बी साँस कहने लगी—“जीवन बाबू, महान् आत्माएँ संसार में इसी प्रकार दलित रहती हैं । साहित्य समाज का दर्पण है और संगीत उसका स्वर । लेकिन का कलाकार कितनी विविध परिस्थितियों से गुजर रहा है । इसका ध्यान लोगों को है ! अखिल बाबू जैसा स्वाभिमानी व्यक्ति जो श्रम पर जीवित चाहते हैं, उनके त्याग और सेवा का हम सब यही मूल्य दे रहे हैं कि

नहीं। और कहो, रंजना भाभी अभी मैके में ही हैं? कब बुला रही हो उनको?"

रानी प्रेम से पुलकित हो गद्गद् हो उठी थी। वह स्वर में रस धोलकर बोली—“उनके यहाँ का दस्तूर ऐसा है कि शादी के बाद लड़की की पहली होली मैके में ही होती है। गौना वैशाख में आयेगा।”

इस तरह दोनों में प्रेमपूर्ण वार्ता चल रही थी। समय दोपहर का था। कमरे में सन्नाटा था, रानी सोच रही थी कि भोजन का समय हो गया है, कहीं कुमारी या गंगा अभय को बुलाने न आ पहुँचे। वह उठकर खड़ी हुई और जाने का आयोजन कर अभय के सम्मुख दोनों हाथ बाँधकर बोली—“अच्छा तो अब इजाजत है, मैं जा सकती हूँ।”

उत्तर में अभय तनिक मीठे गुमान में भरकर बोला—“यह मैं कैसे कह दूँ, तुम्हारा मन हो तो जा सकती हो, मैं रोकता नहीं; भला जाने वाले को किसी ने रोक पाया है!”

“यह अच्छी जर्बदस्ती है आपकी!” कहकर रानी पुनः कुर्सी पर आसीन हो गई और उसके मुँह से मधुर हँसी फूट पड़ी।

अभय भी खिलखिला उठा। इतने में दरवाजे की चिक उठी और मुस्कराते हुए जीवन ने कमरे में प्रवेश किया।

रानी के काटो तो बदन में लोहू नहीं। वह घुत बनी बैठी थी और अभय कुर्सी से उठ जीवन को ससम्मान बैठाता हुआ शिष्ट शब्दों में पूछ रहा था—“आइये जीवन बाबू! बहुत खुशनसीब हूँ मैं जो आप मेरे दर पर तशरीफ लाये। कहिये, मजे में तो हैं!”

जीवन का स्वभाव हँसमुख था। वह सहृदयता प्रकट कर नरम स्वर में मधु परोसता हुआ बोला—“हाँ अभय बाबू! सब चैन से कट रही है, याकवत की खैर खुदा जाने!”

अभय हँस पड़ा, लेकिन रानी के होंठ जैसे सिल गये थे।

जीवन ने आते ही रानी और अभय को परस्पर खिलखिलाकर हँसते हुये देखा था। वह समझ गया कि कुछ दाल में काला जरूर है। शायद इस समय विन नाखूनों की बिल्ली रानी का शिकार अभय है। परिस्थिति को भली भाँति पढ़ जीवन ने चतुराई से काम लिया। उसने रानी के साथ इस उत्तर पर

: ७५ :

रानी आज बहुत दिनों बाद अभय से व्यक्तिगत रूप से मिलने उसके दवा-
खाने में आई थी । वह इस बीच जब अखिल आया और फिर रंजना का व्याह
हुआ तो अभय से बोलती-चालती रही । धीरे-धीरे उसने इस बात को तौल
लिया कि अब अभय उस पर नाराज नहीं है । और नाराजी की समस्या भी तो
हल हो चुकी थी । अखिल का मथुरा से वापस आ जाना रानी के लिए एक
महत्वपूर्ण विषय था ।

रानी कुर्सी पर बैठते ही एकान्त पा अभय से कहने लगी—“अभय बाबू !
आप गुस्से में थे इसलिए आपके पास आना तो दूर रहा मैं बात करने में भी
डरती थी कि कहीं आप बिगड़ न पड़ें । आज अपने शब्दों के लिए मैं आपसे
क्षमा चाहती हूँ जिससे आपके मन में क्रोध आया और ईर्ष्या हुई । अब भी मैं
आपके सम्मुख घृणा की पात्री हूँ जो आपके विकार को धो नहीं सकी ।”

अभय ध्यानपूर्वक रानी के चेहरे की ओर देखने लगा । फिर बहुत ही मुलायम
स्वर में बोला—“रानी ! सन्देह ऐसा पदार्थ होता है कि मनुष्य को चौंकाता ही
नहीं, बल्कि उसे मंजिल से दूर ले जाकर छोड़ देता है । पिछली बातों को भूल
जाओ, कहो आज इतने दिन बाद हमारी याद कैसे आ गई ?”

रानी कुछ शरमा गई । वह मन्द-स्मिति बिखेरती हुई बोली—“यह मुझसे
पूछते हैं, आप स्वयं अपने से ही क्यों नहीं दरयापत कर लेते ?”

अभय हँस पड़ा । वह उसी मुद्रा में बोला—“रानी, अब मुझे लज्जित न
करो । यह तो कलियुग है, राम-राज्य में स्वयं वैदेही को ही सन्देह की पात्री बन
वन-वन भटकना पड़ा था । बाद में मर्यादा-पुरुषोत्तम राम पश्चात्ताप से इतने
भरे कि राजसूय-यज्ञ में उन्हें सीता की स्वर्ण-प्रतिमा बनवानी पड़ी ।”

इसके बाद न जाने क्या सोचकर अभय खिलखिलाकर हँस पड़ा और
हँसते-हँसते बोला—“छोड़ो इन सब बातों को रानी ! सबसे पहले यह क्यों नहीं
सोचती हो कि बिगाड़ के बाद जो मिलना होता है वही जिन्दगी का मेल होता
है । प्यार में क्रोध न आए और बाधाएँ न हों तो वह कसौटी पर खरा उतरता

मानता था कि तुम इधर ही आओगी, तुम्हारी ही प्रतीक्षा में खड़ा था । कहो
र जा रही हो क्या ?”

रानी के मस्तिष्क में पहले से ही उलझन समा रही थी कि जीवन कहाँ से
पहुँचा कोठी में । उसने मुझे अभय के साथ हँसते और खिलखिलाते हुये
लिया है । क्या कहता होगा अपने मन में ! जीवन के प्रश्न पर वह धीरे से
बोल उठी—“हाँ, घर ही जा रही हूँ ।”

जीवन मुस्करा उठा । वह बोला—“रानी ! ऐसी क्या जल्दी है, दो मिनट
तुम चली जाना । मैं तो अभय के पास अभी थोड़ी देर और बैठता, लेकिन यह
सोचकर चला आया कि उसके खाने का समय हो गया है । आओ, सामने
रेस्तराँ है, चाय पी जाये ।”

“नहीं, देर हो रही है, मैं चाय नहीं पिऊँगी । अब चलती हूँ, माँ नाराज
होंगी ।” यह कहकर रानी ने जाने का आयोजन कर पैर आगे बढ़ाया ।

जीवन आग्रह भरे स्वर में तनिक हँसकर बोला—“दो मिनट में देर नहीं
हो जायेगी रानी, आओ ।” यह कहकर जीवन आगे बढ़ने लगा और विवश रानी
उसके पीछे-पीछे चल दी । वह सोच रही थी कि चलो किसी सूरत से बला
से । जीवन को नाराज नहीं करना है, वह मेरे अहित का कारण बन
सकता है ।

दोनों रेस्तराँ पहुँच गये । रेस्तराँ नये ढँग से सजा था । पाश्चात्य-प्रणाली
का उस पर पूरा-पूरा प्रभाव था । वॉय सामने आया । उसकी सफेद वर्दी पर
नजर दौड़ाते हुए जीवन ने चाय और नमकीन लाने का आदेश दिया और
नेमिप-मात्र में ही मेज पर चाय उपस्थित हो गई । उसकी चुसकियाँ लेता हुआ
जीवन, हँसी के मिस, रानी से पूछने लगा—“रानी, तुम्हारी दृष्टि में अभय
शायद कैसे आदमी हैं ?”

कैबिन में दोनों अकेले थे । आवरण यद्यपि पूरा नहीं पड़ा था, लेकिन
फिर भी अधखुला था । रेस्तराँ में काफी चहल-पहल थी । संगमरमर की मेजों
पर छुरी काँटे और चम्मच खनक रहे थे और गिलास वज रहे थे । मनमोहक
और आकर्षक फिल्मों तराना ग्रामोफोन पर बज रहा था । हल्का-हल्का मन्द
जोलाहल, हँसी के कहफहे, दोपहर के सुहावने समय को मुखरित कर रहे थे ।

दुनियादारी का प्रदर्शन कर एक चलताऊ साधारण-सा प्रश्न कर दिया—“कहो रानी ! घर में सब लोग अच्छे हैं न ?”

रानी बहुत बड़े भार से मुक्त हो गई । वह मन-ही-मन सन्तोष की साँस ले धीरे-धीरे कहने लगी—“सब आपकी कृपा है !”

रानी इससे अधिक कुछ और नहीं बोलना चाहती थी अतः कुर्सी से उठ, जाने को उद्यत हो, जब वह खड़ी हुई और अभय से कुछ कहना चाहती थी तब तक वहाँ कुमारी आ गई ।

रानी को देख कुमारी उसके पास आई । और आते ही शिकायत के स्वर में बोल उठी—“वाह रानी ! मुझे क्या पता था कि तुम यहाँ बैठी हो, आओ चलें ।”

सहसा कुमारी की दृष्टि जीवन पर पड़ी और वह चुपचाप वहीं पर सिकुड़ कर खड़ी हो गई ।

कुमारी अभय को भोजन कराने के लिए बुलाने आई थी । वह कहना उपयुक्त न समझ चुपचाप वहीं कौच पर बैठ गई और अभय जीवन से पूछने लगा—“कहाँ से आ रहे हो जीवन बाबू ।”

उत्तर में जीवन बोल उठा—“कहीं नहीं, आज इतवार का दिन था, बहुत दिनों से आपसे नहीं मिला था इधर से निकला तो चला आया ।”

सब लोग बैठे थे । बातें चल रही थीं कि सहसा वहाँ रेणुका आ उपस्थित हुई और आते ही कुमारी को सीठी-डॉट बताकर बोली—“क्यों कुमारी ! तुमसे कहा था कि अभय को खाने को बुला लाओ और तुम यहाँ आकर बैठ गई ।”

कुमारी बोलते-बोलते रह गई । तब तक रेणुका रानी और जीवन से बातें करने लगी थी, दस-पाँच मिनट तक जीवन वहाँ ठहरा फिर शिष्टाचार का प्रदर्शन करता हुआ चल दिया । उसके थोड़ी देर बाद रानी भी पथ पर आ गई ।

रानी पहाड़गंज के चौराहे की ओर बढ़ी चली जा रही थी कि कोई तांगा पकड़कर वह जल्दी से हाँज काजी पहुँच जायेगी, वहाँ से घर बिल्कुल निकट है । संयोग से उसे वहाँ जीवन मिल गया और देखते ही बोल उठा—“रानी, मैं

: ७६ :

जीवन जब रानी के पास से वापस लौटा तो वह सोच रहा था कि रानी और अभय दोनों लगते तो एक ही सूत्र के हैं। आकर्षण और स्वाभाविकता का दोनों ओर पूरा-पूरा जोर है, जोड़ी अच्छी रहेगी। मेरी राय से इन दोनों को प्रणय-बन्धन में बँधना ही चाहिए। मैं इस सम्बन्ध में सबसे पहले अभय से बात करूँगा। उसके बाद की राहें बिल्कुल सीधी हैं उनमें भटकना नहीं पड़ेगा। चन्द्रभान बाबू एक वैरिस्टर के घर में अपनी लड़की देना अपना सौभाग्य समझेंगे और दूसरे पक्ष में अभय की माँ रेणुका है बिल्कुल मोम और रेशम से भी मुलायम। बात बन जायेगी और रानी के चरित्र में निखार आजायेगा। मैंने हमेशा रानी के मंगल की कामना की है। क्योंकि कवि-बहन के नाते मैंने उसे अपनी कनिष्ठा ही समझा है। छोटा जब उन्नति करता है तो आत्मीय वर्ग के बड़ों का हृदय हाथ भर का हो जाता है। काश! यदि मैं अपने इस प्रयास में सफल हो सका तो बहुत बड़ा ईश्वरीय वरदान समझूँगा, इसको!

और अपनी आधार-शिला पर दृढ़ जीवन दूसरे ही दिन अभय के पास जा पहुँचा। बातें चलने लगीं। पहले शिष्टाचार का आदान-प्रदान हुआ फिर दुनियादारी आवश्यक समझी गई। और उसके बाद का सिलसिला यह था। जीवन अभय से पूछ रहा था—“क्यों अभय, जिन्दगी में कितनी गहराई है, यह तुम बतला सकते हो?”

जवाब में अभय सीधे स्वभाव बोल उठा—“यह कोई नहीं बता सकता है, जीवन बाबू! हर आदमी का अपना-अपना दृष्टिकोण अलग है और वैसे ही उसके अनुमान और वैसी ही आधार-शिलाएँ। प्रत्येक व्यक्ति अपनी योजना के लिये कायल है। समझ में नहीं आता कि यह प्रश्न आप क्यों कर रहे हैं मुझसे?”

जीवन मुस्करा पड़ा और मीठे लहजे में बोला—“मैं कुछ कहना चाहता हूँ अभय, इसीलिये यह भूमिका बाँध रहा था।”

“अच्छा तो यह बात है!” कहकर अभय हँस पड़ा और बोला—“भूमिका

रानी चुप थी। उसके पास जैसे जीवन की बात का कोई जवाब ही नहीं था।

लम्बी प्रतीक्षा करने के बाद जीवन ने प्रसंग को दूसरा मोड़ देते हुये रानी से प्रश्न किया—“रानी ! कुमारी से सुना है आजकल तुम्हारी खूब पटती है। क्या अब तुम्हें वहाँ रोज-रोज जाने के लिए माँ मना नहीं करतीं ?”

जीवन मुस्करा रहा था और रानी के मुख पर चाय की भाप गरम-गरम लग रही थी। उसका अन्तःकरण कह रहा था कि चोर पकड़ा गया। जीवन मेरे राज को जान गया है इसलिए इससे कुछ भी छिपाना बिल्कुल व्यर्थ होगा। वह मलिन होकर दीन स्वर में बोली—“यह सब आप मुझसे क्यों पूछ रहे हैं, जीवन बाबू ! आदमी की कमजोरियाँ ही उसकी मजबूरियाँ होती हैं। अब मैं आपको क्या बताऊँ ? परोक्ष और अतीत में मैंने आपके प्रति घृणा और ग्लानि का अनुभव किया। लेकिन यह कभी नहीं सोचा कि आपके अन्दर आदमी का हृदय है ! रंजना और निखिल भइया के लिए आपने जो त्याग किया वह सराहनीय है। मैं आपकी इज्जत करती हूँ और आशा करती हूँ कि मेरे सिर पर आपका स्नेह भरा हाथ हमेशा अपनी छाया बनाये रखेगा। वस अब कुछ और न पूछिये जीवन बाबू, मैं बहुत कह चुकी।” कहते-कहते रानी का स्वर आर्द्र हो गया और नेत्रों की कोरें गीली हो आईं।

जीवन कई क्षण तक गम्भीर बना कुछ सोचता रहा। फिर धीरे-धीरे बोला—“ऐसा लगता है रानी कि अभय को भी तुमसे सच्ची प्रीति है। इसकी मुझे आज जाते ही अनुभूति हुई थी।”

रानी ठुड्डी पर हाथ दिये चुपचाप बैठी थी। उसकी दृष्टि मेज पर टिकी थी और चाय ठण्डी हो रही थी।

जीवन को वस्तुस्थिति का बोध हुआ। वह अतीव मृदु स्वर में रानी से बोला—“चाय क्यों ठण्डी कर रही हो रानी ! पियो, मैं तुम्हारी समस्या पर विचार करूँगा और प्रयत्न से पीछे नहीं रहूँगा।”

रानी को जैसे वसुधा का बहुत बड़ा सुख मिल गया। वह उस आत्म-सुख में विभोर हो गई और चाय के घूँट गले से नीचे उतारने लगी।

दो-चार मिनट ये लोग वहाँ और बैठे। फिर अपनी-अपनी मंजिल पर चल पड़े।

जगत् में एक नया संसार बस रहा था । जिसकी साम्राज्ञी थी रानी और सम्राट् था वह !

: ७७ :

जीवन बहुत सुलभा हुआ व्यक्ति था । निर्माण पर उसकी आस्था थी और विध्वंस से विरोध ! जिस प्रकार उसने चन्द्रभान बाबू और गयाप्रसाद के घरों की दूरी को निकट लाकर खड़ा कर दिया था, उसी भाँति अभय के विषय में उसने पहले अभय की राय ली फिर चन्द्रभान और सुभद्रा के सामने अपना सुझाव रखा और तत्पश्चात् माँ रेणुका की स्वीकृति उसके लिए लेना अनिवार्य हो गया ।

जीवन की दीड़-धूप सार्थक हुई । माँ रेणुका को सहमत होते देर नहीं लगी । निखिल का गौना वैशाख में होने को था, अतः चन्द्रभान बाबू ने रानी के व्याह का मुहूर्त जेठ में रखा ।

इस प्रकार जब अभय और रानी का व्याह तय हो गया तो उस बीच जीवन का आवागमन कोठी में अधिक होने लगा ।

होली जल गई थी । रानी और कुमारी की परीक्षाएँ चल रही थीं । और जीवन भी अत्यधिक व्यस्त था अपने कालेज में । लेकिन फिर भी वह कोठी आता था । उसकी बाहर-भीतर सब जगह पहुँच थी । वह कुमारी से सब के सम्मुख निःसंकोच होकर बात करता और कुमारी कुछ-कुछ उससे शर्माती थी, पता नहीं क्यों ?

परीक्षाएँ समाप्त हो गई और कालेज बन्द हो गया । और हो गया रंजना का गौना भी । उसके बाद जब रानी बहू बनकर कोठी में आई तो उसने गति-विधि देखी कुमारी की और लक्ष्य किया जीवन को भी । रानी के मन में

वाँघने की आपको आवश्यकता क्यों पड़ गई, कोई गोपनीय बात है, क्या ?”

“गोपनीय नहीं अभय, बात बिल्कुल खुली है, शायद तुम नहीं जानते होंगे कि रानी से मुझे कितना स्नेह है। कवि की बहन होने के नाते मैं उसे बचपन से स्नेह और दुलार करता आया हूँ। क्या तुम उसका अनुग्रह स्वीकार कर सकोगे ? कल मैंने यहाँ आकर जिस परिस्थिति का अध्ययन किया था उसी के आधार पर पूछ रहा हूँ कि रानी तुम्हारी दृष्टि में कैसी लगती है !”

जीवन की ये बातें सुनकर अभय संकोच से गड़ गया। वह नीची दृष्टि कर धीरे-धीरे बोला—“यह, मुझसे अधिक आप समझते हैं जीवन बाबू, मैं क्या बताऊँ ?”

“तो अभय, तुम्हारा यह जवाब स्वीकृति का सूचक है। वस मैं यही जानना चाहता था।”

जीवन इसके बाद ही फिर कहने लगा—“अब इस सम्बन्ध में मैं तुम्हारी माँ से बात करूँगा और चन्द्रभान बाबू तो अपने ही हैं; वे मेरी बात कभी नहीं टालेंगे।”

अभय की दृष्टि ऊपर नहीं उठ रही थी। मर्यादा-वश संकोच ने उसे जकड़ रखा था। जीवन उससे बैठा बहुत देर तक रानी के विषय में बातें करता रहा; किन्तु उसका होठ पर से होठ नहीं उठा।

जीवन जब चला गया तो अभय सोचने लगा कि जीवन की दृष्टि कितनी पैनी है। कल मुझे और रानी को परस्पर मुक्तावस्था में हँसते-बोलते देखकर वह तत्क्षण ही तथ्य पर पहुँच गया। मैंने भी उससे कोई दुराव नहीं रखा और हर समझदार आदमी यही करता जो मैंने किया है। संस्कार बहुत बलशाली होता है। वह अपना मार्ग अपने आप ही निश्चित कर लेता है। जीवन कल यहाँ आया, यह एक दैवयोग था। रानी का अनुराग सच्चा है, और मेरी भी उस पर लगन है। अब जीवन मध्यस्थ है, बात बनने में देर नहीं लगेगी। मेरा स्वर्णिम-स्वप्न निकट-भविष्य में ही साकार होने वाला है। कोमल-बदना रानी मेरी चिर-संगिनी बनेगी, महान् हर्ष का विषय है यह ! दैव मेरे सर्वथा अनुकूल है, ऐसा प्रतीत होता है।

इस प्रकार अभय उल्लास की लहरियों में बह रहा था। उसके कल्पना

चन्द्रभान बाबू बहुत प्रसन्न थे । घर खूब भरा-पूरा था । रानी का व्याह हो गया था और वहाँ रंजना उनके घर में थी । लड़के-बहुओं और पौत्रों का मुख उनको हमेशा आनन्द में डुबोये रहता और वे मन-ही-मन फूले नहीं समाते थे ।

रानी शादी के बाद जब पीहर आई तो उसने बातों ही बातों में एक दिन अखिल से जीवन और कुमारी के विषय की कुछ बातें कीं । उसकी बातें अखिल को जँच गईं । और इस तरह वह रामानन्द बाबू का मन लेने के लिये उनके घर जा पहुँचा ।

रामानन्द बाबू की स्थिति यह थी कि वे बहुत हैरान थे कि गत वर्ष जीवन का व्याह इसलिए नहीं हो सका; क्योंकि बातचीत रंजना के साथ तय हो चुकी थी और ये सहालगें भी निकली जा रही हैं । केवल आपाढ़ का ही महीना शेष रह गया है । जब अखिल ने उनको अपना प्रस्ताव बतलाया तो वे प्रसन्नता से झल पड़े और बोले—“कुमारी और मेरी वहाँ ! यह क्या कह रहे हो अखिल ! वह रईस बाप की बेटी है, इस छोटे-से घर में उसे अच्छा लगेगा !”

अखिल मुस्करा उठा और बात पर बल देता हुआ बोला—“चाचा जी ! स्कार प्रबल होते हैं, जहाँ शिष्टा होता है, लड़की वहीं जाती है । हम सब लोगों की दृष्टि में कुमारी और जीवन का योग बहुत अच्छा है, केवल आप हाँ न दीजिए ।”

रामानन्द को कुछ भी सोचना और विचारना नहीं पड़ा । सहर्ष उन्होंने अखिल को अपनी स्वीकृति दे दी ।

घर आकर जब अखिल ने रानी, शारदा और रंजना को यह बतलाया तो सब लोगों की भी खुशी की सीमा नहीं रही और उसी समय जब अखिल यह शुभ आचार्य अभय को सुनाने के लिए घर से चला तो सकुचाती हुई शारदा उसके समेत आगई और कहने लगी—“बहुत दिन से कोठी नहीं गई हूँ, माँ से पूछ आज मैं भी चलूँगी ।”

यद्यपि सुभद्रा इस बात से मन-ही-मन बहुत असन्तुष्ट थी कि अखिल ने माँ डेरा घर में फिर डाल रखा था लेकिन दुनियादारी को वह अधिक महत्व नहीं थी इसलिए उसने शारदा को कोठी जाने की अनुमति दे दी ।

पता नहीं जीवन के प्रति इतनी श्रद्धा क्यों उमड़ आई थी कि वह हर समय चाहा करती कि मुझे कोई ऐसा सुअवसर मिले जब मैं जीवन के काम आ सकूँ ! मौका सामने था । उसका हृदय बल्लियों उछल रहा था । आखिर उसने एक दिन अभय से कह ही तो दिया—“जीवन बाबू कितने अच्छे आदमी हैं, हालाँकि अवस्था में कुमारी से वे लगभग दस साल बड़े हैं, लेकिन…… ।”

अभी रानी इतना ही कह पाई थी कि अभय बोल उठा—“लेकिन क्या रानी, तुम कहना क्या चाहती हो ?”

रानी पति को अनुकूल पा शान्त-स्वर में कहने लगी—“कुमारी भावुकता की चेरी है और वैसे ही कला-प्रिय हैं जीवन बाबू ! गंगा-जमुना का यह संगम कितना अच्छा रहेगा ! क्या राय है तुम्हारी ?”

इस पर अभय एकाएक कुछ जवाब नहीं दे पाया । वह कुछ सोचने लगा ।

रानी फिर बोल उठी—“हाँ, सोचते क्या हो । संयोग बहुत अच्छा है । मैं माँ से कहूँगी फिर तुम रामानन्द बाबू से बात कर लेना । वे इन्कार नहीं करेंगे ।”

अभय ने इतनी देर में अतीत और वर्तमान दोनों परिस्थितियों को तौल लिया था । इस समय उसके सम्मुख भविष्य अमर फल बनकर मुस्करा रहा था । शान्ति और सन्तोष से ओत-प्रोत वाणी में वह रानी से बोला—“विचार तो सुन्दर है रानी, माँ से पूछूँगा, देखो वे क्या कहती हैं ?”

दम्पति में उस दिन कुमारी और जीवन का प्रसंग बहुत देर तक चलता रहा । अन्त में दोनों के ही निश्चय अपने में दृढ़ हो गये कि कुमारी के लिए जीवन सर्वथा उपयुक्त है और यह मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहिए ।

×

×

×

रानी के ब्याह में जब अखिल सपरिवार घर में आकर रहा तो ब्याह के बाद चन्द्रभान बाबू ने उसको किराये के घर में नहीं जाने दिया । अब घर में रंजना थी । वह बहन-बहनोई को सिर-आँखों पर लिये रहती और निखिल भी भाई का मुँह देखा करता था । उसने बहुत जोर दिया कि अखिल दूकान पर बैठे । लेकिन अखिल के स्वाभिमान ने किसी भी शर्त पर यह स्वीकार नहीं किया । उसने अपनी वृत्ति नहीं छोड़ी ।

सत्कार करते, और जल्दी उठने न देते ।

ऐसे ही आदर पाता था अखिल, अभय की कोठी में । वहाँ रेगुका उससे प्रवत् स्नेह करती थी और रानी भाई के आने पर बलि-बलि जाती थी । वैसे ही अभय सिर-आँखों पर लेता था अखिल को ।

मोह के बन्धन, शिष्टाचार और शालीनता यदि अखिल के साथ न होते तो वह विराग भी ले सकता था । यों भी घर में रहते हुये वह एक कर्मठ योगी था और था अपने सिद्धान्तों का कट्टर पालक !

इस प्रकार जीवन की घड़ियाँ बीत रही थीं । समय-चक्र अपनी कीली पर पूरी रफ्तार के साथ घूम रहा था । सावन बीत गया था । और भादों के काले बादल आसमान पर दौड़ रहे थे ।

: ७६ :

वर्षा का जल प्राप्त कर धरती नरम हो गई थी, तभी उसकी छाती पर उग आई थी कोमल दूब । लेकिन सुभद्रा का कुलिश-हृदय तनिक भी नहीं पसीजा था अखिल के प्रति । उसके अन्तर्द्वन्द्व जब वाणी में उतर आते तो अखिल मर्महत हो उठता और शारदा समाई के घूँट पीकर रह जाती । किन्तु उसका व्यापार अनवरत रूप से चलता रहता । वह बात-बात पर चौंकती थी और बाल की छाल निकालती थी ।

एक दिन नीचे बैठक में अखिल के मित्रों की मण्डली जुड़ी थी । गत रात उसने एक कविता को कुछ लाइनें लिखी थीं, वही अपने मित्र-समुदाय को सुना रहा था । एक युवक ऐसा था जिसका नाम तो था भूषण, लेकिन सबकी ओर से उसने उपाधि पा रखी थी 'कामरेड' । वह बहुत ही मिलनसार था और था बिल्कुल निःसंकोच । वह बीड़ी पीने का बहुत शौकीन था । घुएँ के छल्ले

अखिल और शारदा दोनों जब कोठी पर पहुँचे तो दिन जा, रहा था रात आ रही थी और आकाश में हँसता हुआ चाँद इठला रहा था ।

: ७८ :

अखिल और शारदा का कोठी जाना सार्थक हुआ । रेणुका को दम्पति सर्वथा अपने अनुकूल पाया । इसी आधार पर योजना ने अपना कलेवर बँटा और एक दिन वह कार्यरूप में परिणत हो गई ।

आपाढ़ के दूसरे पाख में रेणुका ने कुमारी के हाथ पीले कर दिये । रामानन्द कुमारी जैसी सुशील वह पाकर गद्गद हो उठे ।

समय बहुत सुन्दर था । सब परिवारों में सुख और शान्ति बरस रही थी । रंजना ने ससुराल में आकर घर को सोने का महल बना दिया था । यशोवती सुभद्रा की कटुता अब भी विद्यमान थी । लेकिन प्रायः यह होता था कि उसकी बड़बड़ाने की ओर घर के सभी लोग बहुत कम ध्यान देते थे । दोनों भाई-बहन में अच्छी पटती थी । बहन रानी और बहनोई अभय जब साथ-साथ घर में आते तो रंजना और शारदा रानी की बलाएँ लेनीं और निखिल तथा अखिल बहुत बड़े गर्व का अनुभव करते कि उनकी बहन का ब्याह एक बहुत बड़े घर में हुआ है ।

चन्द्रभान को ऐसा लगता था कि उनको बूढ़ापे के सभी सुख मिल रहे हैं । लेकिन सुभद्रा को हमेशा यह बात खटकती रहती थी कि निखिल मर-मिट कर दूकानदारी सम्हालता है और वे (चन्द्रभान) इस उम्र में भी दफ्तर में बैठ कर कलम घिसते हैं । अखिल को क्या चिन्ता ? वह तो सरासर कहता है कि ज्यादा कमाकर क्या होगा ? कमाये या न कमाये उसकी बला से, खाने-पीने का घर में मिलता ही है । रह गई कपड़े-लत्तों की बात, उसके लिए थोड़ा-सा

था रास्ता हुआ, वह बीड़ी पी रहा था और बार-बार चिल्ला उठता था, 'बहुत
 छे, 'बहुत अच्छे' !

सुभद्रा किसी कार्यवश नीचे आई थी । बैठक में महफिल जुड़ी देख वह
 बाजे की ओट में खड़ी हो गई और वहाँ का दृश्य देखने लगी । वहाँ पर उठती
 के तरुण और युवक ही थे अतः निःसंकोच वह चौखट के बीचों-बीच में
 हो गई ।

अखिल की कविता रुक गई और वह अपने स्थान से उठकर खड़ा हो,
 द्रा के पास जाकर बोला—“कुछ काम है माँ !”

सुभद्रा इस पर चिढ़कर बोली—“काम क्या है, शोर-गुल सुना तो इधर
 नी आई, तनिक इतना तो ध्यान रक्खा करो कि ऊपर वहाँ-बेटियाँ रहती हैं ।”

सुभद्रा यह कहकर चल दी और अखिल का सिर लज्जा से नत हो गया ।
 किन करेला नीम पर जा चढ़ा । सुभद्रा जा ही रही थी कि पीछे से कामरेड
 ल उठा—“माँ जी, आप तो व्यर्थ के लिए नाराज होने लगीं, हम सब तो
 आपके ही बाल-गोपाल हैं ।”

सुभद्रा को बहुत बाव आगया । वह घूमकर खड़ी हो गई लेकिन फिर कुछ
 निकर झल्लाती हुई वहाँ से चल दी ।

इतने में कामरेड का स्वर उसके कानों में फिर पड़ा । वह कह रहा था—
 माँ जी, हम लोगों के लिए चाय नहीं भेजेंगी क्या ? अखिल भाई तो अपनी
 बिता में ही मगन हैं ।”

सुभद्रा की क्रोधाग्नि में घी पड़ गया । वह पैर पीटती हुई वापस लौट पड़ी
 और कामरेड के पास आ, उसको फटकारकर बोली—“शर्म नहीं आती तुमको,
 उसे मसखरी करते हो; जैसा मुँह है वैसी बातें करो ! माँग कर खाने वाले
 शर्म होते हैं, बेशर्म !”

अखिल सत्ताटे में आगया और लोग भी सुभद्रा का मुँह देखने लगे । लेकिन
 कामरेड ने तनिक भी घुरा नहीं माना । वह उसी मुद्रा में हँसकर कहने
 लगा—“माँ जी, मैं तो कम्युनिस्ट हूँ और कम्युनिस्ट खाने-पीने वाले मामले
 संकोच नहीं करता; आपको घुरा नहीं मानना चाहिये ।”

सुभद्रा दाँत पीसकर बोली—“तुम कोई भी हो, इससे मुझे मतलब नहीं

पेदा कर लेता है। और भगवान् जाने यह सही है या झूठ, मुझे तो ऐसा ल
है कि अखिल यह सब दिखावा करता है। निखिल उसकी जेब पैसे से
रहता है। और मान लो निखिल का ध्यान चूका तो वाप वह कमी पूरी कर
देता है। मैं तो खुश-नसीब कहूँगी अखिल को ! दूसरे लोग कमाते हैं और वह
मौज करता है।

ऐसे ही सुभद्रा मन-ही-मन कुढ़ी रहती थी शारदा पर, कि आखिर वीसों
नाटक खेलकर और दुनिया को तमाशा दिखाकर इसने घर में आकर पैर टिका
ही लिये। अब क्या है ! पाँचों घी में हैं ? उधर जब सौतेला भाई अखिल को सगे
से बढ़कर मानता है तो क्या रंजना बहन के लिए उदार नहीं होगी ? पूरी
जादूगरनी है रंजना ! देखो तो निखिल को कैसे अपनी ओर मोड़ लिया और
वैसी ही चतुर है यह बड़ी बहू ! इसने ऐसा जाल रचा कि निखिल और रानी
दोनों मेरे मुँह आने लगे। क्या यह सब ऐसे ही चलता रहेगा ? पहले अखिल
दुकान में बैठता था। लेकिन अब तो घर की बैठक में ही उसकी मित्र-मण्डली
जुड़ी रहती है। चाय घर से बनकर जाती है। व्यर्थ की हा-हा ही-ही हुआ
करती है। काम वह क्या करता है खाक ! कभी मेरे हाथ पर लाकर कुछ
रखा होता तो मैं भी जानती कि हाँ कुछ कमाता है !

सुभद्रा की विचार-धारा के बिल्कुल विपरीत थी रंजना। वह अपने में
पूर्णतया सन्तुष्ट थी और अहर्निश ईश्वर से विनय करती रहती थी—काश !
भगवान् घर की गाड़ी ऐसी ही चलती रहे, इसमें मुझे महान सुख है !

शारदा की अस्थिरता अब स्थिर हो गई थी कि बहुत से उतार-चढ़ाव आने
के बाद नाव अब किनारे पर लगी है, अब कोई भ्रम न आये, विघ्न-बाधाएँ
न खड़ी हों तो बहुत अच्छा हो।

शिल्पी अपने में तनिक भी सन्तुष्ट नहीं था। घर को वह वन्दीगृह सम-
झता था और सुभद्रा को जेलर। उसके अनुमान में यह बहुत बड़ा एहसान था
सुभद्रा का जो वह उसे रोटियाँ दे रही थी। लेकिन पत्नी शारदा सन्तुष्ट थी;
निखिल और चन्द्रभानू बाबू भी बहुत लगाव रखते थे उससे। इससे वह घर
की ओर से विमुख नहीं होना चाहता था। जब तद्वियत अधिक ऊब जाती तो
जीवन के घर चला जाता। वहाँ कुमारी और जीवन उसको हाथों-हाथ लेते,

चुप

ये

आज

में

"

कह

ये ।"

देये

र भड़

— "नम

झाती

वन्द

लग

गा । व

रता थ

वेइज्जत

ल हो

मेरा दि

माँ का

।

; क्यों

ख, १८

जरा तमीज़ से बात किया करो ।”

अखिल अब बीच में आगया और कामरेड से कहने लगा—“चुप कामरेड, क्या बक-बक लगा रखी है ?”

सुभद्रा अब अखिल पर बरस पड़ी । उसको आड़े हाथों लेते हुये लगी—“यह सब क्या है अखिल, क्या ऐसे ही लोग तुम्हारे दोस्त हैं ? आज उनसे (चन्द्रभान) कहूंगी और कल से यह भाँड़ों की बाजार घर में लगने पायेगी । इस कामरेड से कह दो कि अभी चला जाय, वरना...।”

सुभद्रा क्रोध से होंठ चवाकर रह गई और अखिल कामरेड से कह था—“क्षमा करना कामरेड, माँ गुस्से में हैं, इस समय आप चले जाइये ।”

अखिल के मुँह से यह सुनते ही सभी लोग उठ-उठकर चल दिये । सबसे पीछे उठा कामरेड । चलते-चलते वह सुभद्रा की क्रोधाग्नि और भड़क गया । वह पास आकर दोनों हाथ बाँध हँसी की मुद्रा में बोल उठा—“नमस्ते माँ जी !”

अब बैठक में सिर झुकाये अखिल खड़ा था । और सुभद्रा बड़बड़ाती वहाँ से जा रही थी ।

X

X

X

सुभद्रा के जाने के बाद अखिल ने बैठक के दोनों ओर के किवाड़ बन्द कर लिए । फिर चुपचाप चाँदनी पर आकर एक ओर पड़ रहा । उसे ऐसा लग रहा था कि उसका मस्तिष्क धूम रही है और वह शीघ्र ही पागल हो जायेगा । वह विचार करने लगा कि आखिर वही बात हुई जिसके लिये मैं सोचा करता था डरा करता था और घर में सबसे कहा करता था । आदमी अपनी बेइज्जत वर्दाश्त कर सकता है; लेकिन उसके पीछे जब और चार लोगों को जलील होकर पड़े तब उसके लिये हूबकर मर जाने वाली स्थिति हो जाती है । आज मेरा सिर झुक गया । क्या कहते होंगे वे लोग जो उस समय बैठक में बैठे थे । माँ का स्वभाव जब अब तक नहीं बदला तो प्रभु क्या बदलेगा । मैं परेशान हूँ, मैं से कई बार अलग चलकर रहने के लिए कहा तो वह मानती ही नहीं । कल, बैठक में बैठता बन्द कर दूँ, बाहर कोई किराने की जगह ढूँढ़ लूँ; क्योंकि जैसा मैं कहा करता था कि चार दिन की चाँदनी और फिर अंधेरा पाख,...

